Nagari Pracharini Granthamala Series No. 21

उसमान कवि कृत

चित्रावली ।

जगन्मोहन वर्म्मा सम्पादित

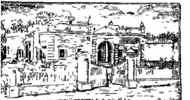

और

काशी नागरीप्रचारिणीसभा द्वारा प्रकाशित ।

मूल्य २)

टाइटिल भारतजीवन प्रेस, बनारस में छपा ।

Pr ted by Apurva Kr shna Bo
t the Indı n Press All h bad

All ıJ t I

भूमिका

काव्यशास्त्रविनोदेन कालो गच्छति धीमताम्।
व्यसनेन च मूर्खाणां निद्रया कलहेन वा॥

काव्य साहित्य का एक प्रधान अंग है। हिन्दी भाषा का साहित्य महाकवि चन्दबरदाई के 'पृथ्वीराज रासो'* से प्रारंभ होता है। इसके पूर्व इसमें ग्रंथ थे या नहीं इसके विषय में हम कोई निश्चित सम्मति नहीं दे सकते। रासो से पुराने भाषा के किसी ग्रन्थ का आजतक हमको पता नहीं चला है आगे चलेगा या नहीं हम यह भी कहने में असमर्थ है। रासो के भिन्न भिन्न और संस्कृत के छन्दों से विलक्षण छन्दों को देखते इतना कहने का साहस होता है कि संभव है इससे पहिले भी भाषा के ग्रन्थ रहे हों। पर जब तक कोई और ग्रन्थ इससे पुराना न मिल जाय हम इसे भाषा का आदि ग्रंथ और इसके रचयिता चन्दबरदाई को हिन्दी भाषा का आदिकवि कहने के लिये वाध्य हैं।

चन्दबरदाई के रासो में दोहे और चौपाई भी है। चौपाई को उसमें विग्रस्खरी' कहा है। उनके उदाहरण ये हैं—

बरनि लम्ब साहाब बर, गप पास सुरतान।
सजी सेन सामतपति आयो राजन थान॥

---

* सुनते हैं कि खुमानरासो ९ वीं शताब्दी का बना हुआ है पर हमने इसे देखा नहीं है अतः इसके विषय में हम कुछ नहीं कह सकते। सभा इसकी प्रतिलिपि कराने के लिये उद्योग कर रही है यदि मिला तो यह छापकर सर्वसाधारण के सामने उपस्थित किया जायगा और तब इसकी भाषा आदि के विषय में कोई निश्चित सम्मति दी जा सकेगी।

सनि बरस्ति साहाब तास चर, बोलि मार उमराव महाभर।
दिय निशान धाव नौसान, चल्यो सेन सज्जे सज्जान॥
बाजिन बार अनेक सुवज्जे घर पडिहार सु गौमह गज्जे।
उग्यो सूर चल्यो सुरतान बज्जि निहाव नाल गिरि वान॥

इससे अनुमान हाता है कि दोहा चौपाई की सृष्टि महा कवि चन्द के समय मे या उससे पहिले हा चुकी थी। दोहा ग्रार चौपाई का रासो क अन्य प्र थ मे भी यथास्थान इस्तेमाल लिखने की प्रथा देखी जाती है पर पन्द्रहवा शताब्दी क पूर्व का एक भी ग्रन्थ देसा नहा मिलता जो विशुद्ध दोहे ग्रार चौपाई मे हा। इससे अनुमान हाता है दोहा ग्रैार चौपाई का छन्द पश्चिमीय कविया ग्रार पाच्छमा हिन्दी के लिये उपयुक्त न था।

दोहा ग्रौर चौपाई क ग्रन्थ प्राय मुसल्मान कविया के रचे हुए है ग्रौर प्राय पूर्वी हिन्दी वा ग्रवधी भाषा मे है। पूर्वी भाषा मे कविता करने की प्रथा भी मुसल्माना ही की चलाई हुई है। सब से पहिले मीर खुसरा ने तेरहवा शताब्दी मे कुछ दोहे ग्रौर पहेलिया पूर्वी भाषा में रचा। उनके दोहे के उदाहरण ये है।

गोरी सोवै सेज पर मुख पर डाले केस।
चल खुसरो घर ग्रापने, सांझ भई चहुँ देस॥
मोर परोसिन रूठें धान, घोसरि क सबद परा मोर कान।
ऊ मोहि पैसन छरी, मोरे हाथन छाला परी॥
दही परोसन गैहों मोर, अँगुरिन गडी दही के कोर।
ए सखी मै येती मरी, दिन दस रही पीर से परी॥

ठीक है कि खुसरो के ग्रन्थ सिवाय छुटकुछ दोहे आदि ग्रौर खालिकबारी के नहीं मिलते, नहा तो खुसरा पूर्वी भाषा क महाकवि कहे जाने योग्य थे।

दोहा ग्रार चौपाई के छन्द पूर्वी वा ग्रवधी भाषा के लिये इतने उपयुक्त प्रतीत हुए कि पीछे कविया ने इन्हा छन्दो का

कविता मे प्रधानता दी। कथा के अर्थो के लिये दोहे और चौपाई इतने उपयुक्त हुए कि प्रायः कथाग्रन्थ पूर्वी भाषा और दोहे चौपाइयो मे ही लिखे गए। इस प्रकार के ग्रन्थो को लिखने मे मुसल्मान कवि अग्रसर हुए और उन्होने कितने ही ग्रन्थ लिखे। सब से पुराना ग्रन्थ जो इस कोटि का मिला है और छप कर पाठको तक पहुँच चुका है वह पद्मावति है। इसे मलिक मुहम्मद जायसी ने सन् ९४७ हिजरी मे अर्थात् १५४० ईस्वी मे लिखा है। इसी आधार पर कितने लोग जायसी को इस प्रकार के ग्रन्थो का आदिकवि मानते है। पर जायसी ने पद्मावति मे एक जगह अपने पूर्व के रचे हुए कितने ही ग्रन्थो का उल्लेख किया है। आप लिखते है—

विक्रम धँसा प्रेम के बारा, सपनावति कँह गयेउ पतारा।
सिरीभोज खडरावति लागा गगनपूर होइ गा बैरागी॥
राजकुँअर कचनपुर गैऊ मिरगावति कँह जोगी भैऊ।
साधा कुँअर मनोहर जागू मधुमालति कँह कीन्ह वियोगू॥

इससे अनुमान होता है कि जायसी के पहिले भी कवि लोग सपनावति खडरावति मिरगावति मधुमालति आदि ग्रन्थ लिख चुके थे। इनमे मिरगावति का पता तो सभा का सन् १९०० मे लग चुका है। इसका विवरण भी सभा की खोज की रिपोर्ट पृष्ठ १७ १८ मे लिखा है। उसके देखने से मालूम होता है कि मिरगावति का कुतुबन ने सन् ९०९ हिजरी मे अर्थात् सन् १५०२ ईस्वी मे लिखा था। शेष अन्य ग्रन्थो का पता आज तक सभा को नही लगा।

मधुमालति की एक अपूर्ण प्रति मुझे इस वर्ष काशी के गुदडी बाजार मे मिली। यह ग्रन्थ ३७ पन्ने से १५३ पन्ने तक है। पुस्तक उर्दू लिपि मे अत्यंत शुद्ध और सुन्दर अक्षरो मे लिखी हुई है। भाषा मधुर और पाँच पाँच चौपाई के बाद एक एक दोहा है। आदि और अंत के पृष्ठ न होने से ग्रन्थकर्ता के ठीक नाम (सिवाय मझन के जो उसका

उपनाम है) और उसके निर्माण काल आदि का पता नहीं चलता। ग्रंथ के आदि के २९ पन्नों तक बायें पृष्ठ पर के किनारे पर दो तीन पंक्ति में फारसी भाषा में कुछ याददाश्त लिखे हैं जिनके अंत में ११ रबिउस्सानी सन् १०८९ हिजरी की मिती है। याददाश्त में उसी समय की घटना का वर्णन है। इससे अनुमान होता है कि यह प्रति उस समय के पहिले की लिखी हुई है। भाषा का उदाहरण हम कुछ नीचे दिये देते हैं—

मधुमालति जो सोवत जागी बिरह अगिनि नख सिख तन लागी।
ऊभ साँस हिय गह गह आव लज्जा तजि मुख रुधिर बहाव॥
नैनन भरनधार जनु छूटी सयन पूर जनु बारबहूटी।
जबही दसन उघारत खोला दामिनि चमकि चमकि जनु डोला॥
मुकुलित केस रैनि अँधियारी सहज भाउ भादों झनकारी।
  रुदन करति मधुमालती बिरह बिथा तन साल।
  लोगहि अचज सदा बरखा एक अबहु दुइ बरखा काल॥

जिस प्रकार मधुमालती में पाँच पाँच चौपाई के बाद एक एक दोहे हैं इसी प्रकार कुतुबन की मिरगावति में भी पाँच पाँच चौपाई के बाद एक एक दोहे हैं। इससे अनुमान होता है कि जायसी के पूर्व ग्रंथों में पाँच पाँच चौपाई के बाद एक एक दोहे लिखने की प्रथा थी। सात सात चौपाई के बाद एक एक दोहे लिखने की प्रथा जायसी ने चलाई जिसका उनके पीछे के कवियों ने अनुसरण किया। केवल तुलसीदासजी ने अपनी रामायण में आठ आठ चौपाई के बाद दोहे या छन्द आदि लिखने का क्रम रक्खा है। इसका कारण यह मालूम होता है कि मुसलमान कवियों ने अज्ञानवश चौपाई के दो दो चरण को मान कर अर्थात् आधी चौपाई को ही पूरी चौपाई मान पाँच पाँच या सात सात चौपाई के बाद वास्तव में साढ़े तीन और ढाई चौपाई के बाद एक एक दोहा लिखा था। तुलसीदासजी संस्कृत के विद्वान् थे उन्होंने

देखा कि यह प्रथा ठीक नहीं है इस लिये उन्होने अपनी रामायण में आठ आठ चौपाई अर्थात् वास्तव में चार चार चौपाई के बाद दोहा वा छन्द आदि लिखा। अब मधुमालति, कुतबन की मिरगावति के नियम पर उसमें पाँच पाँच चौपाई बाद एक एक दोहा होने, पद्मावति में उसका नाम आने और भाषा के विचार से पद्मावति से पुरानी है। इसकी भाषा में शुद्ध संस्कृत शब्द की कमी और ठेठ हिन्दी के शब्दों की अधिकता से तथा उपनाम से भी यह अनुमान होता है कि यह किसी मुसल्मान कवि की बनाई हुई है।

मिरगावति और मधुमालति के मिलने से यह आशा होती है कि कभी सपनावति और खंडरावति भी मिल जायँगी। अत मलिक मुहम्मद जायसी के हिन्दी भाषा वा अवधी भाष की कविता और दोह चौपाई में आख्यायिका वा कथा ग्रंथो का आविष्कर्ता कहने वालों का मत ठीक नहीं मालूम पड़ता। पर इस में कुछ सन्देह नहीं कि इस प्रकार के कथाग्रन्थों के लिखने की प्रथा मुसल्मान कवियों ही की चलाई हुई है और कथा ग्रंथ रामायणादि दो एक को छोड़ प्राय सब के सब मुसल्मान कवियो ही के लिखे हुए है।

अवधी भाषा में कविता तेरहवी शताब्दी में अमीर खुसरो ने प्रारंभ की और तब से मुसल्मान कवि अठारहवी शताब्दी तक इस भाषा में कविता करते रहे। उर्दू वा फ़ारसी मिली हुई भाषा का उस समय नाम वो निशान न था। उस समय कविता दो भाषाओं में होती थी एक अवधी भाषा में दूसरे ब्रज भाषा में। ब्रजभाषा की कविता काल के विचार से अवधी भाषा की कविता से पीछे प्रारम्भ हुई और जैसे दोहा और चौपाई के लिये अवधी भाषा उपयोगी हुई उसी प्रकार कवित्त आदि के लिये ब्रजभाषा उपयुक्त प्रतीत हुई। इस भाषा में सूर और विहारी आदि की कविता अच्छी है।

यद्यपि ब्रज भाषा के कवियों ने दोहा और चौपाइयाँ रचने की चेष्टा की और उनमें अच्छे अच्छे भाव भरे पर ब्रजभाषा के दोहे और चौपाइयों

में वह लालित्य और माधुर्य न आसका जो अवधी दोहा और चौपाइयों में था। इसी लिये भाषा के रस के ज्ञाता गोसाँई तुलसीदास ने अपने रामायण सतसई बरवे आदि को अवधी में और विनयपत्रिका कवितावली आदि को ब्रजभाषा में लिख कर यह प्रमाणित कर दिया कि किस भाषा के लिये कौन कौन भाषा और छन्द उपयुक्त है।

हम यहाँ कुछ थोड़े से दोनों भाषाओं के दोहे और चौपाइयाँ स्थालीपुलाक न्याय से नीचे उद्धृत करते हैं जिससे इस विचार का स्पष्ट पता चल जायगा कि ब्रजभाषा के कवियों को दोहे और चौपाइयों के रचने में कहाँ तक सफलता हुई।

राजा सो अर्जुन सिर नाई कहा सुनो विनती महराई।
बहु दिन भे हरि सुधि नहिं पाई, आज्ञा होइ तो देखा आई॥
यह कहि पारथ हरिपुर गये, सुन्यो सकल यादव क्षय भये।
अर्जुन सुनत नयन जलधार, परयो धरणि पर खाइ पछार॥
तब दारुक संदेस सुनायो, कह्यो जो हरिजू गीता गायो।
सो सुरूप मम हिर्दय आन, रहिये सदा करत मम ध्यान॥
तब अर्जुन मन धीरज धारि, चल्यो संग लै जे नर नारि।
तहँ भिल्लन सो भई लराई, लूटे बिन सब स्याम सहाई॥
अर्जुन बहुत दुखित तब भये, इहाँ अपसगुन होन दिन नए।
रोवें वृषभ तुरग अरु नाग स्याल दिवस निशि बोलें काग॥
कपै भुव वर्षा नहि होई भए सोच चित यह नृप जाई।
इहि अंतर अर्जुन फिरि आयो, राजा के चरनन सिर नायो॥
राजा ताको कंठ लगाई, कह्यो कुशल है यादव राई।
बल वसुदेव कुशल सब लोइ, अर्जुन यह सुनि दीने रोइ॥
राजा कहै कहा भयो ताहि, तू क्यों कहि न सुनावै मोहि।
काहू असत्कार तोहि कियो, के कहि दान न द्विज को दियो॥
कै शरणागत को नहि राख्यो, के तुमसों काहू कटु भाख्यो।

कै हरिजू भया अन्तर्धान मोसो कहि तू प्रगट बखान ॥
तब अर्जुन नैनन जल ढारि राजा सो किय बचन उचारि ।
सूरज प्रभु बैकुंठ सिधारे तहि बिनु का मम काज सवारे ॥

ये चौपाइयां सूरदासजी के प्रसिद्ध ग्रन्थ सूरसागर का हैं। इनकी भाषा और कविता के विषय में मुझे विशेष कहने की आवश्यकता नहीं। पर यदि आप इन चौपाइयों का जायसी आदि मुसलमान कवियों की कविता और तुलसीदास जी के रामायण की चौपाइयों से मिलाइये तो आपको मालूम होगा कि सूर जैसे महाकवि को ब्रजभाषा में चौपाई रचने और उसमें पदलालित्य लाने में कहाँ तक सफलता हुई है। फिर जब सूर ऐसे महाकवि का ब्रजभाषा की चौपाई रचने में असफलता हुई तो अन्य कवियों की तो कथा ही क्या है।

ब्रजभाषा में दोहा रचने में बिहारी सिद्धहस्त थे और उनके दोहा में बड़े गूढ़ भाव पाए जाते हैं जिसके बारे में लालव्यों के दोहरे अरु नावक के तीर की जनश्रुति प्रख्यात है। पर पदलालित्य में उनके दोहे भी पूर्वी भाषा के दोहों की कभी नहीं पहुँच सकते। हम यहाँ उदाहरण के लिये दो एक दोहे बिहारी के उदाहरण रूप पूर्वी भाषा के दोहों के साथ साथ उद्धृत करते हैं और इसका निर्णय पाठकों पर छोड़ते हैं।

सहज सचिक्कन स्याम रुचि सुचि सुगन्ध सुकुमार।
गनत न मन पथ अपथ लखि बिथुरे सथुरे बार ॥
छुटे छुटावे जगत ते सटकारे सुकुमार।
मन बाँधे बैनी बँधे नील छबीले बार ॥
कुटिल अलक छुटि परत मुख बढ़िगौ इतो उदोत।
बक बँकारी देत ज्यों दाम रुपैया होत ॥

(बिहारी)

सिरजी तब विधि स्यामता जब जग सिरजे लीन्ह ।
ते कच सिरजे सार ल, सप बांटि क दान्ह ॥

(मान)

छिटकी चिहुर सुहागिन अगन भया अँधकाल ।
जनु विरहा जन जिय बध कारन मनम थ रापा जाल ।
चिहुर बास मधुमालति जब से बही बतास ।
तेहि दिन सा निसि वासर सनत भँवनि उदास ॥
तर मयक ऊपर निसि पाती बनी श्राह कस रीति ।
जानहु ससि श्रौ निसि स्यों भई सुरति विपरीति ॥

(मझन)

नेकु हँसाेही बान तजि लख्यो परन मुख नीठि ।
चाका चमकनि चौधमें, परति चौंध सी दीठि ॥

(विहारी)

एक दिन विहँसी रहसि के जाेति गई जग छाइ ।
अबहूँ सौंरत वह चमक चाेधि चाधि जग जाइ ॥

(मान)

नासा मोरि नचाय दृग करी कका की साह ।
काटे लो कसकति हिये गडी कटीली भाेह ॥

(विहारी)

जीति तिलोक निवासा भाेह रहा न जगत जुझार ।
देखत जाहि हिये सर निभरी तेहि का जीते पार ॥

(मझन)

अहिपुर नरपुर जीति कै सुरपुर जीतेउ जाइ ।
अब दहुँ कछू न जानिय का कह धर चढाइ ॥

(मान)

उर्दू भाषा वा फारसी मिली हुई भाषा में कविता की नाव सन् १७०९ ईस्वी मे शाहआलम बादशाह ने डाली आर इसी ने अपना उपनाम आफताब रख कर चार दीवान लिख। यद्यपि काई काइ

वली' को जो सत्रहवी शताब्दी में हुए हैं उर्दू कविता का आदि आचार्य मानते हैं पर यह उनका भ्रम है। वली की कविता में फारसी शब्द है तो जरूर पर उसमें फारसी और अरबी शब्दों की उतनी भरमार और हिन्दी का बहिष्कार नहीं है कि यह हिन्दी से पृथक भाषा की कहा जा सके। उदाहरण के लिये वली के इस पद को देखिये।

सजन टुक मुख सेती खोलो नकाब आहिस्ता आहिस्ता।
कि ज्यों गुल से निकलता है गुलाब आहिस्ता आहिस्ता॥

इस पद भर में सिवाय नकाब और 'गुल के तीसरा कोई शब्द ऐसा नहीं जिसके समझने में किसी अपपढ हिन्दुस्तानी को कुछ कठिनता हो जिसमें 'गुल' को तो बहुतेरे लोग समझते होंगे। अस्तु

इन मुसलमान कवियों ने अपनी कविता विशुद्ध हिन्दी भाषा में की है जिसे साधारण अनपढ हिन्दुस्तानी भी समझ सकता है। सीधे सादे रोजमर्रा की बोल चाल में कविता करना और उसमें भाव लाना साधारण काम नहीं है। पर पद्मावति मिरगावति मधुमालति माधवा नल कामकदला इन्द्रावति आदि ग्रंथों में से किसी का हाथ में ले लीजिये तो आप को मालूम होगा कि इन मुसलमान कवियों ने कैसी योग्यता से अपनी कविता को निबाहा है।

इन्हीं मुसलमान कवियों के ग्रंथों में एक चित्रावली भी है जिस के सम्पादन का भार सभा ने मुझे सौंपा था। यह ग्रंथ उसमान कवि का रचा हुआ है जिसने अपना उपनाम मान लिखा है। उसमान गाजीपुर का रहनेवाला था। उसके पांच भाई थे और उसके बाप का नाम शेख हुसेन था। वह जहांगीर के समय में था और उसने यह ग्रंथ सन् १०२२ हिजरी अर्थात् सन् १६१३ ईस्वी में रचा। ग्रंथ का पता सभा को सन् १९०४ में मिला। सभा की ओर से उस समय बाबू श्यामसुंदर दास जी खोज का काम करते थे। उन्हों ने पहिले पहिल इसकी प्रति महाराज साहब बनारस के पुस्तकालय में मिली।

प्रति कथी लिपि मे सम्बत् १८०२ की लिखी हुई है जिसके अन्त मे नि लिखित वाक्य है—

इति श्री चित्रावली कथा सपुरन जो देखा सो लिखा पढि जन सो विनती हमारी भुला आखर लीजिया सभारी। पोथी हजार अजबसिंह जी ने लिखाया साकिन चिनारगढ दूध बहलिया दसखत फकीर चंद के हाथ का वेतन कडेमानिकपुर काम श्रीवास्तव कायथ दूसर ॥ १ ॥

सवत् १८०२ मिती सावन सुदी १५ रोज सोमवार को पोथी तयार हुआ पोथी चित्रावली लिखा या हजारी अजबसिंह जी ने खोम खास बहलिया—वेतन चिनारगढ पातसा महमदसाह सन् २८ अजीमाबाद मो पोथी लिखाया अजीमाबाद के सूबा नवाब जनदी अहमदखाजी के अमल मो लिखा गया दसखत फकीरचंद कायथ के हाथ का वेतन कडेमानिकपुर के बासिंद ॥१॥ पोथी मो पसे लगे रुपया एक सौ एक १०१) सिक्का मोसावर मो लिखाई मो कागज रासनाई मो जिल्दसाज ॥ १ ॥

इस ग्रन्थ की कथा का साराश भी उस समय सभा की आज्ञा से उक्त बाबू साहब ने लिखा था जो सन १९०४ की पुस्तको की खोज की रिपोट के पृष्ठ ३०–३२ मे छपा है। आप लिखते है—

'इस में नैपाल' के राजा धरनीधर के पुत्र सुजान और रूपनगर के राजा चित्रसेन की कन्या चित्रावली के असीम प्रेम की कहानी है आ इस प्रकार है—राजा धरनीधर पँवार कुल का क्षत्रा था। इसके सन्तान न था इस ग्लानि से उसने राज छोड कर तप करने का मन किया। फिर मंत्रियो के उपदेश से घरही शिवाराधन कर क्षत्र (सत्र) चलाना आरभ किया। तब शिव पार्वती ने परीक्षार्थ आकर इससे इसका सिर मांगा। जब यह दृढ होकर सिर देने को प्रस्तुत हुआ तब उन्होने प्रसन्न हो वर दिया कि तुझे एक अपूर्व पुत्र होगा जो कुछ दिन जोग साधेगा

और किसी स्त्री से प्रेम भी करेगा। इस आशीर्वाद से पुत्र हुआ। ज्योतिषियों ने कुण्डली बनाई और सुजान उसका नाम रक्खा। यह अति प्रतापी और बुद्धि विद्या निधान हुआ। एक दिन जब यह शिकार खेलने गया तो वहां मार्ग भूल गया और एक पर्वत की गुफा में जा सोया। यह स्थान किसी देव का था। उसने इसे देख रूपा कर इसकी रक्षा करनी स्वीकार की। इसी अवसर में उसका एक मित्र आया और उसने रूपनगर में चित्रावली की वर्षगांठ का उत्सव वह इसने भी देखने के लिये कहा। उसने उससे उस कुमार की रक्षा करने की प्रतिज्ञा कही। तब वह बोला कि इसे भी उठा ले चलें फिर आने में तब ले आवेंगे। यह सलाह कर ये इसे ले उड़े और और चित्रावली की चित्रसारी में जाकर सुला दिया और आप दोनों उत्सव देखने चले गए। अब रात में कुमार की आँख खुली तो वह आश्चर्ययुक्त हो चित्रसारी देखने लगा। वहां उस कुमारी का भी एक चित्र था, उसे देख वह आसक्त हो गया और फिर रगादि रक्खा पाकर अपना भी एक चित्र बना उसी के पास रख सो गया। सवेरे देव उसे उठा कर वहां ले आए। जब वह जागा तो उसने स्वप्न का भ्रम किया परन्तु अपने वस्त्रों में रंग लगा पा कर सब मान उसके प्रेम में विह्वल हो चिन्तायुक्त बैठ रहा। सेवक लोग ढूंढते ढूंढते वहां आ पहुँचे और उसे राज में ले गए परन्तु वह प्रेम में बेसुध रहा। अन्त में इसके एक सहपाठी सुबुद्धि नाम ब्राह्मण ने युक्ति से इसका हाल पूछा और ये दोनो परामर्श कर फिर उसी मढ़ी पर जा कर रहे। वहां उन्होंने अन्नसत्र जारी कर दिया। उधर इसका चित्र देख कुमारी भी आसक्त हो गई और उसने अपने नपुंसक भृत्यों को जोगी के वेष में उसे ढूंढने को भेजा। उन में से एक यहां भी आन पहुँचा। इस बीच में एक कुटीचर ने कुमारी की मा हीरा से चुगली करी जिससे उसने उस चित्र को धो डाला। इसी अपराध पर उसका सिर मुंडा कर

कुमारी ने उसे निकाल दिया था। अब यह जोगी जब कुँवर से मिला और परस्पर बातों से दोनों का पता लगा तो कुमार उसके साथ रूपनगर पहुँचा और योगी के वेष में इस चित्रावली का भेद इसके शिव मंदिर में परस्पर दर्शनलाभ हुआ। फिर इसी अवसर में उसी कुटीचर ने उसे अपना शत्रु मान कर अंधा कर दिया और बहका कर एक पर्वत की गुफा में डाल दिया। वहां एक अजगर उसे लील गया परन्तु विरहाग्नि की ज्वाला से घबरा कर उसने उसे उगल दिया। यह घटना एक बनमानुस देखता था उसने उसे एक अंजन दिया जिससे वह फिर देखने लगा। फिर बन में घूमते हुए एक हाथी ने उसे पकड़ा और उस हाथी का एक सिंह (मत्स्य में पक्षिराज) ले उड़ा। हाथी ने अपने प्राणसंकट से घबरा कर इसे छोड़ दिया। वह एक समुद्र के तट पर जा गिरा। फिर वह घूमता हुआ सागरगढ़ नगर में आ पहुँचा। वहाँ के राजा सागर की बेटी कौलावती की फुलवारी में विश्राम कर रहा था कि उस अवसर पर सखियों के साथ वह आई और इस पर मोहित हो गई। अन्त जोगी जेवाने के बहाने से इसे भी बुलवा के भोजन की वस्तु में अपना हार छिपा इसके पास में डाल चोरी में फँसा इसे कैद कर लिया। फिर एक राजा (सोहिल) कौलावती का रूप सुन इसे जीत कर लेजाने को चढ़ आया पर सुजान ने उसे हटा दिया (मारा) और कौलावती से यावत् चित्रावली मिलन की प्रतिज्ञा करा विवाह किया। इधर चित्रावली ने फिर उसी जोगी का भेजा जो पूर्व गया था। कुँवर कौलावती को ले गिरनार यात्रा को गया था वहाँ योगी ने उसे पाया और उसका समाचार ले चित्रावली के पास गया। चित्रावली का पत्र ले वह सागरगढ़ आया और योगी बन घुई लगाई। कुँवर योगी की सिद्धि को सुन उसके पास आया और उसने उसे पत्र दिया। फिर उसे रूपनगर ले गया और सामा पर बैठा कुमारी से कहने गया।

इसी अवसर में राजा का एक कथक ने जा सागरगढ़ का निवासी था कुछ लाभ की आशा से सोहिलराजा के युद्ध का गान सुनाया जिसे सुन राजा की कन्या के विवाह की चिन्ता हुई। राजा ने चार चितेरे राजकुमारों के चित्र लाने का भेजे। रानी चित्रावली के पास गई। उसे उदास देख हाल पूछा पर उसने बहाना किया परन्तु किसी चेरी ने द्वेष से रानी से दूत भेजने का समाचार कह दिया। उसी समय राजकुमार का भेजा वह दूत खबर देने को आ रहा था। रानी ने उसे मार्ग ही में पकड़वा कर कैद करा दिया। इस विलम्ब होने के कारण चित्रावली का नाम ले कुमार पागल की नाई दौड़ने लगा। राजा तक हाल पहुँचा। राजा ने अपयश के भय से गुप्त भाव से उसे मारने को हाथी छोड़वा दिया। कुँवर ने उसे भी पराक्रम कर मार डाला। तब राजा इसे मारने को चढ़ा। उसी अवसर पर एक चितेरा सागरगढ़ से कुँवर का चित्र लेकर आ पहुँचा और सोहिल के मारने का समाचार कह कर चित्र दिखाया, तो वह इसी कुमार का ठहरा। इस पर राजा कुमार को ले गया और उससे चित्रावली का ब्याह किया। कुछ दिन पीछे कौलावती ने विरह से सन्तप्त हो हंस मिश्र को दूत बना कर भेजा। उन्होंने भेंट कर एक भ्रमर पर आक्षेप कर कुमार को चेताया। कुमार ने अपने पिता तथा कौलावती का स्मरण कर विदा मांगी और वहाँ से विदा हो सागरगढ़ आ कौलावती को भी विदा करा लिया। समुद्र पार होने में तूफान आया किसी प्रकार वे सब प्राण बचा जगन्नाथ पुरी में पहुँचे। वहां पुरोहित (केंडीपाण्डे) से भेंट हुई। वहाँ से अपने देश में आये। पिता माता से मिले! पिता ने आनन्दबधाई की। माता अन्धी हो गई थी पुत्र के आगमन से हर्षित हो पुनः उसके नेत्र खुल गये। राजा ने पुत्र का गद्दी पर बैठा आप भजन करना आरम्भ कर दिया। कुमार अपनी रानियों सहित आनन्दराज्य भोग करना लगा।"

इसकी भाषा की सुंदरता और कथा की मनोहरता को देख सभा ने इस पुस्तक की प्रतिलिपि कराई। इस ग्रन्थ की आधी नकल बाबू अमारसिंह जी ने की था पर शेष रमाकान्त ओझा ने की। प्रतिलिपि ९ जनवरी सन् १९०९ का समाप्त हुई। नकल के अन्त में निम्नलिखित वाक्य काशी की प्रति की समाप्ति के अन्तिम वाक्य 'पोथी में रुपैय्या लगे रुपय्या एक सौ एक १०१) सिका मोसाअर औ लिखाइ औ कागद रासनई औ जिल्द साज।' के नीचे लिखा है—

उसी पुस्तक की नकल श्री महामहोपाध्याय प० सुधाकर द्विवेदी जी की आज्ञा से रमाकान्त ओझा ने ता० ९ जनौरी सन् १९०९ ई० का लिख कर तैयार किया।' द० रमाकान्त ओझा माज ओझाली'।

इस प्रतिलिपि वा नकल को महामहोपाध्याय सुधाकर द्विवेदी ने किसी उर्दू पुस्तक से मिलाया था अथवा किसी अपने शिष्य द्वारा मोकाबिला कराया था। ग्रन्थ में उर्दू का पाठ ऊपर लिखा था। पर इस ग्रन्थ में पाठान्तर या शोधने के कोई अक्षर द्विवेदी जी के हाथ के नहीं थे जिससे अनुमान होता है कि उन्होंने इसे उर्दू प्रति से अपने किसी शिष्य आदि द्वारा मिलान करा कर उर्दू पाठ ऊपर लिखाया था और उनका इसे स्वयं शोधने का विचार था। मिलान करनेवाला उर्दू को ठीक नहीं पढ सकता था इसलिये पाठ में कहीं कहीं कठिन भूल रह गई थी। जिसका उदाहरण यह है—पृष्ठ-१

दूसर जगत नामु जिन पावा जैसे सहरी[१] उदधि कहवा

इसमें 'लहरी' की जगह 'सहरी' पाठ रह गया है। हिन्दी प्रति के नकल करने वाले ने 'लहरी' को 'सहरी' लिखा था और उर्दू प्रति से मुकाबिला करने वाले ने भी इसे शुद्ध माना था। इसी पर विश्वास कर मैंने सहरी पर १-शफरी। एक प्रकार की मछली नोट लिखा। इस अशुद्धि का पता मुझे एक उर्दू प्रति के मिल जाने से लगा। यह प्रति मुझे ६४ पृष्ठ तक छप जाने पर अलईपुर के रमजान मियां उपनाम पोथी

मियाँ से मिली। इस में देखा तो लहरी पाठ था। अनुमान होता है कि हिन्दी प्रति से नकल करने वाले ने कैथी ल को 'स' समझ कर लहरी को सहरी' लिख दिया था और उर्दू प्रति से मुकाबिला करने वाले ने उर्दू लिपि में लहरी और सहरी की समानता से उसे सहरी समझा। वास्तव में यह भ्रम उनका उर्दू लिपि की दुरूहता के कारण हुआ। इस लिपि में एक शब्द का दूसरा शब्द पढ़ा जाना कोई असाधारण बात नहीं है। कचहरियों में इसके उदाहरण नित्य प्रति देखने में आते हैं।

अभी थोड़े दिन की बात है सन् १९१० के अन्त में ६ महीने के लिये मैं इलाहाबाद की कायस्थ पाठशाला में हेड क्लर्क था। पाठशाला का कुल दफ़्तर उर्दू में है। वहाँ केवल हाजिरी का रजिष्टर अंग्रेजी में है और कालिज और स्कूल की चिट्ठी पत्री जो अन्य स्कूलों और अफसरों से होती है अंग्रेजी में होती है। उन दिनों मनेजर के शिरिस्ते से एक रजिष्टरी चिट्ठी लायलपुर को जो पंजाब में है भेजी गई। पता लिखा था उर्दू में। चिट्ठी लायलपुर की जगह मिर्ज़ापुर चली गई और वहाँ पर किसी आदमी को जिस का भी वही नाम था दे भी दी गई और रसीद चौथे दिन कायस्थ पाठशाला की शरिस्ते में पहुँच गई। लोगों को चौथे दिन रजिष्टरी की रसीद पा अत्यन्त अचंभा और कुतूहल हुआ पर जब रसीद देखी गई तो उसपर लायलपुर मुहर की जगह मिर्ज़ापुर की मुहर थी। तब लोगों को उर्दू लिपि की दुरूहता का स्पष्ट प्रमाण मिला। खैरियत इतनी ही थी कि उस लिफाफे में नोट आदि नहीं थे।

ग्रन्थकर्ता निजामुद्दीन चिश्ती की शिष्यपरम्परा में था और सूफी था। मुसल्मानों में सूफी मत हिन्दुओं के वेदान्त मत का एक रूपान्तर है इसलिये कट्टर मुसल्मान सूफियों के शत्रु होते हैं और कितने सूफियों को मुसल्मान बादशाहों ने मरवा डाला है। कवि ने इस ग्रन्थ में ठौर ठौर पर वेदान्त और अद्वैतवाद की झलक दिखलाने में कमी नहीं की है। कथा ऐतिहासिक घटना से नहीं ली गई जान पड़ती

बल्कि कल्पनाप्रसूत है। नेपाल के राजसिंहासन पर एक भी पँवार राजा नहीं हुआ है। कथा विचारने से आध्यात्मिक प्रतीत होती है और इसीलिये ग्रन्थ में सुजान का शिव का अवतार लिखा है। महादेव खंड में जब शिव पार्वती धरनीधर की परीक्षा करने गए और उससे उसका सिर माँगा तो राजा सिर देने पर उद्यत हो गया। इस पर महादेवजी प्रसन्न हो उसे वर देने लगे यहाँ कवि ने उनके मुँह से यह कहलाया है—

देखु देतहौं आपन अंसा अब तोरे ह्वैहैं निजु बंसा।

यही नहीं कौलावती और चित्रावली अविद्या और विद्या की ही प्रतिरूप मालूम पड़ती है। सुजान शब्द का अर्थ बुद्धिमान् है इसीलिये उसने कौलावती का विवाह हठ पर भी उसका तब तक समागम नहीं किया जब तक चित्रावली वा विद्या उसे प्राप्त नहीं हुई। इसी लिये उपनिषदों में कहा गया है—

अन्धन्तमः प्रविशन्ति येऽविद्यामुपासते।
ततो भूय इव तमो य उ विद्यायां रताः॥
विद्याञ्चाविद्याञ्च यस्तद्वेदोभयंसह।
अविद्यया मृत्युं तीर्त्वा विद्ययाऽमृतमश्नुते॥

कविने ग्रन्थ में धरनीधर के प्रतिज्ञा पालन वा दान सुजान के अटल प्रेम, परेवा की स्वामिभक्ति और कौलावती के आत्मोत्सर्ग का अच्छा चित्र खींचा है। इसके अतिरिक्त चित्रावली की वाटिका का वर्णन, उसका नख सिख, उसका विरह, षट्‌ऋतु और बारहमासा आदि देखने योग्य हैं। कुँवर ढूँढ़न खंड में कवि ने कितने ही देशों और प्रदेशों का वर्णन किया है। यद्यपि इनमें कई एक की स्थिति और स्थिति का ज्ञान भ्रमपूर्ण है तो भी जिस समय यह ग्रन्थ लिखा गया उस समय एक साधारण नगर के रहनेवाले के लिये भूगोल का इतना ज्ञान होना कुछ कम नहीं है। सब से अचम्भे की बात तो यह है कि कवि ने उसमें अंग्रेज़ों का नाम भी लिखा है और उनके देश और उनके आचार व्यवहार का वर्णन उसने दो चौपाइयों में किया है। चौपाइयाँ ये हैं—

चलदीप देखा अग्रेज़ा तहाँ जाइ नहिं कठिन करेजा।
ऊँच नीच धन सपति हेरा मद बराह भोजन जेहि केरा॥

उस समय अगरेजों को आये इस देश में बहुत थोड़े दिन हुए थे। ईस्ट इंडिया कंपनी सन् १६०० में लंडन में बनी थी और १६१२ में सूरत में कंपनी ने अपना गुदाम बनाया था। उसके एक वर्ष बाद १६१३ का रचा हुआ यह ग्रन्थ है। उस समय में कवि का एक साधारण गाज़ीपुर ऐसे छोटे नगर में रह कर अंग्रेजों के विषय में इतनी जानकारी रखना कोई साधारण बात नहीं है। हम मान सकते है कि वह मक्का हज करने गया होगा पर तो भी उसका इतनी जानकारी रखना और ग्रन्थ में लिख जाना उसकी बहुज्ञता का स्पष्ट प्रमाण है।

सब से उत्तम कथा चित्रावली में चित्रावली की माता का वह उपदेश है जो उसने उसे बिदा होते समय दिया था। यह उपदेश स्त्रियों के बड़े काम का है और बालिकाओं के लिये अत्यंत उपयोगी है।

इस ग्रन्थ में सबसे अधिक विलक्षण बात यह देखी जाती है कि कवि अपनी कविता में लोकोक्तियों का समूह यथास्थान करता गया है। हम उसके दो चार उदाहरण यहाँ दिये देते हैं।

मान करहु जो करि सकहु, कथनी अकथ अपार।
कथे न कर कछु आवई, करनी करतब सार॥
कौन भरोसा देह का, छाड़हु जतन उपाइ।
कागद की जस पूतरी पानि परे घुलि जाइ॥
तब लहु सहिये बिरह दुख, जब लगि आव सो चार।
दुख गये तब सुक्ख है, जानै सब संसार॥
कहाँ सो गोडिया तुच्छ तन, कहाँ बिसन अस राउ।
बैरी जो बस कै मिलै लेइ सो आपन दाउ॥
सब कहँ अमिरित पाँच है, बगाली कहँ सात।
केरा काँजी पान रस, साग माँछरी भात॥

क्षत्रिय सुनि जो ना करै तिय अरु गाइ गोहारि।
पुहुमी कुल गारी चढ़ै, सरग होइ मुख कारि॥

खरग सँभारै सूरमा वैरी मुख समुहान।
तौ लहु पौरुख ना तजै जौल्हुँ आव न रात॥

गहि जो भिखारी मारइ दुइ घट यहि जग होइ।
एक हत्या काँधे चढ़ै पुनि भल कहै न कोइ॥

जैसे पनही पाउँ की तैसे तीय सुभाउ।
पुरुष पथ चलु आपने पनहीँ तजै न पाउ॥

बिनसत कौल न बार भइ, गयो अथै जग भान।
मारेसि ईँट देखाइ गुड़ साई भा उपखान॥

मैँ तोहि डारेहुँ लै तहाँ, जहाँ न डोलै पाखि।
जो जस करै सो पाय तस, कुँअर देखु ले आँखि॥

मैं न कवि हूं और न मुझे कवित्त और छन्दो का कुछ ज्ञान ही है। मैंने हिन्दीभाषा के साहित्यग्रन्थो को भी अच्छी तरह नहा देखा है। मेरी आयु का विशेष भाग भारत के प्राचीन वैदिक ग्रन्थो और शुष्क दर्शनों के अवलोकन और पर्य्यालोचन मे बीता है। मुझे सस्कृत भाषा के काव्य आदि के देखने का भी कभी उतना अवकाश नहीं मिला है और न मैं उन विषयों को जानता ही हूँ। ऐसी अवस्था में मुझ से ऐसे ग्रथ के सपादन की क्या आशा की जा सकती है?। मुझ से यह काम लेना सूखे अमचुर का बलात् मुरब्बा बनाना है। फिर भी सभा की आज्ञा को शिरोधार्य्य कर इस ग्रन्थ को जहाँ तक हा सका है मैंने शोधा है और कठिन देहाती वा ग्रामीण शब्दो का अर्थ भी टिप्पणी में दे दिया है। सपादन के काम से अनभिज्ञ हाने हुए भी मैंने यथाशक्य इसको सपादन करने में अपनी ओर से कसर नहीँ की है। प्रूफ देखने और तदनुसार शुद्ध करने में असावधानी होने तथा ६४ पृष्ठ तक उर्द

की प्रति न मिलने के पूर्व छप जाने से अशुद्धियाँ रह गई हैं जिनके लिये शुद्धिपत्र लगा दिया है।

ग्रन्थ का विभाग ठीक नहीं था मैं ने इसे विषय के अनुसार खंडों में विभक्त कर दिया और पाठकों के सुभीते के लिये उसकी सूची भी लगा दी है। काम शास्त्र खंड इस खंड का अनुखंड है, स्वतन्त्र खंड नहीं भ्रम से इस पर (४१) का अंक लिख गया है। पाठकों को इसे सुधार लेना चाहिये। ४१वां खंड चित्रावली गवन खंड' है।

इस ग्रन्थ के संपादन और संशोधन में मुझे रमज़ान उपनाम पोथी मियां की उर्दू प्रति से बड़ा सहायता मिली जिसके लिये मैं उन का कृतज्ञ हूँ। यदि मुझे यह प्रति न मिलती तो मैं इस ग्रन्थ को ऐसा संपादन न कर सकता और कितने ही अंश संदिग्ध रह जाते।

फिर भी संभव है कि दृष्टिदोष वा भ्रम से कुछ और अशुद्धियां रह गई हों। आशा है कि पाठक उनको सुधार लेंगे क्योंकि मनुष्य सर्वथा निर्भ्रान्त नहीं हो सकता।

जगन्मोहन वर्म्मा।

स्थान, काशी नागरीप्रचारणी सभा
२४ दिसम्बर सन् १९१२

खंड सूची

—○—

	पृष्ठ
१ स्तुतिखंड	१
मंगलाचरण	१
महम्मद की प्रशंसा	
महम्मद के चार मित्रो की प्रशंसा	६
राजा की प्रशंसा	६
शाह निजाम की प्रशंसा	९
बाबा हाजी की प्रशंसा	१०
गाजीपुरवर्णन	११
अपने पाँच भाइयो का वर्णन	१२
प्रस्तावना	१४
२ कथा खंड	१५
३ महादेव खंड	१७
४ जन्म खंड	२०
५ देव खंड	२७
६ चित्रदर्शन खंड	३३
७ मढी खंड	४१
८ धर्मसाल खंड	४३
९ चित्रावली जागरण खंड	४५
१० सरोवर खंड	४७
११ चित्रावलोकन खंड	४८
१२ चित्र धोवन खंड	५२

	पृष्ठ
१३ परवा खड	५६
१४ उद्योग खड	८३
१ प्रस्थान खड	८५
१६ सुबुद्धि खड	८७
१७ यात्रा खड	८८
१८ विरह खड	९२
१९ परेवा आगमन खड	९७
२० दरसन खड	१०४
२१ कुटीचर खड	११०
२२ अजगर खड	११४
२३ बनचर खड	११७
२४ हस्ती खड	११९
२५ कौलावती खड	१२१
२६ जागी बधन खड	१३०
२७ साहिल खड	१३४
२८ कालावती विवाह खड	१ १
२९ गिरिनार यात्रा खड	१ ७
३० जोगी ढूँढन खड	१५९
३१ चित्रावली विरह ख॰	१६३
३२ पाती खड	१६५
३३ सिद्ध समागम खड	१७७
३४ कथक खड	१८१
३५ परेवा बधन खड	१८६
३६ दलगजन खड	१८८
३७ सुजान बधन खड	१९१
३८ चित्रावली विवाह खड	१९६

	पृष्ठ
३९ कुटीचर-दहन खंड	२०५
४० हंस खंड	२०८
४१ चित्रावली गवन खंड	२१७
४२ कौलावती गवन खंड	२२६
४३ बोहित खंड	२२९
४४ जगन्नाथ खंड	२३२
४५ अभिषेक खंड	२३५

शुद्धिपत्र ।

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१	१८	जैसे लहरी[३] उदधि कहावा	जैसे ल्हरी उदधि कहावा ।
	२१	३ (शफरी) एक प्रकार की मछली	० ■
३	३	कोऊ बिसरत नाहीं	काउ बिसरत नाहीं
७	४	खोदु हिय इदू	खोइ हिय दुइ
	६	कही न जग पति याइ कोउ	कहे न जग पतियाइ कोउ,
८	४	अस भा अदल मते हरि बानी	अस भा अदल मथे हरिबानी
	७	सहस खाट कचन के साजे,	सहस घांट कचन के साजे,
	२२	चौंधे हष्टि सोहे जेहि हेरे	चौंधि दिष्टि सोंह जेहि हरे,
९	१०	बादिहि लेगि	बादिहि लोग
	१२	मानसा होइ	मनसा होई
१०	९	तेहि देई जगाई	तेहि देइ जगाई
११	९	सुमर समै पुनि सूर	समर समै पुनि सूर
	२२	तजहि न एकौ तिनहु कहाला	तजहिं न एकौ तीनिहुं काला ।
१३	९	कीय ब्योहारा	किय ब्यवहारा
	२१	प्रेम अँकुर जहँ सिर काढा,	प्रेम अँकुर जहा सिर काढा
	२३	प्रेम कुमुर जहँ बदन उधारा, बिरह आई तहँ मजन सारा।	प्रेम मुकुर जहँ बदन उघारा, बिरह आइ तहँ मजन सारा ।

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१४	२	हाँ तीनहु क भद कहु	हौं तोरिहुँ क भेद कहि
	७	मन हाई गियाना	मन होइ गियाना।
	१३	जहँ रहु सुभि	जहँ रहु सुभि
१६	१६	दीआ बाजु मग	दिया बाजु माग
२१	९	राहु केतु दाऊ	राहु केतु दोउ
२४	१	जहँ रोउ राउत रान	जहँ लहु राउन रान
	१८	मारहु खाड पचारि	मारहु खाँड प्रचारि
	२३	विष भारा	विष भरा
३७	९३	कुँअर जहाँ आवा।	कुँअर जहँ आवा
४२	३	रहहु जाई	रहहु जाइ
	१५	चित्र तिचत्र सिंगरा	चित्र चित्रित सिंगारा,
४४	२०	अब कीरान	अब करान
४८	१३	भौंर कँघाल तेहि सग	भौंर कँवल तेहि सग
५१	४	दीसन आना	दीस न आना
५५	२२	कायहि लगा	कायहि लागा
५९	७	अस लगेउ तुअ भाग	अस लागेउ तुअ भाग
६०	२१	पानि मोती	पानि मोति
६१	११	चकइ चकवा	चकई चकवा
६२	७	बहु कर नास	बहु कटनास
	२१	ठौर ठोर सो अधिक बसाहीं	ठोर ठार सो अधिक बसाहीं
	२६, २७	बहु कर वास रहहि	बहु कटनास रहहीं
६६	२४	बेलिन खूँदी	बेलि न खूँदी
६७	६	आपन चित्र अपु पै लीखा	आपन चित्र आपु पै लीखा,
	१८	अग्या हाई	अज्ञा होइ

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
६८	१०	सिभू सरीर	सभु सरीर
७३	२०	रहस न जाहीँ	रहसन जाहीँ
७४	११	सोइ चीन्ह रखा तहाँ जो देखा	साई चीन्ह रेखा जो देखा
७५	१२	दुई जनु डँका	दुइ जनु डका
८३	१९	कहा सो तरागन महँ भावा	कहाँ सो तारागन महँ भाषा
८९	१५	हीरदै लिखा	हिरदय लिखा
९१	२२	गुरु बचम	गुरू बचन
९२	१०	परट हसै	परगट हसै
९५	७	सेल उर मारी	सेल उर मारा
९६	३	श्रीपचम मानहीँ	श्री पचमि मानहिँ
९७	१३	चित्र देखा	चित्र देखि
	१५	जीउ अधर बईठा	जिउ अधर बईठा
	२१	जैस उगवत सूर क	जैसे उगवत सूर के
९८	२०	धरमसाला महँ	धरमसाल महँ
१०१	१४	गुरुसोँ कही	गुरूसोँ कही
१०३	१०	भोग आचार	भोग अचार
१०८	१३	खाइ रह ठग मूरि सी	खाइ रहा ठग मूरि सी
११०	५	राज परीसा खावा	राज परोसा खावा
	[illegible]	बार महँ आहा	बार महँ अहा
१३२	२२	दहु अँकोरा	देहु अँकारा
१३३	१	सरग लागा	सरग लगा
१३४	१२	बिधि देकै सुदिष्टि दे मोही,	बिधिना अस सुदिष्टि दे मोहीँ,
	१३	दूजा जाइ न हिय महलेखा, जहँ देखों तहँ एकै दीखा।	दूजा जाइ नहि यमहँ लेखा, जहँ देखों तहँ एकै देखा।

पृष्ठ	पक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१३७	१	पहरु जागै	पहरू जागै
	७	सीद्ध हाइ सब काज	सिद्ध हाइ सब काज
१३८	८	एक बामन अरु माट पुनि	इक बाभन अरु भाँट पुनि
	२०	सन चढ़ि मागे नहिँ काई	ऐसन चढ़ि मागै नहिँ कोई
१४१	२५	देखत रूप पदुमिनि नागिनि	देखत रूप पदुमिनी नागिन
		धामिनि अेड उठि उठी लागिनि	धामिनि जाँउ उठि उठी लागिन
१६५	३	हिय हु लास विहँसे अधार	हिय हुलास विहँसे अधर
	४	हाइ न बैरे काई	हाइ न बैरे काइ
	६	बैठि एहि ठाऊँ	बैठि यहि ठाईँ
	१६	भँवइ बास लागि बारी बारी	भवइ बास लगि बारी बारी
१६६	७	तिय तन तुछक किमि कै कहई	तिय तन तुच्छक किमि के सहई
१६९	५	मिरिग क छाता	मिरिग क छाला
१७०	२०	जागिहि काकी चित	जोगिहि काकी चित
१७१	२३	रह घट सँसा	रह घट स्वासा
१७२	६	नीँद न अवत रैनि दिन	नीँद न आवति रैनि दिन,
१७५	६	बिहरै सुनत बजर छाती,	बिहरै सुनत बज्र की छाती
	८	जाइ निआरावा	जाइ नियरावा
१७६	१०	हुपुमी सरग	पुहुमी सरग
१७७	१२	निहचै नग जालि डारो कोई	निहचै नग जनि डारो कोई

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
	२२	देखन दुहूँ आनन्द भा,	देखत दुहुँ अनद भा,
१७८	१६	पकते निकसि पेक महँ परा	इक तें निकसि पक महँ परा
१७९	२५	गा छिपाइ चटेक अनु कीन्हा	गा छिपाइ चेटक अनु कीन्हा
१८१	८	धुआँ तस उठा	धुअँ तस उठा
१८३	४	सागर जोहर साजै चाहा	सागर जोहर साजै चहा
	१९	जाहो दीन जनमी	जाहो दिन जनमी
१८४	१	सुपूरुष आचासार	सुपुरुष आचासार
	६	आगिल परै नहि हीना	आगिल परै न हीना
	८	पूँछि नीअर हाइ	पूँछि नियर होइ
१८५	१	दुर जालि एह पुहुमी करे,	दूर आलि यदि पुहुमी केरे
१८६	२	अहित जो आही	अहित जो अही
१८८	९	गहि जो भीखारी मारई	गहि जो भिखारी मारइ
	१९	तातें बरजे मकल जन	तातें बरजे सकल जन
१८८	२२	तासों औ उन लवहीँ, मत जो साथी नाहीँ।	तासों औड नलावहिँ, अस्त जो साथी नाहिँ।
१९०	२४	रुहिर सुखिगा गात	रुहिर सुखिगा गात
१९१	११	जुझि साज जो कुँअ रहि सूझा	जुझिसाज जो कुँअरहिँ सूझा,
	१३	जुझि सों काजा	जुझिसों काजा
१९४	१०	चढि अटारि देखाहँ रनिवाँसा	चढि अँटारि देखहिँ रनिवाँसा,
१९६	१३	रूपकथार सोन करढका,	रूपकथार सोन कर टका,
२००	९	फेनि पानरि मुहँ न समाई,	फेनि पातरी मुहँ न समाई,

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२०१	१६	पुहुप ऊतारा	पुहुप उतारा
२०३	१७	बारी बारी दोऊ भनेउ	बारी बारी दोउ भनेउ
२०५	२३	उँच धुराहर	ऊँच धुराहर
२०६	१६	पिरम बैरि	परम बैरि
२१०	७	(४१) काम शास्त्र खण्ड	
२१२	११	काँध नवाए निसिदिन रँहई	काँध नवाएँ निसि दिन रहई,
२१८	२२	नियरही रतन न चीन्ह नैना	नियरहिँ रतन चीन्है नैना
२२७	२२	कौलावति जहाँ दीन्ह व्याही	कौलावति जहँ दीन्ह बियाही
२३१	१५	पुनि मन कहिसी	पुनि मन कहिसि

नोट—इसके अतिरिक्त कहीं कहीं अनुस्वार ( ) का चन्द्रबिन्दु (ँ) और चन्द्रबिन्दु का अनुस्वार छप गया है जिन्हें पाठकों को यथास्थान शुद्ध कर लेना चाहिये।

चित्रावली

(१) स्तुति खंड।

मंगलाचरण और ईश्वर-स्तुति।

आदि बखानौं सोई चितेरा, यह जग चित्र कीन्ह जेहि फेरा।
कीन्हेसि चित्र पुरुष औ नारी, का जल पर अस सकै सँवारी॥
कीन्हेसि जाति सूर ससि तारा, का अस जाति सकै जग पारा।
कीन्हेसि बचन बंद जेहि सीखा, को अस चित्र पवन पर लीखा॥
अस विचित्र लिखि जान गोसाईं, वहि बिनु मेट सकै नहि काई।
कीन्हेसि रंग स्याम औ सेता, राता पीत और जग जेता॥
कीन्हेसि रूप बरन जहँ ताईं, आपु अबरन अरूप गुसाईं।

अगिनि पवन रज पानि के, भाँति भाँति ब्योहार।
आपु रहा सब माँहि मिलि, को निगरावै[1] पार॥ १॥

सो करता सब माँह समाना परगट गुपुत जाइ नहि जाना।
गुपुत कहउँ तो गुपुत न होई, परगट कहउँ न परगट सोई॥
दूर कहउँ तो दूर न लेखा, नियरे कहउँ तो जाइ न देखा।
सब वहि भीतर वह सब माहाँ, सबै आपु दूसर[2] कोउ नाहीं॥
जो सब आपु रहा जग पूरी, तासों कहा नेर औ दूरी।
दूसर जगत नामु जिन पावा, जैसे लहरी[3] उदधि कहावा॥
ज्ञान नैन जो देखै काई बारिध बिना आन नहि होई।

१—निलगावै अलग करे। २—एकमेवाद्वितीय ब्रह्म। सर्वं खल्विदं ब्रह्म नेह नानास्ति किञ्चन। ३—शफरी। एक प्रकार की मछली।

जहवा सिन्धु अपार अति बिन तट बिनु परिमान।
सकल सृष्टि तेहिमा गुपुत, बालू कनक समान॥ २॥

करता जिन जग रूप सवारा, तेहिक रूप का बरनइ पारा?।
आपु अमूरति मुरति उपाई[1] मूरति माँति[2] तहाँ समाइ॥
मन क चरन पगु जहि ठाइँ बपुरी जीभ चलइ कहँ ताईँ।
मन की डीठ नैन जहँ मूँदै, सा मगु जीभ चरन क्या खूँदै[3]॥
परगट गुपुत बिधाता सोई दूसर और जगत नहि काई।
हे सब ठाउँ नाहिँ कोउ ठाईँ मुनिगन लखहिँ कि अलखगु साईँ॥
सृष्टि अनेक लखे नहि पाई, सिरजनहार लखा केहि जाई॥

अलख अमूरत सोइ बिधि लखै न मूरति काय।
सो सब कीन्ह जो चाहा, कीन्ह चहे सो हाय॥ ३॥

कीन्हसि जो अति गिरवर[4] गरुवा, चहइ तो करे तृणहु ते हरुवा[5]।
औ पुनि तिनहि बज्र करि धरई, मुनिवर लागहिँ ता नहि टरई॥
कीन्हसि वारिधि अगम अपारा, चहइ तो करे अस लघु तारा[6]।
औ तारहि का समुँद बनाव मेरु बबूला जैस तराव॥
कीन्हसि अगिन बीच अति ज्वाला चहे तो करे हिमचल पाला।
औ पानी महँ अगिन सँचारै, पाहन मलि जैस तृन जारै॥
भजइ गढइ बिधाता सोई, दूसर और जगत नहिँ कोई।

सोई करता रमि रहा रोम रोम सब माहिँ।
तिन सब कीन्ह सिरिष्ट[7] यह गाहक[8] की हा नाहिँ॥ ४॥

सो करता जेहि काहु न कीन्हा, सब कहँ जिवन जनम जइ दीन्हा।
दीन्हसि काया जेहि जग पोषा दीन्हसि माया जेहि न सतोषा॥

१—उपजाया, उत्पन्न किया। मि पहिले आपनर नरि बनाए। ता पीछे सब रोग उपाइ। २—मस्त, भ्रम में पड़ा हुई। ३—स कदन। कूट, फाट। ४—पर्वत, पहाड़। ५—हलका। ६—ताल। ७—सृष्टि। ८—स अवगाहक = जानने वाला ज्ञाता।

दीन्हेसि अन जिये जहि खाई, दीन्हेसि ज्ञान रहइ लौ[1] लाई।
दीन्हेसि हिया गुनै जो गुनना[2] दीन्हेसि सरवन[3] सुनै जो सुनना[4]॥
जहवाँ लागि जीव जग माहाँ भुगुति[5] देत कोऊ बिसरत नाहीं।
पहिले भुगुत दई जो चाहा, पीछे जीव आनि घट माँहा॥
पहिले औषध मूरि बनाए, ता पीछे सब रोग उपाए।

मान रहे जग आनि के त्रास होइ भय त्यागि।
बिछुरन रोग दिहेसि सबन्ह काहु दरसन लागि॥ ५॥

ए गुसाईं ते अस निधि अहई अस्तुति तोर तोहिं पहँ कहइ।
अस्तुति बारिधि अगम अपारा, काउ न जगत महँ पैरन हारा॥
साधुन बुद्धि तीर लगि जाई, काँपइ जाँघ देखि गहिराई।
जब ते बिधि यह सृष्टि उपाई, या जब ताईं रहहि बनाई॥
जहँ लहि सुर नर मुनि गन अहहीं जहँ लग लोक रसातल अहहीं।
जहँ लग बनसपती[9] तर पाना, रोम राम सब जीव क दाना॥
रसना होइ होइ अस्तुति सारहिं साधक[10] एक कहे नहि पारहिं।

जेहि ते बड़पन नहि गुनै, तऊ बड़ापन तोहिं।
जेहि ते लघु नहि श्रोर कछु, सो लघु छाजै मोहिं॥ ६॥

मोरे मुख कछु कही न जाई, देखहु रसना करी हँसाई।
रचक[11] जीभ रही मुख परी, बिधि अस्तुति कारन इकसरी॥
अस्तुतिमान[12] पाय अस कूदी बुद्धि आइ पहेले मुख मूँदी।
एहि मुख श्रोर कअ तर कहा, देखतन्ह जिनहि लाइ हँसि कहा॥

१—लव, लव लाना = ध्यान लगाना, विचारना। २—गुनान गुनने का विषय = ज्ञान विचार, निश्चय। ३—श्रवण, कान। ४—सुनन का विषय, शब्द। ५—भुक्ति = भोजन अन्न। ६—मूल जड़ी। ७—प्रमाण। ८—कहा कहा कहुराइ पाठ है कहराद = (قهر कहर = भयानक) का भाववाचक है = भयानकपन। —बनस्पति वृक्ष लता गुल्मादि उद्भिज। १ —स इयाक साक, तिनुका। ११—एक रच मात्र = छोग सा। १२—स्तूयमान।

रूप अबरन[1] को बरनै पारा रहै मौन होइ इहै बिचारा।
इहवाँ बोलि सकइ नहिँ कोई, बिनती करउ होइ सो होई॥
बिनती से जो होइ मयारा[2], बेगि करै वह सागर पारा।

गन-गँधरब मुनि देव नर, महि पाताल अकास।
वहिक आस सब जग करै, वह न काहु के आस॥ ७॥

कहिन कि जिन आपहि पहिचाना, तिन कछु मरम तोर है जाना।
जा सब भो रम रम[3] जग माहा मोहिँ न माह दखावसि काही॥
जो माहिँ सो बिन माह छिपाई, कहि कारण किन्ह मोह उपाई।
दिया नैन पै दिया न जोती, बाज पानि कहि कारन मोती॥
इन की जोति जोत अहि होई, तेहिक भरोस करै सब कोई।
कबहुँ सूर करै उजियारा, कबहुँ दीप कबहुँ मसियारा[4]॥
बिधिना दियेउ सो लोचन माहीँ, अछहैं पहिचान्यो नहि तोहीँ।

कहेँ कहेउ न सको मैं निकट रहहुँ नित ताहिँ।
केहि अभाग कहि अधरम, नहिँ दरसावसि मोहिँ॥ ८॥

कब लगि नट ज्यों आपु छिपावसि, इह जग पुतरी काठ नचावसि।
जग भूला यहि काठ के नाँचा जानि न जाय झूँठ अह साँचा॥
साँचा छिपा झूँठ क पाछे, झूँठहि साँच करहि का काछे।
साँचा बहुरि तोर कल डोरा पट उघारि नट अगन निहारा॥
मुख दरसाव परम उजियारा, जाहिँ बिलाइ तिमिर अँधियारा।
एक जोत परगट सब ठाऊँ, रहइ न कतहुँ दूसर नाऊँ॥
तू सब जानइ बड औ छोटा, कौन खरा कंचन का खोटा।
पट उघारु संसार जिय संसय रहा समाय।
जब लगि सूझ न लोचनहिँ, अंधा नहि पतियाय[5]॥ ९॥

१—अवर्णनीय। २—प्रेम करनेवाला। ३—रम क। ४—मशाल।
५—अंधा जब पतियाय जब आँखो देखइ।

महम्मद की प्रशंसा

पुरुष एक जिन्ह जग अवतारा सबन्ह सरीर सार संसारा।
आपन अस कीन्ह दुइ ठाऊँ एक क धरा मुहम्मद नाऊँ॥
पहिले उठा प्रेम विधि हिये, उपजी जोति प्रेम की दिये।
वही जोति पुनि किरिन पसारी, किरिन किरिन सब सृष्टि सँवारी॥
जोतिक नाउँ मुहम्मद राखा, सुनत सरोष कहा अमलाखा[1]।
वह सूरज यह किरन सँवाई[2], वह दधि[3] यह सब लहर उपाई॥
जो न करत वह ओकर चाऊ हास न जग महँ एक उपाऊ।
लहर बिना दधि सोह नहि किरन बिना दुति सूर।
साजा कारन एक जग जासों प्रेम अँकूर॥ १०॥

गुपुत उपाया परगट आना किया जगत यह एक पराना।
जो परान संसारक माहाँ कस न भई नहि संग परछाहीं[5]॥
सन्या करज चाँद मनियारा भा बिखंड[6] जानै संसारा।
जो कपटी भोजन विष दिसा बोलि उठा कर माँह गिरासा॥
एत पर जा ची हेंसि नाहीं अ म अँगिरा ना जग माहाँ।
जो भर जनम करे निधि जापा बिनु वाहि नाम हाहि सब लापा[1]॥
एक बार जो मन बिच कहई नाम महम्मद विधि निधि लहई।
करनी खोटी मोर सब, का कहि बिनवौं ताहिं।
अपनी उम्मति जानि कै लै निरबाहब मोहिं॥ ११॥

१—अमलाक = फरिश्ता। २—सजाया। ३—उदधि = समुद्र

४—सृष्टि। मुसलमानों की हदीस में लिखा है कि 'यदि मुहम्मद न होते तो ईश्वर आकाश और पृथ्वी न रचता' लिखा था।

اکر و نعودی محمد رماں - و مدا دہ کردم زمیں اسماں - لولاک لما خاص افلاک

५—मुहम्मद साहेब के परछाही नहीं था। ६—दो रात, महम्मद साहेब ने चाँद के दो टुकड़े किये थे। ७—एक बार मुहम्मद साहेब को विष दिया गया था तब हाथ में ग्रास बोल उठा था। ८—मृषा = व्यर्थ। ९—प्रलाप। १—अनुयायी।

महम्मद के चार मित्रो की प्रशसा

चार मीत तेहि सग सयान सूर समान चहूँ खंड जान।
चारा करहिं एक की चिना एक मते वे चारों मिता॥
पहिले अबूबकर सतवादी, सत्त जान जो भो अनवादी।
दूजे उमर न्याउ प्रतिपारा, जे बिध न्यारन सुतहिं सँघारा॥
तीज उसमाँ पडित ज्ञानी, जे करि ज्ञान लखा निधि बानी।
चाथ अली सिंह रन सूरा, दान खड्‌ग जे निर्तुं जग पूरा॥
परम बचन जो महमद पावा उन चारिहुँ कहँ आनि सुनावा।
इन के पथ जो काइ चल्इ जनम न भूल पार।
निर्मल चारिउ दीप महँ, सात दीप उजियार॥ १२॥

राजा की प्रशसा।

नूरुद्दान महीपति भारी, आकर आन मही महं सारी।
चारिउ खूँट नवाई खांडे, गजपति रहा न काउ बिनु डांड॥
सात दीप पठवई सेवकाई, फिरी जलधर पार दाहाई।
आवहिं अरबी ओर इराकी, रस मिसिरी कस्तुरी खनाँ की॥
आवहिं चली चीन की चीनी, सहसन माह एक इक बीनी।
आवहिं चली पदूमिनी जते, सहसन माँह एक इक ते ते॥
राति दिवस भा साभ सकारा भरा पेसकस दरिय बारा।
जह लगि पुहुमि फिरइ सब कोई, काहुक लइ काहु कह दइ॥
सात खड बिनवइ सेवकाई, फिरी चलइ हर ओर दुहाई।
सूरज बाज इन्द्रगज सस मृग छाडइ इन्दु।
भौंह चगाव जहि घरी, जहागीर बलचन्दु॥ १३॥
बेरी रहइ न कोउ पग रोपी, जेहि पर चढ़े तुरगम कोपी।
चढइ तुरग होइ अनुरागी, के अहेर कै हेकर[1] लागी॥

१—हेकनी = लडा़ई।

जो बर कइ बैरी पग चाँपै, सबन डरैं पताल कुल काँपै।
जहाँ तहा परगट सब देसा, बाजि चरन चीन्हें अहि सेसा॥
हेठ आइ बलि बासुकि चापा ऊपर डरि सुरपति पुनि काँपा।
सब जग जीति खोदु हिय इदु करइ रैन दिन केलि अनदू॥
सदा रहइ बिधिना जगमाहीं, जाग माँ थे यह बिधि परछाहीं।

कहीं न जग पति याद कोउ, सुनि अचरज ससार।
होहिं छहो रितु एकठों जहाँगीर दरबार॥ १४॥

अब सुनु बरनि सुनाओं तोहीं, जेसे कोऊ न दुल्खइ[1] मोहीं।
तपइ साह जस रबि उजियारा, आथम होइ रहा ससारा॥
बहुरि उदय जस भानु करई पल महँ उदय अस्त सब लेई।
भानु सौंह बरु चख ठहराइ, सम्मुख साह निहारि न जाई॥
पुनि साहे गजपती सोहाई साह बार पावस रितु आइ।
मघ बरन रिसि भरे अचता, अकुस बीजु दन्त बक सेता॥
गरज शब्द बरषा मद बाढा माथ सीन उग्य पुनि काढा।

घटा घूघुर मेघ पिक चहुँ दिसि होइ भनकार।
सभोगिनि कहँ अति रहस, बिरहिन हिये बिकार॥ १५॥

पुनि नब सान सजी बरनारी, लिए सरद रितु आनि जाहारी।
ससि आनन मुक्ताहल तारे खजन नैन सेत औ कारे।
बेसर मुकुता सोहिल[2] तारा, सुभग चरन पकज रतनारा॥
जा गढ़पती बाघ बर आने गढ़ भाने औ तोरे माने।
हिमि ऋतु तिन्ह के उर भरि रहा, हिये करेज कँपावत महा॥
साजि सिसिर रितु तिन्ह की नारी, हिये जाड तन चीर सवारी।
चितवहिं सौंह साह की ओरी, दुहुँ हसि मिलहि कि लावहिं डोरी[3]॥

१—झूठा बनावं। २—सुहैल (سہیل) = एक अत्यन्त प्रकाशमान तारा।
३—डाली।

बरन बरन उमराव तन चोवा चन्दन चारु।
फूले मनहुँ बसन्त रितु महँकि रहा दरबार ॥ १६ ॥

पुनि कलि अदल उमर सम कीन्हा। जन सा पुन्य जो यह जस लीन्हा॥
अस भा अदल मते हरि आनी। छाना नवा पुराना पानी॥
पुहुमी परै न पाव काँटा। हस्ती चाँपि सके नहिं चाँटा॥
गाय सिंह गवनहिं एक गली। बल भा अबल अबल भा बली॥
सहस खाट कंचन के साजे। पाट डोर तेहि बार बिराजे॥
घुंघिया छुअत हाथ भनकारा। उठे काँपि सकल संसारा॥
पातसाह सुनि निकट बुलाए, दरसन पाय नाद पुनि पाए॥

जहाँगीर के अदल पर फूलि रहा जग चैन।
सरवन[२] सुना नासरवाँ, साह सो देखा नैन ॥ १७ ॥

पुनि नवरोज सराहौं काहा, धन सो पुरुष न पावा ताहा[३]।
दलबादल[४] जहँ अम्बर छावा। ससि सूरज तेहि माँह बनावा॥
पहिले बारह रासि बनाए। ता सब नखत तहाँ लिखि लाए॥
ससि बुध सुक बृहस्पति साजा। आपन आपन ऊंच बिराजा॥
भौम सनीचर निकर सगा। तिन्ह कर नैन कीन्ह रवि भगा॥
नौ अंबर लखि रहस निधाना। मनहिं रजाना सरग पुराना॥
देखि अपूरब भाँत सँवारी, निसि दिन फिरत लागि बाल्हारी॥

कहा कहा सो गा बिकल इन्द्र होइ पति जाहि।
कहिस कि वह जो इन्द्र है इहै इन्द्र सर आहि ॥ १८ ॥

ऊपर सब सँयोग सुभ साजा। तेहि पर हाटक पार बिराजा॥
लागे हीरा रतन अलखेँ। चाँपे दृष्टि रुहि जहिं दखेँ॥
मोति अनेक लाग जस बोला। एक इक देस एक कर माला॥

१—न्याय। २—श्रवण=कान। ३—लाभ। ४—शामियाना। चँदवा
५—मुसलमानों का विश्वास है कि तारागण नहीं घूमते बल्कि आकाश या स्वर्ग ही घूमता है

तेहि पर बैठ छत्रपति राजा, एक छत्र चहुँ खंड बिराजा ॥
छत्रिन्ह आइ छत्र सो पूजा, और छत्र जग रहा न दूजा।
कलपबिरिछ भा यह जग माहा, कोस सहस दस पसरी छाहीं॥
जग निचित सोवै जेहि छाहीं, चिउँटी कांटि जगावै नाहीं।
विधिना सौं जाँचे जगत, पुहमी धरे लिलाट।
औलहु धरती सरग दोउ, रहे छात ओ पाट ॥ १९॥

तहाँ बैठि पुहुमी पति भारी देइ दान कर बार उघारी।
एकहि बेर एक कहँ दई, दूसरे बेरि न काऊ लेई॥
पिरथी बली हात जो आजू, माँगत देखि दान कर साजू।
बादि मरजिआ समुँद धसाई बादिहि लोगि रतनगिरि जाई॥
बादि सुमेरु लागि जग धाव, कस न बार जहँगीर के आवै।
देइ रतन जत मनसा होइ, सोन रूप कह बरज न कोई॥
महँ सुना कि अनेक भिखारी, कीन्हे साह नेवाजि[१] हजारी।
आयों सोई बार सुनि, लिए गरीबी साज।
कहा जा माँगु गरीब है साह गरीब नेवाज ॥ २०॥

शाह निजाम की प्रशंसा।

शाह निजाम पीर सिधदाता, दिष्ट तेज जिमि रवि परभाता।
नारनाल भीतर अस्थाना, उदे अस्त लह सब कोइ जाना॥
जा कहँ एक किरन सम जोवा जनम पाइ ते तिमि जिम खोवा।
औ खिन नैन मया कै खोला, पाहन मानिक होइ अमोला॥
जा कहँ मया दिष्टि भरि हेरा, ते दुनहु जुग सों मुह फेरा।
जासों ज्ञान वचन अनुसारा[२], ना कहँ वचन सिद्धि देनिहारा॥
भौसागर मँह है कन्हारा[३] दुखी सुखी सब पार उतारा।

१—नेवाज कर = कृपा कर। दान देकर। २—चलाया, कहा।
३—निकालने वाला। मरजिया।

गहि भुज कीन्हे पार जे बिनु साहस बिनु दाम।
कश्ती[1] सकल जहान के चस्ती साह निजाम ॥ २१ ॥

बाबा हाजी की प्रशंसा।

बाबा हाजी पीर अपारा सिद्ध देत जेहि लाग न बारा।
ज मुख देखा तै सुख पावा परसि पाय तन पाप गँवावा ॥
हिंदू तुरुक सबै कहं आना निसि दिन जाँचहिं[2] इच्छा दाना।
इच्छा देत न लावहिं धोखा जहि जस तोष पवे तस पोषा ॥
औ कोउ जिय निहचै करि आवै श्रवन लागि तहि ज्ञान चताव।
प्रेम दीप तेहि देई जगाई, वहि उजियार चला सो जाई ॥
जासों वचन सिद्ध व कहा, ते सब तजि गिरि मारग गहा।

मोहि मया कै एक दिन, श्रवन लाग गहि मार।
गुरमुख वचन सुनाय कै कालि महँ कीन्ह सनाथ ॥ २२ ॥

यह मन मथा मथा जग सारा, जो दृढ़ मथहि सो नर बरियारा।
जौ लहु गुरू न मनहि सिखाव बातनि कछु हाथ नहिं आव ॥
मही माँहि नौ निधि छपाना बिनु गुरु काहू हाथ न आना।
करम बात अब कहा सुनु तोहा जस कछु गुरू सिखाया मोहा ॥
ज्ञान डोरि कह हिया मथानी साँस लेत डोरी लपटानी।
उलटी दृष्टि रहै दुक लाई सजग रहै जहि नतु न जाई ॥
तो लहु मथ थिर दे जीऊ, निसरे छाछ मही तें घीऊ।

निजु सो मथनी एक दिन मथत मथत गा फूटि।
तत्वमसी पुनि तत्व सों, आय नरक सब छूटि ॥ २४ ॥

१—नौका। २—मांगते हैं। याचना करते हैं। ३—दृढ़ता। आराधना।
४—मनोरथ। ५—मार = उद्योग। ६—जी लगा कर। ध्यान देकर।
७—तत्वमसि = वह तू है, यह वेदान्त का महावाक्य है।

गाजीपुर वर्णन ।

गाजीपुर उत्तम अस्थाना देवस्थान आदि जग जाना।
गंगा मिलि जमुना तहँ आई बीच मिली गोमती सुहाई॥
तिरधारा उत्तम तट चीन्हा द्वापर तह देवतन तप कीन्हा।
पुनि कलिजुग महँ बसगित[1] भई जानहु अमरपुरी बसि गई॥
उपर कोट हठ सुरसरी देखत पाप निगा जहँ हरी।
बसहि लोग सुध बहु चिज्ञानी सैयद सेख बसैं गुरु ज्ञानी॥
ज्ञान छाडि मुख आन न भाषा सुने संतोष देखि अभिलाषा।
ज्ञान ध्यान कहँ देवता, सुमर समं पुनि सूर।
तप भइ मौन सभा चतुर अरि मुख सिंह सदूर[2] ॥ २४ ॥
पुनि तहँ लोग बसैं सुखवासी घर बर देखि इँद्रासन भासी।
मोगल पठान बसहिँ पँडवाहे, रन अमट जिन्ह साह सराहे॥
पुनि रजपूत बसहि रन रूरे, और गुनी अन सब गुन पूरे।
भाट कलावत बसैं सुजाना, जिन्ह पिंगल संगीत बखाना॥
गुन चरचा बिनु आन न काजा जा देखो अपने घर राजा।
जहँ तहँ नाच कूद पुनि हाई, ठुमुकत बाट चलैं सब कोई॥
जिन साजे जहिं ठाँव अवासा, सोइ पुहुमी नाहीं कबिलासा[4]।
ताजी तुरकी चढि चलहि जानहु उमरा मार।
सब सुखबास नगर महँ परसन बासी तीर॥ २५॥
हिंदू तुरक सराहों कहा, चारिहु बरन नगर भरि रहा।
ब्राह्मन सब पण्डित औ ज्ञानी चारों वेद बात जिन्ह आनी॥
होम जाप अज्ञान त्रिकाला[5], तजहि न एकौ तिनहुँ कहाला।
खत्री बैस सबे पुनि धनी, नैन न फेरहि देखे अनी॥
सुद्रन्ह घर घर बनिज पसारा, निस दिन करहिँ धरम व्यवहारा।

१—आबादी। २—शार्दूल। ३—नग की एक जाति।
४—कैलास = स्वर्ग। ५—द्विकाल = दोनों काल—प्रात साय।

विविधि बखान ज्ञान कर करहीँ , तरुनि बैठि सब रस उचरहीँ ॥
केलि कोलाहल चहुँ दिसि होई दुख की बात न जाने कोई ।
घर घर नगर बधावरा, गलियन सुगँध बसाइ ।
एक दिस बाजत आव एक दिस बाजत जाइ ॥ २६ ॥

अपने पाँच भाइयोँ का वर्णन ।

कवि उसमान बसे तेहि गाऊँ , सेख हुसेन तनै अग नाऊँ ।
पाँचा भाइ पाचो बुधि हीये , एक इक भाँति सो पाँचा लीये ॥
सेख अजीज पढै लिखि जाना , सागर सील ऊँच कर दाना[1] ।
मानुल्लह विधि मारग गहा , जोग साधि जो मोन होइ रहा ॥
सेख फैजुल्लह पीर[2] अपारा गनै न काहु गहे हथियारा ।
सेख हसन गाएन भल आहा , गुन विद्या कहँ गुनी सगाहा ॥
शील उदधि पुनि सबै सुजाना जो कोउ मिला सोई पै जाना ॥
सुनै नाउ उतसाह चित मिले होइ जिय साँति ।
पाँच भाइ जनु पाँच मिञें[3] , अपनी अपनी भाँति ॥ २७ ॥
आदि हुता विधि माथे लिखा , अच्छर चारि पढे हम सिखा ।
देखत जगत चला सब जाई , एक बचन पै अमर रहाई ।
बचन समान सुधा जग नाहीँ जेहि पाए कवि अमर रहाहीँ ॥
मा जा यह अमिरित सोँ पागे , सोऊ अमर जग भए सभागे ।
मोहूँ चाउ उठा पुनि हीए होउँ अमर यह अमिरित पीए ॥
आपु पिये अब तिनहुँ पिआवै , जिन्हकी कथा सुरस रस गावे ।
भकु कोउ सूर पुरुष ससारा सँवरि बचन दै मोहिँ निस्तारा ॥
पढि गुनि देखा मान कवि, बैठि खोइ ससार ।
और जगत सब थोथरा एक बचन पै सार ॥ २८ ॥

रूप, प्रेम और विरह का वर्णन ।

यह कलि द्रुमावलि[4] गुन भरी , अनबन[5] भाँति बचन फल फरी ।

१—फर बुद्धिमान । २—गुरु । ३—मियाँ = पण्डित । ४—द्रुमावलि = बाग ।
५—अनेक = विविधि

कोऊ तीत कोऊ भा मीठा कोऊ कसाउ कोऊ जनु सीठा ॥
ग्यान रसन[1] सौं सब रस चाखा अंत पाइ मन भा अभिलाषा।
जेहि रस पेम सुफर भल डीठा गादर काँच सुपक भो मीठा ॥
आन मिठास जो नाम कहाई, चाखन पूज कि प्रेम मिठाई।
आदि प्रेम विधिनै उपराजा प्रेमहि लागि जगत सब साजा ॥
आपन रूप दखि सुख पावा अपने हीए प्रेम उपजावा।

प्रेम किरन ससि रूप जेउँ, पानि प्रेम जिमि हेम।
एहि विधि जहँ तहँ आनियहु जहाँ रूप तहँ प्रेम ॥ २९ ॥

जहाँ रूप जग बनिज पसारा आइ प्रेम तहँ कीय ब्योहारा।
जो बिधि रूप मया करि दीही, प्रेम चकोर नैन तिन्ह कीन्ही ॥
दीपक जोति प्रेम उजियारा प्रेम पतग आनि तहँ जारा।
रूप वास भा केतकि केवा[2] प्रेम भौंर भो जिअ परछेवा ॥
मृगावती मुख रूप बसेरा राजकुँवर भयो प्रेम अहेरा।
सिंघल पदुमावति भो रूपा प्रेम कियो है चितउर भूपा ॥
मधुमालति होइ रूप देखावा, प्रेम मनोहर होइ तहँ आवा।

रूप मुकुर जहँ विधि सरयो[4] निरमल एहि ससार।
प्रेम सूर परतर कियो बिरह अगिनि उदगार ॥ ३० ॥

रूप प्रेम मिलि जो सुख पावा दूनहुँ मिलि बिरहा उपजावा।
जहा प्रेम तहँ बिरहा जानहु, बिरह बान जनि लघु करि मानहु ॥
जेहि तन प्रेम आगि सुलगाई, बिरह पान हाइ दे सुलगाई।
प्रेम अँकुर जहँ सिर काढा बिरह नीर सौं दिन दिन बाढा ॥
प्रेम दीप जहँ जोति देखाई बिरह देइ छिन छिन उसकाई।
प्रेम कुमुद जहँ बदन उघारा, बिरह आई तहँ मजन सारा ॥
एहि बिधि प्रेम बिरह एक संगा, एकमते[5] भै मानहुँ रंगा।

१—रसना = नाम। २—कला। ३—जीव देने वाला।
४—रचा सँवारा। ५—सम्मिलित।

रूप प्रेम बिरहा जगत मूल सृष्टि के थम्भ।
हौं तीनहु क भेद कहु कथा करो आरम्भ ॥ ३१ ॥

प्रस्तावना।

कथा एक मैं हिए उपाई कहत मीठ औ सुनत सोहाई।
कहौं बनाय जैस मोहि सूझा जेहि जस सूझ सो तैसे बूझा॥
बालक सुनत कान रस पावा तरुनहु के तन काम बढ़ावा।
बिरिध सुनै मन होई गियाना यह संसार धंधा आना॥
जोगी सुनै जोग पँथ पावा भोगी कहँ सुख भोग बतावा।
इच्छा तरु एक आहि सोहावा, जहि जस इच्छा तैस फल पावा॥
मजुल मुकुर बिमल[1] कर लेखा जो देखै सो आपुहि देखा।
मान रात संसार की कह सुने सब काज।
लागै मीठी सोइ पै आई सोहाती लाज॥ ३२॥

सन सहस्र[1] बाइस[2] जब अह तब हम बचन चारि एक कहे।
कहत करेज लोहू भा पानी सोई आन पीर जिन्ह जानी॥
एक एक बचन माति जनु पोथा, कोऊ हँसा कोऊ सुनि रोवा।
बहुतन्ह सुनि के दुख मन लावा, कै कवि कहि जग दाप नसावा॥
मोरा बुद्धि जहाँ लहु अही जहँ लहु सुझि कथा म कही।
हर हर बचन कहा अति रूखा दूषन कहँ सेराय न दूखा॥
जाकी बुद्धि होइ अधिकाई आन कथा एक कह बनाई।
कवितन्ह आगे दीन होइ बिनति करौं गहि पाय।
अच्छर टूट सँवारहु दोषन लिपहु छपाय॥ ३३॥
यह कलि स्याम रैन जनु आई, सोई पुरुष जो जागि बिहाई[3]।
जागतहूँ पुनि आहि बिचारा, बहुत भाँति जागे संसारा॥
जागै राउ राजसुख करई, सेवक जागि सदा चित धरई।
जागै चोर जो परधन चहा, बिरही जागि बिरहानल दहा॥

१—व्यवहार। रस्म। २—दोष। ३—व्यतीत किया।

जागै ज्वारी खेलत जूआ, काहु एक काहू मन दूआ।
जागहिं सिद्ध ध्यान धरि हीए, जागहिं दुखी दुखमन दीए॥
जागहिं पंडित पढ़त हरिबानी जागहिं बालक कहँ कहानी।
मँ अजान जग बाल सम आन न कछु सोहाय।
कहौं कहानी प्रेम की जेहि निसि जाय बिहाय॥३५॥

(२) कथा खंड।

आदि नगर नैपाल अनूपा, तहाँ राउ धरनीधर भूपा।
धन सो देश धन नगर सोहावा धन राजा जिन आनि बसावा॥
अति बलवंड न आई बखाना, भानु समान चहुँ खंड जाना।
मंडुकधद सब सेवा करहीं सेवा साँझ रैनि दिन हरहीं[१]॥
कटक असूझ[२] अनेक अपारा आव न लेखे सहस हजारा।
देस बहुत कछु अहे न थोरा गनत न आव हस्ति घा घोरा॥
आइ समुंद महँ खड्ग पखारा, अरि न रहा जो नरर सँभारा।
अनधन हम जो लच्छमी सैन अनक अपार।
एक दीप सतति बिना, राजभवन अँधियार॥ ३ ॥
सुन चिता राजा चित माहीं, राज काज मन भावै नाहीं।
दिन एक सबे बुलायो नेगी अज्ञा राज आय चल बेगी॥
सभा ओरि के मत बइठा कहत न मोहिं कछु अस्थिर डीठा।
यह जग जस पानी कर धावा[४], आ कछु गा सो बहुरि न आवा।
काल्हहिं यह तन होइहै छारा, काऊ नाउँ नहिं लेवनहारा॥
बीती रैनि भोर बिगसाना, कागारार आइ नियराना।
को गहि लकुटी पथ देखाइहि, को पिंडा दै पाछु पुराइहि॥
राज पाट धन देस सुख, सुत बिनु कौने काज।
अब सब लेहु राज तुम, लेतु अहौं शिवसाज[५]॥३६॥

१—नितांत है। २—जिसका आर छोर देख न पड़े। ३—अनध।
४—प्रवाह। ५—योग।

मत्रिन कहा सुनहु मति राजा राज पाट तुमही कहँ छाजा।
कौन सुनै अस का मति देई हस्ति क भार क गदहा लेई॥
औ तुम्ह काल्हि लेब सिवसाजू आजुहि हम छाडब यह राजू।
राज करहु प्रतिपालहु परजा, सेवत साइँ कौन तुम बरजा॥
तन सों भोग जाग मन सेती, बात इहै औ बातें जती।
औ यह दरब चहौ तुम्ह छाडा कोन सुफल औ छाडि अगाडा॥
दिन सब करहु राज सुख भोगू रैनि गुपुत साधहु तुम्ह जागू।

जेहि निमित्त धन दीजिये सो कीन्ही सब हालि।
सो ईच्छा विधि आपु निजु, वेगि पुरावे आनि॥ ३७॥

पूत निमित्त धरम अब कीजै धरमसाल कै भोजन दीजै।
दिय[1] बिना कछु काहु न पावा दिया आनि सब इच्छ पुरावा॥
दिया धरे तम करे न जोरा दिया हुतै घर मुसै न चारा।
एहि जग माँह सार यह दीआ जे न दिया ते अमिरथा जीआ॥
दिया हुते निसि आगे सूझा, दिया हुते पर आपन बूझा।
दिया हुते घर पाव सोभा, आइ पतग दीप पर लोभा॥
दीया बाजु मग जाइ न जोवा दिया हाइ ता परे खोरा॥

यह कलि स्याम विभावरी विकट पंथग्रह[2] साथ।
निजु भूले बनमाह सो, जिन न दिया कछु हाथ॥ ३८॥

सुनि कै राजा हिये सँभारा, लाग देइ तब खोलि भँडारा।
जो ईँछा कै मन कोइ आवा दीन्ह वोलाइ बार नहिँ लावा॥
औ जिन अह देश क दुखी, दीन्ह दान सब कीन्हेँ सुखी।
भूखा भोजन कापड माँगा, निसि बासर पावै बिनु माँगा॥
धरमसाल पुनि बार सवाँरा, जहाँ न कोऊ बरजन हारा।
पथी आइ तहाँ सुख पावहिँ भोजन मिलि निसि सोइ गँवावहिँ॥
जती सन्यासी जो कोउ आवे, सुनत नाउँ राजा उठि धावे।

१—उर्दू की प्रति में यह नहीं है। २—बटमार।

अपने[1] नगर बुलाइ के आन पखार पाय।
कर जोरे बिनती करे, आग्या सीस चढ़ाय ॥ ३९ ॥

एहि विधि बरष एक जो बीता रहा न काऊ जग महँ रीता।
कीरति दान चहूँ खंड गई पार समुद के चरचा भई ॥
दान निसान चहूँ खंड बाजा, करन कुबेरु बेलु बलि लाजा।
पुनि कैलास गई यह बाता, चली बात जहँ संकर माता ॥
गिरजी कहा सुनहु हो देवा, के नर कीन्ह ऐस जग सेवा।
धरनीधर नृप यहि संसारा सुन निमित्त सब दीन्ह भँडारा ॥
औ अस करै दान कर साजू चहे तो लेइ इंद्र कर राजू।
चलहु जाय तेहि देखिय कइस सत्त कस धर्म।
सत्त होइ सुत दीजिये नहिँ तो खोइए मर्म ॥ ४० ॥

(३) महादेव राउ।

करि दोऊ तपसी कर भेसू, चले भवानी और महेसू।
धरमसाल धरनी धर फेरा, संध्या आइ कीन्ह तहँ फेरा ॥
सुना राउ आये दुइ तपा[2] धाय आय बहु अस्तुति जपा।
लै जल पहिले पाँव पखारा दोउ कर जोरि बिनति अधारा ॥
जो इछा सो अछा होई, पुरवनहार विधाता सोई।
पूरब पुन्य आजु फल पावा जेहि तुम्हार विधि दरस देखावा ॥
यह सब ताकर जो जग राजा हौं सेवक सेवा कहँ छाजा।
अध धध मै सकल लिखि विधि मोहि दीन्ह अनेग।
जो इछा सो माँगिये, आनि पुरावौं वेग ॥ ४१ ॥
तपन्ह कहा तें धर्म सँगाता[3] सत हरिचन्द दान बलि जीता।
तोहि सरि पुहुमि न राजा दूजा, हम नित करहिँ सम्भु की पूजा ॥

१—अपन कर लोग लिये आप पखारे पाय—पाठा। २—तपस्वी।
३—स्वीकार किया।

महादेव हम परसन आहा पुरवत बगि इछ जो चाहा।
सेवा सुक्रत दख रिसाना पूजा पाती कबहुँ न माना॥
बहुत बिलाप कीन्ह तहि आगे सपने आइ कहा रिस त्यागे।
महि मडल धरनीधर राजा, धर्म रूप बिधि न उपराजा॥
ताकर माथ चढावहु आनी तब परसन भा इस भवानी।

आन हिच्छ¹ नाह दूसरी, देहु कलपि करि सीस।
हम परसन परसाद तुव होहँ भवानी ईस॥ ४२॥

राजा सुक्रत अचक भै रहा सोच गहा कछु उतर न कहा।
पुनि मन महँ अस कीन्ह गयानूँ जोगी जन मागी जिउ दानू॥
सनति आस जाय जिउ दीय धम नसाइ लाभ पुनि कीय।
सुत को जान धाइ किन पाइ, आनि बूझि क सत्य नसाइ॥
सत्य समान पूत जग नाहा, सत सों रहै नाउँ जग माहाँ।
केखि—पूत² एक देस बखाना सत्य पूत चारों खड जाना॥
निहचय सत्य अमर की मूरी प्रगट दखिय हरिचंद पूरी।

आजु पुरावौं इच्छ कह, जग आनै यह भेउ।
आजु देउँ सिर कलपि कै जो जाचा जग देउ॥ ४३॥

तब नृप गाव घाल करगहीं³, आगे आइ बात तब कही।
इहवाँ कलपि देउँ जौ माथा, रकत लुखाइ न मान नाथा॥
चलहु गोसाइँ गाँव गहि डोरी, देवस्थान दिउ जह पूरी।
तहहिं कलपि सिर रकत बहावौं होछा सहित दरस अन्हवावौं॥
मकु परसन होइ इछ भवानी, इछ तुम्हारि पुरावहु आनी।
चल्हु बगि नाहिँ बिलम्बहु देवा होउ सनाथ आजु पद सेवा॥
तब हँसि गिरिजा हरि मुख हेरा कहसि सुमेर सत पहि करा।

पहिक सत्त अस धुव अचल तुम पति सारगपान।
परसन होवहु इछ पहि बगि पुरावहु आन॥ ४४॥

१—इच्छा। २—औरस पुत्र। ३—प्रगह पगहा।

तत्खन परसन भए महेसू परगट कीन्ह सबै निजु भेसू।
सुरसरि सीस कपालिधि माथे फनपति ग्रीव बसह कर नाथे।
चहुँ दिस जुथ्य जटा छहरानी आठहुँ अंग भसम लपटानी।
रुंड माल गल डमरू हाथा औ पुनि सिखर सुता धनि साथा॥
कुस्टी अंग कंठ विष बाढ़ लोचन तीनि दुरदतुचा[3] काढ़े।
लोचन मध्य अगिनि अंगारा, जाहि ते मदन भसम सम जारा॥
आक पात पुनि मुखहिं चबाहीं बाउर जानि धतूरा खाहीं।

सिद्ध पुरुष पहिचानि कै परा पाउ सो राइ।
दयावन्त होइ साल गहि सकर लीन्ह उठाइ॥ ४५॥

हर हँसि कहा सुनहु अब राजा भयो तोर दोउ जग कर काजा।
पुहुमी राज पाट सुख गाता सरग मुकुति तोहि दीन्ह विधाता॥
सत्त तोर जस अचल पहारा सत्त भयो ताहि सुत देनिहारा।
जो विधि यह सब सृष्टि सँवारी, सुखी दुखी जग ईस भिखारी॥
तेहि के देत न थकौ खागा, मैं तोहि लागि पूत अब माँगा।
देखु देत हौं आपन अंसा अब तोरे ह्वैहैं निजु बंसा॥
जोगी अस जो जग मातरई दिन दस साज जोगि कर करई।

पुनि पुत संतति लच्छमी, राज पाट सुख भोग।
अब जिय रहस अनंद कह, जनै मानसि कछु सोग[4]॥ ४६॥

दै असीस तत्खन अस जानी भए अलोप महेस भवानी।
राजा रहा अचक तहँ खरा जैसे पहरु काहू जहँ हरा॥
कहेसि कि निहचै यहि जग माहीं मोहि अस आन अभागा नाहीं।
विधिना नग अमोल हुत दीन्हा दुष्ट हिये मैं रतन न चीन्हा॥
अब जो रतन हाथ कर खोवा, काजौं सम्भु माल पर दीवा[7]?।

१—तत्खण = उसी समय। २—पार्वती। ३—द्विरद त्वच् = हाथी का चर्म।
४—कमी है।५—शोक दुख। ६—रतन। ७—शिव शिव कह माला दुहना व्यर्थ है।

सेवा सभु हिये चैं लागी दीपक ग्यान उठा तब जागी ॥
सकर यह चेटक देखरावा, गुरु दिह हिय ग्यान जतावा।

जैसें भए सनाथ हम, हत जो दो चख नाहि।
रहि मूरख यह आइ जग, ऐसे जानि निबाहि ॥ ४७॥

हिरदै (क) भवन घरी दुइ जारा दीपक ग्यान की ह उजियारा।
पुनि जो माया पौन झकोरा बुझा दीप मिट गया अँजोरा॥
राज पाट घर बार सँभारा, करे लाग जस सपन बिचारा।
जैसे नर मिस्तक के दखे यह ससार न जाने लखे।
हीय सुमन ध्यान धरि रहिय, मुख तज ग्यान आन नहि कहिय॥
जबहीं भोजन पेट समाना, कहाँ के ध्यान कहाँ कर ग्याना।
मानुस सिर ओंधीओपरी, ले कर निकसे तहाँ आ परी॥

पेम हुतासन दीप कर घरी सुबुन्द्ह दै बारि।
जा जग बधे हाइ एहि जोत सकै नहिं टारि ॥ ४८॥

---

(४) जन्म खड।

सिव असीस विधि भयो मयारा, धरनीधर घर सुत औतारा।
निहकलक ससि परगट भयऊ, सगरे कुल अँजोर भे गयऊ।
निसि अँधियार सुर जनु भेंटा निमिष माँहि सब दुख दर मेटा।
भागी राति भयो औतारा, तहनिह रवा मगलाचारा॥
पँडितन्ह बठि नषत करि साखी उदै विचार लगन गनि राखी।
ब्रत पच्छ पुनवसु गुरु वारा मिथुना लगन सभु औतारा।
राजा हिय रहस अस जागा, टूटे बद फाटिगा भागा¹।

(क) यहा से ४८ दोहा तक हिन्दी प्रति में नहा है।

१—भागा।

सुत सुनि राजा मन भयो रोम रोम सनोष।
रानी रहसी[1] देखि मुख भई सँपूरन काष॥ ४९॥

भोर हात आए जानषा पटा गरह कढ़ली लिषी।
मिथुना लगन भसु बीनीसो उदै पुनर्वसु अति सुभ दीसी॥
तिसरे सुजें चद्रमा नर्यें, दुसर बुद्ध सुक्र मॅग हर्यें॥
सनमुख सूर सला पुनि देखा चा र चरन सतभिषा सरखा।
राहु जनम दसर्यें पुनि सनी जिउ[2] एगारएँ आसौं धनी॥
भौम एगरहे पुनि सुख देखा, सम्पति हन बिकट गढ़ लेखा।
राहु कतु दोऊ अपने ऊँचा सील छत्र गए सर्ग पहूँचा॥

मनि माथे हरदै नषन गनि गुनि कीन्ह बखान।
होडा चक्र निचारि कै राखो नाउ सुजान॥ ५०॥

कुम्भ रासि धन नाउ सुहावा, जनम पत्र लिखि बाँचि सुनावा।
आयू सा बरषन्ह अधिकाई बिरध होइ तरवाँ रहुँ पाई॥
पुहमी होइ छत्रपति राजा, पार दान कर बाजन बाजा।
सुदर त्रिया लागि दुख सहई, जोग पथ पुनि दिन दस गहई॥
प्रेम करावे अगम भेसा निरह फिराव देस बिदेसा॥
पर भुइँ जाइ खग पुनि करई छत्री आनि छत्र सिर धरई।
आ जेहि लागि सहे दुख जता, तेन्ह मिलि पुनि मानै सुख तैता॥

तेहि पाछे पुनि जनम भइ सुत सपति सुख देखि।
राज पाट पुहमी अचल, अस कहु लगन बिसेखि॥ ५१॥

छठीं राति बाजन गह गहे, बाजे आ सब गाजन रहे।
पुरपह इद्रसभा जनु सारा तरुनिह गाइ कीह भिनुसारा॥
भीर भए होइ लागि बधाई छत्तिस पौनि दीह पहिराई।
नृप कर कुस पानी जब लीन्हा दछिना सकल बिप्र कहँ दीन्हा॥
गाय सोन मुँदरी नग जरी, पाटबर जरकसा पाँवरी॥

१—आनंदि हुइ। २—बृहस्पति।

भाटन दै तुरग पहिराये भाटिनी पहिरे नीति सुहाये।
भार भिखारी जते आए इच्छा पूरि सबै पहिराए॥

सोन रूप नग गाइ भुइँ पाटबर गज घार।
राजा खोलि भँडार सब, देत न लाग भोर॥ ५२॥

बरहेँ दिन सब कुटुँब जेँवावा घर घरहीँ ते नेवति पठावा।
अमिरित पाच रसोँइ सामी सुननेहि नाउँ भूख तिन भागी॥
देव देस जहि घर न होई, का बरनौ तेहि राज रसोई।
जहि अस भाएउ गाँधा कोरा नेगिहु देत न लागउ भोरा॥
अपने छीर माइ सुत पाया अपने हिय लाइ सनोबा।
निसि दिन हिये लाए सुख लहही चारि नैन मुख लागे रहही॥
प्रथमहिँ जैस पियाइअ छोरा तस भाव पुनि देइ सरीरा।

और न दूध पियाइये पडे छाव[1] सो ततु[2]।
तेहि कारन बुधिवन नर प्यावहिँ छीर सुनतु॥ ५३॥

रहहिँ हितू सब कोरा लीएँ, माथे स्याम चाखँडा दीएँ।
दूध छाडि बेगहि भा ठाढा, दिन दिन लाग करइ जिमि बाढा॥
देखि सबै कोइ पूछे धाई, लागी तोतरि बात सोहाई।
पाँच बरिस का भया कुमारा बुद्धि बचन सब मुख उच्चारा॥
तब विद्याधर पँडित हकारा, आवा अस सुर गुरु मनियारा[5]।
मानिक रतन थार एक भरा राजा गुर के आगे धरा॥
गहि भुज कुअँर पाय तर मेला, कहसि कि तुम गुरु पद तुव चेला।

जहँ लहुँ विद्या तुम्ह पहँ औ जिय भा सनाप।
आपन सुत सम जानि के देत न लाएहु भोप[6]॥ ५४॥

पडित रहसी आसिष दीन्हा अस्या राज परछि सिर लीन्हा।
अस चित लाइ गुरु समुझावा थोरे दिवस गुन हिरदै छावा॥

१—शावक = बालक। २—स्वभाव। ३—खरा। ४—कलभ = हाथी का बच्चा। ५—प्रकाशमान, विद्वान। ६—क्षाम। भ्रम। सकाच।

अमरकोश ब्याकरन बखाना जोग वैद्यकन्हि कै सब आना ॥
पिंगल रघु दारघ दिढनासी, कटहि माँभ छंद चौरासी।
पढी सँगीत ताल देखरावा एक सुर महँ दस राग सुनावा ॥
जोतिष महँ कोइ बाद न आटा एक पल सहस बार कै बाटा।
अस भुगोल बखानि सुनावा पल महँ मनु पुहुमी फिरि आवा ॥

पढि गुनि चौदह बरप लघु दस औ चारि लिधान।
निपुन दुसा दस भाय महँ सब पढि गदु सुजान ॥ ५६ ॥

सश करन पुनि भा बरिआरा थोरहि दिन महँ मल्ल पछारा।
ब्याम[१] करन पुहमा आ हली पीठि न लाइ सकै कोउ बली ॥
फरी दाँड गुन अस ओहि आवा, खेलत पाव पुहुमि नहि नावा।
धनुष बान गह दुसर न कोई सबदबेधि कहिए ▪ सोई ॥
तमकि तुरै[२] जब होइ असवारा अस्तु अस्तु सब कोई पुकारा।
कैसउ कहर तुरै करारा कोरा सूत बाँधि मुह फेरा ॥
अस अहर कह मन चित बाँधा निसिदिन रहहि पारधी[३] राधा[४]।

पहिलें पारधि जाई बन घात करै चहुँ फर।
सपरि कुँअर तब कटक लै खेलै आइ अहेर ॥ ५७ ॥

दिन एक पारधि आय सवेरा, कहेसि कुँअर है घात अहेरा।
सुनतहि कुँअर भयउ असवारा चला कटक पुनि सग खभारा[५] ॥
औ जते गयद पुनि आये, जाते निमने सबै चलाये।
गाडिन्ह गाडिन्ह चीत चले, बहुत सेयाहगोस महँ रले ॥
किये डोर सब सोनहा[६] ताजी, अल अल गुरजी भार सिराजी।
तिन्ह सौं हरिन जाइ कहँ पाव, पौनहुँ चाहि आ आगे धावै ॥
औ सब सग पारधी लीन्ह, जो बघमार सो आगे कीन्हे।

१—ब्यायाम = कसरत। २—तुरग = घोड़ा। ३—शिकार का पता लगाने वाला। ४—आराधा = बुलाया हुआ = हाजिर। ५—अधिक। ६—श्वान = कुत्ता।

कुअर कटक सब जुरि चले जहँ लैउ राउत रान।
सुनि सुनि पुहुमीपति डर कायर राउ रिसान ॥ ५८ ॥

देखि कटक सब सावज डरे, कुसल जानि तेहि ऱगे पन।
भखे भाख रोभ पछताने, विधि हम एहि बन काहे आने ॥
देखि देखि चानन्ह की धारा मानहिं हरिन आपनो हारा ॥
धाइ धाइ जस खेती चरी अब तसही भलि चाकरी ॥
गैंडा सघे भए सत—छाडे नहि निकास तेहि चहले' गाडे।
जूथन्ह खडे जहाँ तहँ हरना भारहिं सीस जानि निजु मरना ॥
बीहनि थठ खरहा लोवा चहुँ दिसि जनुक फिरि फिरि रोवा।

परा सोग सावज घरहिं, काग गीध कर नाच।
कानन परलाे' आजु हे, सावज नाउँ न बाच ॥ ५९ ॥

कुअँर कहा यह कानन साईं जहि कर मरम न जानइ कोई।
हम अस बहुत खेलारी भए, इहवहिं आइ खेलि सब गए ॥
जो कर जियत सिह मुख मेला आइ अहर सो एहि बन खेला।
खले जान होउ सो आगे नाहिं ता आगहु पाछ लागे ॥
अगुरा कहे करहु पै सोइ, खेलि गए पछताव न होइ ॥
अस के घरहु जान न पाव, मारहु सोई घात जहि आव।
बैठहु मूल बान जो मारा। आर तरे जा करहु पुकारा।
आवहि सावज घात अब, मारहु खाँड पछारि' ।
चवरि' जो आगे हे चल, छाडहु सोनहा भारि ॥ ६० ॥

सावज घरि लिए चहुँ ओरी चीता सोनहा दीन्ह छोरी।
चीतन्ह रोभ मृगा बहु मारे, सोनहा बहुत बराह पछारे ॥
चारिहुँ आर बान तब छूटे, गैंडन्ह पीठ फेंकि फूट फूट।
कहुँ महिष लोटहिं बिष मारा, कहुँ रोभ डारहिं खुरधरा' ॥

१—कीच, पंक। २—प्रलय, नाश। ३—प्रचारि कर—ताल कर।
४—शिकारगाह। आखेट स्थल। ५—सात। ६—खुरहर—खुर का चिह्न।

चीनन्ह गोन अनेकन्ह मारे ससा लोम[1] बहु गनत न पार।
बहुत खडग परतीत के साधा, मारँ महिष होइ दुइ आधा॥
कीन्ह अहर कुँअर मन माना पहर एक भा गीध मसाना।

पुनि ते राखे विलग कै, भूजि कटक जत खाइ।
घोर पठाइन्ह नग्र कहँ हस्तिन्ह पाति भराइ॥ ६१॥

पहर (क) बिसार आन कहँ हेरा, लागे खेले पंछि अहेरा।
अस कै जोहँ दिस जाल पसारा पछी नाउँ न निसरै पारा॥
परी परेवा चातक मोरा बाज न तीतर साँवर गोरा।
धरँ बटेर बडे औ छोटे मान बिचार दूबरे मोटे॥
खाबर लावा घरे पर आल माहँ परगट सब धरे।
चैर बगेर कदरू आवा व्याज न छाडै एक न छावा॥
आये सरग जब चरिचरि चारा, यह दिन कठिन न काहु बिचारा।

तब ओ चरे निचिंत होइ, परी सोइ अब काँध।
समुभि हिये रोए सबै छोरि चले गुन गाँध॥ ६२॥

आधे विक्रम दुपहरी बेरा भा अति तेज तेज रवि करा।
बैठे जाइ तपत क छाहीँ, छाने खोल पवन सब खाहीँ॥
सेवकन्ह मास भूँजि के कहा, आपन मीठ मोछ कर गहा।
हँसि हँसि करहिँ अहेर बखाना, नैना हिएँ ■ होवे छाना॥
आपन सुभ न सकी उपराजा[2], कैसेँ आरि आन कर बजा[3]।
कटव आय सभानक माहा मार कों न बिसारा काहीँ।
जा कहँ बधहिँ देहिँ तेहि छाना, आन क जीव आप अस जाना॥

काटहिँ आइ रूख सब, देहिँ अगिन सुलगाइ।
पाय पराई खोपरी, जानहिँ भुस मँ जाइ॥ ६३॥

१—लोमश। (क) यहा से ६५ दोहे तक हिन्दी का प्रति म नहा है।
२—उत्पन करना, सपादन करना। ३—ठीक।

बैठा कुअर सिंह अस गूँजा हाथ जहाँ तहँ होइ मँसभूजा।
भूजहिँ माँस जीभ रस लाहू आपन मास न सूझ काहू॥
भूजत चुअ सरागन पानी राज माँस हि अस जानी।
हम खर खास तिनन जो सोइ पहिलेँ गात सराग पराइ॥
फिरि फिरि जारहि छाडहिँ नाहीँ होइहि कहा माँस जो खाहीँ।
जस हम इन कहँ दारुन आना इनहूँ पर दारुन है आना॥
देखि देखि मारो रन माखे[1] खुली निगाह भइ के आँख।

मास खाइ जल अँचवहि आ चितवहि पुनि ओर।
कहन्ह आज दिन लेख मँह काहि न सूझे ठोर॥ ६४॥

रुखन छाह जो पाएँ सीना पहर एक पुनि नहँनहि बीता।
कहूँ जागि कहुँ सोइ गवावा चोथहि पहर सीनर[2] आवा॥
राज निसानहि डंका लागा सोवन लोग सब सुनि जागा।
कुँअर तुरंग भयो असवारा, कटक चहूँ दिसि परी पुकारा।
जागत अहा सग उठ लागा सोवत पाछेँ परा अभागा॥
हल बल जाहिँ न तुरी थिलाने का होई अब के पछताने।
कोऊ मिले बीच मिल जाई बहुत बाच पुनि पर भुलाइ॥

पथी भोजन पेट भर, छाँह सुहाई पाय।
होइ निचिन्त औ सोए सो पाछ पछताय॥ ६५॥

आधे पथ पहुँचे आई, उठी बाउ आँधी पछुआई।
स्याम घटा आँधी अधिकाइ, भया अँधेर सरग छिति छाई॥
ऊबट बाट जाइ नहिँ बूझा निअरहिँ दूसर जाइ न सूझा।
परी धूरि लोचन मुख माहीँ दुहु कर बदन छिपाए जाहीं॥
तब सब मन गुन भए अवाके, सनमुख तुर नग्र कह हाँक।

१—मि बकरी पाती खात है ताकी काढ़ी खाल।
जो नर बकरी खात है तिनकी कवन हवाल॥ (कबीर)

२—मध्य, बीच। ३—शतपता। ४—शीघ्रगामी।

विधि परसाद कुँअर एक मरा, बाँव पथ तजि दाहिन परा।
अगुआ भयो करम की डाठी, जस कोइ गहे अंध की लाठी॥
लै पहुँचायो कोस दस, जहँ गिरि विषम उजारि।
घरी चार निसि बात पुनि भया नपत उजियार॥ ६६॥

गयो अँधेर दृष्टि भइ आना, कुँअर देवपर्वत पहिचाना।
कहसि कि यह पर्वत अहँ देऊ, नगर लोग सब मानहिँ सेऊ॥
नगर दूरि मैं नियरे गाऊँ थाका तुरु कहाँ अब जाऊँ।
पवत हेठ अहा देवहरा रहौं नहा निसि औ एकसरा॥
कुँअर मढी महँ धस्यो जाई बाँधा तुरु डार तरु लाई।
सग न कोई दुखी चितगहा आई नींद सोई तहँ रहा॥
भूख न माने लावन सेती नींद न माने सौरि[1] सपेती[2]।
नींद न आवै नैन जेहि सेज कुसुम भरि नित।
थेल परे सुपुहुमि महँ, सोव परा निचित॥ ६७॥

(५) देवखंड।

देवहि मन महँ परा विचारा रहौं आजु एहि के रखवारा।
मोरि सरन सोएउ एहि ठाऊँ, औ छति[4] होइ तो कुलहि लजाऊँ॥
इहा गयद सिंह बन माहीं मानुषखवा बहुत पसु आहीं।
भीतर कुँअर नींद चित लागा बाहर देव बार गहि जागा॥
एहि असर जो पहर एक बीता, आवा देव देव कर मीता।
भयो हुलास देखि जिय भारी, दुनहुँ मीन भई अँकवारी॥
कहसि कि बहुत दिवस पर आए, आजु कहा तुम चरन दिखाए।
कहसि कहत बिछुरन कथा सूल उठत सब गात।
और सुनहु चित कान दै एक अपूरब बात॥ ६८॥

१—श्याम = रात्रि। २—सफ़ेदी = दिन। ३—अवसर। ४—छति = हानि।

गाइ गुनिन पुनि राग सुनाए, वरतमान जस कलि महँ आए।
भैरा कोसिक मेघमलारा, हिंडोला दीपक उजियारा॥
सिरीराग रागन्ह कर साईं पुनि तिन्ह की रागिनी सुनाई।
एह मत राग सब काउ जाना, तातें मैं नहिँ कीन्ह बखाना॥
हनुमँत मत जो राग बखाना जे संगीत पन्थ ते जाना।
भैरा पंचम मेघ मलारा, नट गौरा मालवा सुधारा॥
पारबती मत जो कोउ गावा छवो राग एहि भाँति सुनावा।

सिरी राग भैरा कहा को पुनि कहा बसंत।
पंचम मेघमलार पुनि, ~टनारायन मत ॥ ७४ ॥

सिरी राग की रागिनि अहीँ, कहौं बनाइ जो गिरिजा कहीं।
गौरी मधुमाधवी कदारी, तरिवन को मालश्री बिहारी॥
भैरो की रागिनि भैरोई पारबती अपने मन जाई।
रब बंगाली औ गूजरी पुनि गाए बहु ले गुन करी॥
देसी देवगिरी बैराटी, पुनि बसंत कह आ तिम्र बाटी॥
पुनि टोडा हिंडोलहि गाई, भोरहिँ गाई ललित सोहाइ॥
पंचम कहँ बिभास भूपाली बडहीसो करनाटी माली॥

पंचम की पुनि रागिनी, पंचम के सँग गाइ।
मेघ राग की रागिनी, अब सुनु कहौं बनाइ॥ ७ ॥

गंधारी सोरठ मल्लारी, सादेरा पुनि हरिसिंगारा।
तब छहे कोसिकी सोहाई, विविधि भाँति क गुनियन गाई॥
पुनि नटकी रागिनी बखानो, नटिका कामोदी कल्यानी।
नट हम्मीर अहीरी गाइ, सारंगी पुनि गाइ सुनाई॥
तीनि ग्राम गाइनि सुर बरना, ऊडौ खाडो सरल सँपुरना।
खरज रिषब गंधार सोहावा चौथँ सुर मध्यम पुनि गावा॥
पंचम धैवत औ‍र निषाधा सोई गुनी साती सुर साधा।

... एकडमी ...
२०४४
पुस्तकालय
इलाहाबाद

अस कुछु सभा सिगार भा ओ पुनि राग बखान।
इन्द्रहि कहुँ सुनि चपे, सुरपति देखि रुजान ॥ ७६ ॥

नाचहिं पेरिन्ह मन उपराहीं गहँ पान जनु अंतरिख जाहीं।
जहि गति चलहिं तेहि मन[1] हरहीं, मानहुँ पाइ पुहुमि नहिं धरहीं ॥
नैनन्ह रूप श्रवन धुनि रागा सबको मन पायन्ह रह लागा।
पाय लागि मन रहे न पावे दै दै ताल पाय भहरावै ॥
सगर रैन रहस सुख लीन्हा अगनित दान मोतिनग दीन्हा।
उकसा[2] नाच भयो भिनुसारा भया दिवस सब भा जेवनारा ॥
जवन अधिक अबूझ रसाई पर आपन जनै सब कोई।

जेस रात बाती सभा, आजु तस पुनि साज।
मैं आयउँ तोहि लेन कहँ, चलहु छाड़ि सब काज ॥ ७७ ॥

तहाँ मात एक प्रान पियारा आनन भार यहि ससारा।
मातहि होई मात की चिंता, चारि भाँति उन कहिय मिता ॥
नैन मीत एक जग आया नैन देखि के मीत कहावा।
मुख फेरत भा और लेखा, गयो भूलि जनु सपना देखा ॥
इच्छा मीत होइ एक दूजा, ता लहु मीत इच्छ जब पूजा।
होछा पूजी गई मिताई बहुरि बार नहिं झाँके आई ॥
थैन मात धन रस रसा, थैनहि लागि रहै मन बसा।

प्रान मात यहि कहिन है, पर न सकै निरवाहि।
सो दुख आने आप जिय, जा महँ सुख हो ताहि ॥ ७८ ॥

मैं निसि तहा बहुत सुख पावा, कहौ कहा कछु कहत न आवा।
अब जो तोहि होइ सुख देखें, मोरे सुख आवे तब लेखें ॥
उठु चलु बेगि होत है बारा रूप नगर बहु सुख देनिहारा।
सुनि यह कथा देव अकुलाना जनु हिय लागु प्रेम कर बाना ॥

१—छाछा, दूध का प्रधान गधान। २—मान = मर्यादा, वश। ३—उदय हुआ, छिपा।

कहसि कि सुनु ए मित पियारे दुखी प्रान कहँ सुख देनिहारे ।
सुनि अमिरित यह बात अनूपा मन लागेउ चित्रावलि रूपा ॥
पै एक लाज काज हौं गहा उठि नहिं सकौं अचक मन रहा ।

महाराज नेपाल पति, धरनीधर जग जान ।
तेहि कर सुत कुलदीप इक सूर सुबुद्धि सुजान ॥ ७९ ॥

सो पुनि उहै एक सुत आवा, सोइ बहु सेवा के जेहि पावा ।
बहुत पुन्य औ बहु तप कीन्हा, महादेव परसन होय दीन्हा ॥
आजु सो एहि बन करन अहेरा, परा भूलि जब भया अँधेरा ।
एकसर आइ मढ़ी महँ सोवा ढूँढत फिरहिं रतन जनु खोवा ॥
एक (क) एकसरि औ रैनि अँधारी, हौं तेहि बैठि अहौं रखवारी ॥
एहि बन बहुत अनु सुख खोधा, औ त्रिग खाँहि जो मानुष छावा[१] ॥
तेहि कारन तजि सकौं न ठाऊँ जनि नसाइ धरनीधर नाऊँ ।

मात पिता दोऊ मरहिं, सुनि कलप सब कोइ ।
हम तन पुनि हत्या चढ़े, जेहि के सरन सो सोइ ॥ ८० ॥

बोला मित्र बचन सुनु मोरा, इह सस जिय मानहु थोरा ।
एहि पुनि तहाँ संग लै जाहीं, अस लै चलहिं जो जानै नाहीं ॥
चित्रावलि की है चितसारी बारी माँहि विचित्र सवारी ।
एहि लै जाइ सो राखब तहाँ, हम तें देखब कौतुक उहाँ ॥
देखि कुँअरि औ देखि अखारा, लै आउब होतहि भिनुसारा ।
सुनि मन रहसा देव सयाना जनु तम गए कँवल बिगसाना ॥
सोवत कुँअरहि लीन्ह उठाई निमिष माँह तहँ पहुँचे जाइ ।

चित्र सार मँह कुँअर तजि जहाँ न दूसर कोइ ।
आपु सिधार नगर महँ (ख), जहा सो कौतुक होइ ॥ ८१ ॥

(क) यह अकसर औ निसि अँधियारी—पाठ ।

१—शावक = बच्चा ।

(ख) कहू—पाठ ।

(६) चित्रदर्शन खंड ।

वे भूले तेहि कौतुक जाइ, इहाँ कुँअर जागा अँगिराई ।
नैन उघारि देखि चितसारी रहा अचक उठि बैठ सँभारी ॥
देखा मँदिर एक बहु भाँती चित्र सँवार पाँतिन्ह पाँती ।
कनक खंभ औ कनक कवारा लागे रतन करहिं उँजियारा ॥
ऊपर छात अनूप सँवार करि कटाव सब कंचन ढारे ।
कीन्ह उरेह सूर ससि जाती और नखत सब मानिक माती ॥
हठ अपूरब डासन डासा, जहँ तहँ आउ सुगँध की बासा ॥

भयो कुँअर चित अचक[1] एक, मनहीं माँहि गुनाउ[2] ।
काकर लोन मँदिर यह कौ मोहि को लै आउ ॥ ८२ ॥

बहुरि कुँअर जो पाछे देखा अपुरुब रूप चित्र एक पेखा ।
जानि सजीउ जीउ भरमाना, भया ठाढ़ उठि कुँअर सुजाना ॥
देखि रूप मुख परचै खरा, बिधि यह चुरइल के अपछरा ।
किए सिंगार संग नहिं कोई, धरे भेष भावन है सोई ॥
अंग न होइ मानुष अस रूपा, को पाव अस रूप सरूपा ।
निहचै अहाँ सरग पर आवा, सुरकन्या औ विधि मेरावा ॥
निहचै एह सुरपति अपछरा, देखत और चित्त जिन हरा ।

हो तो मंडप दुज क, सोवा अहा सुभाउँ ।
होइ परसन कोउ देवता लै आवा एहि ठाउँ ॥ ८३ ॥

भया भाग्य मम दाहिन आजू जेहि बिधि दीन्ह आनि यह साजू ।
क यहि जनम पुन्य कछु कीन्हा तेहि परसाद दरस इन्ह दीन्हा ॥
कै बेनी सिर करवट सारा कै कासी तन तप महँ जारा ।
कै मथुरा बसि हरि जस गावा, ताहि पुन्य यह दरसन पावा ॥

१—अचम्भा । २—शोच । चिन्ता । ३—चकित हुआ ।

कै काहु की इछा पूरी, बल बैसाउ[1] कीन्ह दुख दूरी।
कै सुदिष्ट अपने बिधि देखा आनि देख वर रूप सुरेखा॥
सुनत अहा कबिलास सोहावा, (क)सो बिधि मोहिं आन देखरावा।

मन रहसहि चितै चितहि रहा मौन होइ भूप।
रसना भरम न बोलई लोयन[2] भूले रूप॥ ८८॥

छिन एक गुनि मन महँ बहु भाखा पुनि ढाढस कै आगें आवा।
नियरे होइ जो बदन निहारा रह निहारि मीन जिमि तारा॥
अब जानेसि यह चित्र अनूपा हरयो चित्र लखि बदन सरूपा।
नैन लगाय रहउ मुख बौरा[3] चित्र चाँद भा कुँअर चकोरा।
सुधि बिसरी बुधि रही न हीये, गा बौराइ प्रेम मद पीये॥
कबहुँ सीस पाइ तर धरही, कबहुँ ठाढ होइ बिनती करई।
कबहुँ चाहै अचल गहा, हाथ न आव अचक मन रहा॥

कबहुँ परे अचेत भुइँ कबहुँ होइ सचेत।
रूप अपार हिएँ समुझि, मुख जोख करि हेत॥ ८५॥

निरखत जोति नैन जौ पाई परी डीठ आला पर जाई।
देखा आहि लिखे कर साजू जाते होइ चित्र कर काजू॥
साँवर अरुन पीत औ हरा, जो रँग चाहिय सो सब धरा।
कहसि बिचारि बूझि मन माहीं, काल्हि आजु अस होइ कि नाहीं॥
आपन चित्र लिखौं एहि ठाऊँ, मुकुरहिं जाति जोति कछु पाऊँ।
आपनि जोति सूर उँजियारा, सूर कि जोति चंद मनियारा॥
हिएँ बिचारि चित्र तब लिखा, वहि क चरन तर आपन सिखा।

साजि सो मूरति आपनी ले सब रँग वहि केर।
कै सुजान सो जानई कै सुजान यह फेर॥ ८६॥

१—व्यवसाय। (क) सुर कन्या भौ दीख मराथा—पाठा। २—लोचन। आख। ३—बउरा। गूँगा।

चित्र लिखा पूत्री पुनि घरी निद्रा आइ कुँअर चखु भरी।
कुँअरक चाहन पलक न लावा बरबस बैरिन नींद सोआवा॥
इहे नींद आसौं धन खोवा इहै नींद जो करै बिछोवा।
इहै नींद मगु चलै न देई इहे नींद सरबस हरि लेई॥
इहै नींद जेहिं नैन समानो, पलकन्ह भीतर दृष्टि समानी।
जो जग माहँ नींद बस होई, रहै बीच मग सरबस खोई॥
जे यहि नींद आपु बस कीन्हे इहै नींद तेहि नौ निधि दीन्हें।

मान गवाए सोई सब, जो सपति हुति साथ।
अजहू जागु न घर बसे, भकुरे है कछु हाथ॥ ८७॥

देखन्ह कौतुक अति जिय भाया, चित्रिनि दरस अमर भइ काया।
होत भोर अदित परगासा, उठी सभा औ नाँच उडासा।
चित्रावलि कहँ निद्रा आई, ले पलग पर सखिन सोआई॥
औ जहँ तहँ सब सोवन लागीं सगरी रैनि अही सुख जागीं।
देवन्ह कहा होत है बारा चित्रसारि जनु कोऊ उधारा॥
चलहु कुँअर लै चलहि सवेरा, मगु कोइ आइ मढी मँह हेरा।
एहि न पाउ औ तुरै जो पावा, जानइ कुँअर जनु कोउ खाया॥

जन पुरजन माता पिता, अहँ लहु हित सुनि पाउ।
मरिहाहँ छाती फाटि सब तब कछु हाथ न आउ॥ ८८॥

पुनि देउ एक सग चितसारी आइ उघारेन्हि पौरि क बारी।
सोवत कुँअर आन तहँ पावा, लीन्ह उठाइ बार नहिँ लावा॥
निमिष माँह लै मढी उतारा, गए छाडि सोवत दुख मारा।
सूरुज किरन जब कुँअरहि लागी, करवट लेत उठा तब जागी॥
देखै कहा चहूँ दिसि हेरी भई आनि रचना बिधि केरी।

१—मूढ़, अज्ञानी।

ना वह(क)मँदिर नहिँ कबिलासु, ना वह चित्र न वह सुख वासू ॥
सपन जान चित उठा मरोहू¹, औटि करज पानि भा लोहू।

पुनि जो निहारे आपु तन, चिन्ह आह सो सग।
वस्तर औ कर पर वही, लिखत लाग जो रग ॥ ८९ ॥

षन एक कुँअर अचक मन रहा, कौतुक सपना जाइ न कहा।
पुनि जो बिरह लहरि तन आई, थोभि न(ख) सकेउ गिरेउ मुरझाई ॥
दोउ नेनन जनु समुँद अपारा, उमँडि चले राखै का पारा।
फारै भँगा औ लोटे परा वधुन कोऊ हाथ को धरा ॥
भरि गै खेह सीस औ देहा सेवक नाहिँ जो झारै खेहा।
सग न कोऊ हितू पियारा, को उठाइ बैठाइ सँभारा ॥
षिन चेतै षिन होइ बेसभारा², घरी घरी सिर भुइँ दइ मारा।

बिरह दहनि कोउ किमि कहै, रसना कहि जरि जाइ।
सोइ हिय माँहिँ सँभारै जहि तन लागै आइ ॥ ९० ॥

कटक जो आइ नगर नियराना, देखिन्ह सग न कुँअर सुजाना।
यह यो कहँ वह यो कहँ पूँछा कटक जानु बिनु जिउ तन छूँछा ॥
सब मिलि कहा कुँअर जो नाहीँ, राजा पास काह ल जाहीँ।
पूछत उतर देब हम काहा, छूँछ लजाइ रहब मुँह चाहा ॥
जहिँ बिनु तब जाइहि मुँह गोवा कसन अबहिँ जो खोजिअ खोवा।
सोवत जानु सबै सुनि जागे आपु आपु कहँ ढूँढन लागे ॥
जल जल थल थल मेह पहारा एक एक तरु तर सा सा बारा।

स्याम रन बिनु पथ पुनि, अगुवा सग न कोइ।
दूरि दूरि सब धावहिँ नियर जाहिँ नहि कोइ ॥ ९१ ॥

(क) यह मदिर ना वह कैलासू—पाठा । (ख) कम्पत गिरेउ भूमि मुरझाय—पाठा ।

१—मरोर = मसोस। २—सभारहीन = बेहोश।

३—फा गायाई = वाचालता।

खोजत खोजि कटक सब हारा बीती रैनि भयो भिनुसारा।
सूरज उदै पथ तब सूझा, भयो दिवस पर आपन बूझा॥
बाजी चरन खोज पुनि पाए खोजत खोज मढ़ी महँ आए।
देखाहँ कुँअर परा बिकरारा हाथ पाँव सिर कछु न सँभारा॥
ऊभ[1] उसास लेइ धै रावा, देखत सैन प्रान जुन खोवा।
खेह भारि ले बैसे फारा, रोव कटक देखि मुख भोरा॥
पूछे बातन उतर न देई छिन छिन ऊभ साँस पै लेई।

अरुन बदन पिराइ गा, रुहिर[2] सूखि गा गात।
रहा भापि लोयन दोऊ, कहै न पूछे बात॥ ९२॥

कोऊ कहै मृगी एहि आई, होइ अचेत परा मुरछाई।
कोउ कह डसा साप एहि मढा, सूरज उदै लहरि है चढी॥
कोउ कहे अहा राति का भूखा, नाँवरि आइ रुहिर तन सूखा।
काउ कह रैनि रहा एकसरा, कै दानौ कै चुरइलि छरा[3]॥
इहवाँ घरी बिलँब भल नाहीं, बेगहि हाडु नगर लै जाहीं।
तत्षन राज सुखासन आना लै धौंडाए कुँअर सुजाना॥
नाउँ सुखासन लै दुखवाहा, बिरह क जरा दून कै डाहा।

जाइ सुखासन आसुभा, बाजु गीत या नाद।
चला पाछु सब आवे, कटक भरा बिसमाद[4]॥ ९३॥

केऊ कहा जाइ जहँ राजा कुअँर आव कछु औरै साजा।
सगन सुनिय गीत औ दाना सिगरी कटक देखि बिसमाना[5]॥
सुनि औगुन राजा उठि धावा व्याकुल हाइ भुइँ पाव न लावा।
रानी सुनि सिर परी बिजागी[6], सुनतहि जरी कोष की आगी॥
आई धाइ कुअँर जहाँ आवा, रोइ सुखासन लेइ कँठ लावा।

१—ऊभ = ऊचा। २—रुधिर = रक्त। ३—छला = आवश किया।
४—विस्मय। ५—विस्मित हुआ। ६—वियोग।

देख पीन तन मुख पियराना राजा रानी तजहिं पराना ॥
रुठ लगावहिं पूँछहिं बाता उतर न देइ बिरह मद माता ।

पुनि तै पूँछा वोलि कै जे सँग हुत सयान ।
जहँवा कुँअर बिछुरि मिला तिन्ह सब कीन्ह बखान ॥ ९४ ॥

राजमँदिर महँ कुँअर उतारा जानहु आनि अगिन महँ डारा ॥
कल न परै पल अति बिकरारा, हाथ पाँव सिर दै दै मारा ।
राजै ततखन जन दौराए वद सयान[1] गुनी ले आए ॥
गहहिं नाडिका[2] बूझहिं पीरा नारि माँह निरदाय सरीरा ।
ससि सूरज दोऊ निरदोषी अपुने अपुने घर सतोषी ॥
अब नाडिका माँह नहिं पीरा प्रगट पियर मुख पीन सरीरा ।
कहि न आव हम हियँ बिचारा ई अस बिरह घाउ कर मारा ॥

पीर सोई जो नहाँ कछु ओषद मूरि उपाय ।
एहि कर हितू जो हाइ कोइ सो पूछे फुसिलाय ॥ ९५ ॥

उठि अकुलाइ मात दुख भरी, कुँअँर पास आई एकसरी ।
सीस लाइ क वैठी कोरा पूछै बात देखि मुख धारा ॥
नैन उघारु पूत कहु पीरा केहि कारन भा पीन सरीरा ।
काहे पीन भयो मुख राता कहहु बात बलिहारी माता ॥
(क) तहाँ एक दिनमनि कुलकरा, नैन मूँदि कस करहि अँधेरा ।
हम सब घट[3] तुइ जीव सनेही कस कुँभिलाइ देसि दुख देही ।
पूत पीर कहु कस जिउ तोरा नैन खोलु करु जगत अँजारा ॥

तोरे पीर कि औषद, जौ एहि जग महँ होइ ।
अर्थ द्रव्य जिउ दइ के वेगि मँगावो सोइ ॥ ९६ ॥

१—प्रतविद्या जाननेवाला । २—ना-ा ।

(क) तहाँ दाप एक कुल करा—पाठा ।

३—होते हुए ।

कहु जो उपजी बिथा सरीरा, करा सोई जेहि नेवरइ पीरा।
जो है मही देव कर भाऊ[1], लै पूजा सो देव मनाऊ[2]॥
जो काहु के दरसन भूख माँगी होइ दुनों कर फूला।
ग्रौर जो मन कछु हाछा होई कहु सो बेगि लै पुरवों सोई॥
दुहु जग माँह तुहीं एक आसा आस तारि(क) का करसि निरासा।
को काटै इह दुख दिन राती अबहीं मरब फाटि मैं छाती॥
सुनि कै कुँअर मातु कै बोला ऊभि साँस लीन मुख खोला।

माना पीर सो ऊपजी, ताहि न मूरि उपाइ।
लोयन अटक तहाँ पै मन न सकै जहँ जाइ॥ ९७॥

कहि कै कुँअर मोन मैं रहा लोयन दुहु गिरे जल बहा।
बहुत पूँछि रानी जब हारी कहि न बात नहिं पलक उघारी॥
पहि महँ बिरह लहरि पुनि आई (ख) थाँभि न सका परा मुरछाई।
धाह मेलि तब रानी रोई सुनत लोग धावा सब कोई॥
राजा रोवे डारि सिर पागा जन परिजन सब रोवइ लागा।
राज मँदिर कर सुनत अँदोरा[3] घर घर परा नगर मह रोरा॥
जो जैसहि तसहि उठि धावा हाथ हाथ लै कुँअर उठावा।

कोइ मलै पानी मुख, कोऊ मूँदै नाक।
मेटे कैसेहु नहिं मिटे, माथ लिखा जो आँक॥ ९८॥

बिद्याधर गुरु पंडित महा, तेहि कुल सुमति पूत एक अहा।
माउ सुबुद्धि सकल गुन जाना पढा पाठ सँग कुँअर सुजाना॥
बिद्या जानु जहाँ लगि गुनी नाटक चेटक आखर धनी॥
मानत हत कुँअर तेहि सेती कहत सुनत जिय बातैं जेती।
सुनि कै बिथा कुँअर पहँ आवा, कुँअर अचेत आइ तहँ पावा॥

१—मनोनीत है। २—अनुकूल कर। ३—आंदोलन हल्ला।

(क) आस तारि जन करसि निरासा—पाठा०।

(ख) कंपित भूमि परा मुरछाई—पाठा०।

नारी देखि बिचारेसि पीरा, दोष न पाइस कुअँर सरीरा।
बदन पियर लोचन न उघारा निहचे कहसि बिरह कर मारा॥

प्रेय मत्र नाला सुबुधि श्रवनन लागि पुकारि।
सावन जागा कुअँर पुनि देखिसि पलक उघारि॥ ९९॥

सब एकसर भे पूछसि बाना कहहु कहाँ कासौं मन राता।
कौन रूप तुम देखा जाई दुखत जाहि पर मुरझाई॥
मैं तोर हितू आन सब कोई कोन बात तुम मोसों गोई[1]।
श्रा मैं गुन आकरषन पढ़ा स्वर्ग बसें सोऊ कर चढ़ा॥
नाउँ ठाउँ जाकर औ होई, करि उपाउ पुनि आनउँ सोई।
जो तुम्ह काज आज नाहँ आवाँ, बुधि निया सब कुलहि लजावाँ॥
प्रेम पहार स्वर्ग ते ऊँचा, बिनु रघ[2] काउ तहँ न पहूँचा।

कहु सो बान अब जीउ की, बगहि करौं उपाइ।
ना तो बैर कुअँर निज, सब मरिहैं बोराइ॥ १००॥

सुनि सुनि मन सब बान बिचारी रोइ रोइ कहन कथा अनुसारी।
जैसें खेले गए अहेरा आँधि आइ औ भया अँधेरा॥
औ जैसे सब चले पराई परयो आपु जस एकसर जाई।
औ जैसें बीती सो आँगी सोवा मढ़ा तुर तरु बाँगी॥
औ जैसें वह सपना देखा, अपुरब रूप चित्र जस पेखा।
औ जैसें मनगा बउराई, दिष्टि परत चित लीन्ह चोराई॥
आपन चित्र लिखा रँग लागा, सोवत मढ़ी माह जस जागा।

जैसें देखा सपन सब, सामुह[3] पाए चीन्ह।
कुँअर कहा सब सुबुधि सों जस कौतुक बिधि कीन्ह॥ १०१॥

कहा कहौं कछु कही न जाई हिय सँरन बुधि जाइ हराई।
कहन न बनै जो कछु मैं देखा गूँग क सपन भयो मोर लेखा॥

१—छिपाता है। २—आश्रय लिये। सहारा लिये। ३—सम्मुख।
४—मि गूँग का सपना भयो समुझि समुझि पछताइ।

नाउँ न जानौं पूछौं काही पटतर नाहिँ देखावौं जाही।
देस न जानौं केहि दिसि आही पथ न जानौं पूछौं काहा॥
मन चहुँ दिसि धावै बैरागा[1] फिरि आवै बोहित[2] ज्यों कागा।
करहु उपाय करे जो पारहु नाहि ता कहा मुए कहँ मारहु॥
गहिर सिंधु जाइ जिउ खोवा अब मँ हाथ आपु सो धोवा।
मोहिँ जियत नहिँ सूझइ पुनि वह रूप मिलाउ।
मुएँ कबहुँ सुरभौन मँह हाथ आउ ता आउ॥ १०२॥

जबहिँ कुँवर यह बात सुनाई सुधुधि बुद्धि सब गई हराई।
परेउ आइ मन तेहि अवगाहा तीर न देखि पाव नहिँ थाहा॥
कछु बिचार हिए नहि आव कुअँर पीर जेहि आपद जावै।
कहेसि कुँअर यह पथ दुहला[3] निराधार खेलैँ तिन्ह खेला॥
कहसि उपाइ एक मति मारी मू दिय गैार बाट बहुँ ओरी।
जहवाँ सोइ सपन अस दीसा ओहि ठाँव हनहुँ पुनि सीला॥
मकु[4] बिधि सोवन कर्म लगावे, बहुरि सोई सपना सो पावै।
लेहु कुअँर उपदेस यह चतहु चेत सँभारि।
आन पथ नाहिँ दूसरा दीख न हिएँ बिचार॥ १०३॥

(७) मढी खड।

सुनि कै कुँअर पथ पहिचाना, हिएँ बिचारि सुमति मन माना।
हुत जा निरास आस कछु पाई बूडत कहँ जनु थाह बनाई॥
राजा रानी दोउ हकराए, सुनि सुखेत रहसत दोउ आए।
कुँअर ठाढ भा दोउ कर जोरी, मात पिता बिनती एक मोरी॥
अग्या देहु हिए मति चढी, दिन दस रहौं देव की मढी।
जाकर आइ जहाँ कछु खोवा, जहवाँ खोउ तहाँ पै जोवा॥
ढूँढौं जाइ सुबुधि लै साथा, मगु ढूँढत आवै कछु हाथा।

१—उचटा हुआ। २—नाव। ३—कठिन।
४—कदाचित्।

अस्या देहु ता दिवस दस, रहों मढी महँ जाइ।
हम तन पीर सो ऊपनी, जाहि न आन उपाइ ॥ १०४ ॥

राजै कहा जहाँ सुख होई, रहहु (क) जाई तुम्ह बरज न कोई।
रहिह कटक पुनि तुम्ह सँग जाई, उहँहि देव मै नगर बसाई ॥
अर्थ दव जत लागै लावहु, तुम्ह सुबुद्धि सँग जिउ बहलावहु।
थगि बोलाइ चहुँ दिस केरा, थवई खाती गुनी चितेरा ॥
दीन्ह अनेक कनक औ रूपा होइ लाग तहँ मँदिर अनूपा।
मारुतसुत सम लाग कहारा रहसत आवहि लिए पहारा ॥
खँड उपर खँड होई खनानो[1] कै गच ढारहिं कँचन पानी।

खँड उपर पुनि खँड करहि, जहँ तहँ गुपुत चढाउ।
बाहर भीतर दुहुँ दिसि, होइ अनेक कटाउ ॥ १०५ ॥

बाहर चहुँ दिस कोट बिराजा, भीतर सब नौ मदिल साजा।
देवमढी पुनि फेरि बनाई हीरा फटिक[2] लगाइ उँचाई ॥
ईंगुर पीसि साजि जनु सोना कीन्ह कटाउ चित्र बहु लोना।
लिखि लिखि चित्र बिचित्र सिँगारा जनु पुहुमीक बिलास उतारा ॥
सुरपुर सुर गन नहि अब लेखे, पुहुमी साध[3] होइ तेहि देखे।
मढी सँवारि[4] देव औ आवा, मढा न पावा चहुँदिस धाया ॥
धावत फिरै न पाव थाला, बिधि यह पुहुमी के कविलासा।

भूलि सुदामा ज्यों फिरै, न हँसी आव न रोइ।
भटकत फिरै बहु दिसि, गई मढैया खोइ ॥ १०६ ॥

कुँअर सुबुद्धि दोऊ एक साथा, आइ देव कहँ नाइन्हि माथा।
ले जल पानि देव कहँ पूजा चित्र ध्यान चित आन न दूजा ॥
विनती कीन्ह सुनाइन्ह सेवा, होहु दयाल बहुरि हो देवा।
जो मनसा चित पुरवहु आनी, कलस चढावों बारह पानी[5] ॥

(क) रहहु तहा कछु हरज न का०—पाठा । १—तय्यारी। २—स्फटिक।
३—इच्छा, अभिलाषा। ४—स्मरण कर के। ५—बारह बरस का सूअर।

कै विलाप सोवा तेहि ठाऊँ सँवरै रूप न जानै नाऊँ।
बरबस नैन झाँपि आ सोवा बिरह जगाव त्यों त्यों रोवा॥
बिरह अगिन बस जेहि तन माहीं भूख पियास नींद तेहि नाहीं।
हियरें भीतर दुख बसे नैनन मूरति सोइ।
नैन नींद तब आवई, ठौर कहँहुँ जो होइ॥ १०७॥

दिन दस जौ बीते एहि भाँती कुअँर जीउ पावै नहि साँती[1]।
बिरहा अगिन अधिक उदगरी प्रगट होइ मढी सब जरी॥
मढी जरि जानहु धै जोरी, चित्र अँगार भए जरि हारी।
देव देखि नैनन नहि भावा मानहु सिंघ होइ खाहै खावा॥
मँदिर भीति जनु दै उदगारा कनक अगिन नग भये अँगारा।
बसन सोहाइ न भग जो आहा जिय तजि देह चलै जनु चाहा॥
उमडे नैन आँसु तस तूटे, भादौं मघा धार जनु छूटे।
कहसि सुबुध चेतहु न चित इहो गई अब आस।
नींद न नैनन आवई, सपनेहु भयो निरास॥ १०८॥

बूड अहों समुँद मँझ नीरा, नाउ न खेवा थाह न तीरा।
निग्रर न कोई माया मोही, बूडत धरि भुज काढे मोंही॥
दानव बिरह आइ जो लीला, रहा गाढ होइ देह न ढीला।
कोउ नाहीं अस बधौ मोपा, होइ हनुवँत जमकातर तौपा॥
गयो चित्र नैनन्ह ते धोई जस दसरथ सुत सीय बिछोही।
को सेवक हनिवत[2] समाना बल बीसाइ[3] थाहि को आना॥
कासों कहीं बिथा जिउ रोई, औषद पीर न आनै कोई।
रैनि अँधेरी अगम अति, अगुवा नाहीं संग।
पथ अकेला बापुरा किमि कर पावै भग[4]॥ १०९॥

(८) धरमसाल खंड।

सुनि कै सुबुधि साँस उर काढा, कुअँर कि पीर पीर जिय बाढी।

१—शान्ति। २—हनुमन्त। ३—लगा क। ४—भेद। पता।

करी ग्यान जिय रचा उपाई कहेसि कुँअर सुनु बात(क) सोहाई॥
गिरिवर प्रेम विकट अति ऊँचा धाइ चढा सो तहाँ पहूँचा।
धीरज धरि जो लेइ पथ हरी, चढ जाइ जहँ शृंग सुमरी॥
सपने चित्र जहाँ देखि आप सौंमुख सब चान्ह तहँ पाए।
अहे चित्र सो पहि जग माहाँ, अलि जिय जानसि जौ कछु नाहाँ॥
जानें जति सन्यासी कोई जा जग माँह फिरा बहु होई।

धरम साल एक बार के, जोगिन्ह बैठि ज वाउ।
पूँछहु बात जगत की जो काउ चाह सुनाउ॥ ११०॥

सुनि मति कुँअर प ज कहँ पाजा स्वाति पानि चातिक मन लावा।
धरम साल एक बार सँवारा जन सहस्र राखे रखवारा॥
चारिहुँ दिसा भोर उठि धावहिँ, जोगी जती ढूँढि लै आवहि।
धोलाहँ मया देखावहिँ सेवा लुबधे फिरहि भौंर अस कवा॥
पाउँ पखारहिँ ढारहिँ पानी कहहिँ बचन सब अमिरित बानी।
पहिले आनि जवावहिँ भोजा, पाछे करहि देस कर खाजा॥
कहहिँ कथा जो जो कछु आनें भाँति भाँति पुनि इस बखानें।

चित्र बात कछु पूछही, कहै जो देखा होइ।
सुनि सुनि बात सुहीय मह पटतर लावे सोइ॥ १११॥

✓ दुहुँ अग जाकी उपमा नाहीँ रे मन सोइ बसै तोहि माहीँ।
का ढूँढहिँ जहँ तहाँ उदासा मृग ज्यों तृन तृन ढूँढत वासा॥
जब कीरान नाभी कटि लेई मृग पछनाइ तहाँ जिउ देई,
मृगमद माह बास ज्यों रहई, त्यों घट माँह निरजन अहई॥
तैं अजहीं घट आप न साधत, जब लौं जम बाधा नहि बाधत।
ग्यान ब्रत घट माहँ थिराई, निरमल रूप निहारहु जाई॥
धरम पथ छाडौ जनि काई, धरमहि सिद्धि परापित[1] होई।

(क) हमारी—पाठा। 1—प्राप्त।

मान इहा जो धरम पंथ, डोरि लावै राउ।
रूप नगर अब जाइ कै चित्रावलिहिं जगाउ ॥ ११२ ॥

(६) चित्रावली जागरण खंड।

चित्रावलि चषु नींद जा लागी, दिनकर उगा तबहु नहिं जागी।
कौंल न खिला अली अकुलानी भा बिहान कुमुदिनि कुँभिलानी ॥
सखी बेग आ दरस न देखा, आपन जनम अकारथ लेखा।
जनी चार जिन्ह बिरह निआवा, आईं तहाँ कौंल जहँ सोवा ॥
जिन्ह सौं हत रहा अधिकाई, तिन गहि पावँ पलोट जगाई।
नैन उघारि नारि अँभुआनी दोऊ भुज पसारि अँगिरानी ॥
बदन सरूप देखि जग मोहा जनु मयंक पारस मधि[1] सोहा।
छूटहिं अलकावलि बदन, भौंहैं चढ़ी कमान।
आल रापि कुसमेखु[2] जनु मारन चाहति प्रान ॥ ११३ ॥

ससि समीप कुमुदिनि मुँह खोला, सुनु चित्रावलि बचन अमोला।
तैं सुबुद्धि आ चतुर सयानी ऐसे सोवत का जिय जानी ॥
अस निचिंत पै सोवै सोई जा कहँ इहाँ रहन नित होई।
पर नहियर भो पितु कै राजू ससुरे गएँ आव नहिं काजू ॥
दिन दुइ चार इहाँ कर रहना खेलन हँसन सोई पै लहना।
खेलहु खेल बूझि मन माहीं आजु जो आहि कालिह सो नाहीं ॥
कालिह पीउ थेलिहहि चितधरी, राखि न सकिहि कोऊ एक घरी।
काढ़ि देब हम एकसरी चलिहैं न काऊ साथ।
कहइ न पाउब बात कछु रहब मरोरत हाथ ॥ ११४ ॥

कठिन रहन ससुरे कर आहै, तबहीं कुसल कंत जब चाहै।
सकुचहि तें बीतो पल जेती, छुटत न छिन अंचल कर सेती ॥
लाज त्रास पुनि गुरुजन केरी, सौहँ न सकब काहु त तरेरा।

१—मध्य। २—कामदेव।

बोलत ऊँच सासु देइ गारी ननँदी नीच बोल बेवहारी ॥
रिसि आइहि राखब जिय मारी, रिस कीन्हे आवँ कुल गारी।
ऐसे पर पुनि जान बिधाना पिउ कस चाह जो जनम सघाना ॥
सब(क) दुख सुख औ पै पिउ चाहा, ना तरु जनम अकारथ आहा।

सुख सरवर इह पिता घर, लहर तरग अपार।
खेलि लेहु जो खलिऐ, कोऊ न बरजनहार ॥ ११५ ॥

तुम्ह तै इहाँ नींद चित लावा तुम्ह बिनु सरवर सोभ न पावा।
कँवल मराल हस तुम्ह सेती, औ मृनाल सोभा सर अती।
(ख) तुम्ह बसन्त लइ सोवहु बारी, तुम्ह बिनु खाखरि सब फुलवारी ॥
तुम्ह सरीर पुनि चपक फूला आध गुलाल मधुमती फूला।
फुलपछी हुय सग पियारी जाहि बिनु सोभा पाव न बारी ॥
तुमहीं डारि औ तुमही सूआ तुमहीं तै सर फूल अछूवा।
तुमहिँ आप औ सरस अमोला, तुम्हही तै जो कोकिल बोला ॥

तुब बिनु सूनी चितसरी, चित्र सबै बिनु रग।
जल थल सोभा उठि चलहु, सखी सहली सग ॥ ११६ ॥

चित्रावलि रचि कीन्ह सिंगारा गरे सोह मनि मोतिन हारा।
सखी सहेली लीन्ह हँकारी आई सब आनहुँ फुलवारी ॥
पाँति पाँति निकसीं सब बाला गूँथी जानु पुहुप की माला।
अलिकावलि अलि माला जैसी उड़ि उड़ि जानु पुहुप पर बैसी ॥
जेहि जेहि पथ चली ते आहीं ठौर ठौर तेहि मधुप लोभाहा।
खेलत सब निसरी जेहि बोरी हात बसत आव तेहि बारी ॥
मधु कर फिरहि पुहुप जनु फूले देवना देखि रूप सब भूले।

एहि बिधि सब क्रीडा करन आईं सरवर तीर।
खोंपा[1] छोरिन सीस के, गात उतारिन चीर ॥ ११७ ॥

(क) यह कवल एक ही प्रति मे है।
(ख) तुम बसन्त सोभा पुनि बारी—पाठा।
१—जूड़ा।

(१०) सरोवर खंड।

तीर धरिन सब चीर उतारी, घाइ धसीं सब नीर मँझारी।
कनक लता फैलीं सब बारी, पुरइनि तोरि आनु अरु डारी॥
मानहुँ ससि सँग सरग तराईं कलि करत अति लाग सोहाई।
हंस देखि उलहर तजि गए, परुम सबै दिन कुमुदिनि भए॥
आइ अकार देखि मुख रहा सरवर नाहिं गगन सब कहा।
भूले गगन मयक रहे तहाँ अब निसि नखत कहहि दिन कहाँ॥
चित्रावलि तन मल्या घानी अलकावलि नागिन लपटानी।

कच बिषधर सरवर डसा, मूरि नगाहरि सग।

नख सिख सेतीं लहरि अनु, बिथुरि गई सब अंग॥ ११८॥

हंसि बोली चित्रावलि बारी सुनहु सखी एक बात हमारी।
यह सरवर जो आहि सोहावा, पनि कै मत बिरलै जन पावा॥
तुम सतन पालहु मम नेहू आज मोर परतिम्या लेहू।
हौं छिपाऊँ एहि सरवर माहाँ तुम खोजहु काउ पावकि नाहीं॥
मोहि खोजत जो आइ उचावै, हारउँ बचा मांग सो पावै।
बाएँ घाट गहिर जल जानो, तहँ छपि रही कलि गहि पानी॥
काहु न जाना केहि दिसि गई, सरवर मथन करत सब भई।

बूडि बूडि हेरहिं सबै जेहि अस भाग सो पाउ।

कोउ घाँघा कोउ मोति लै कोउ छूछे बहराउ॥ ११९॥

सरवर ढूँढि सबै पचि रहीं, चितिनि खोज न पावा कहीं।
निकसीं तीर भईं बैरागी, धरी ध्यान सब बिनवे लागी॥
गुपुत तोहि पार्वाहं का जानी, परगट मेंह जो रहहि छपानी।
चतुरानन पढि चारो बेदू, रहा खोजि पै पाव न भेदू॥

१—आमत्रण कर। २—राग का मंत्र जानन वाला। ३—प्रतिज्ञान, परीक्षा।

सकर पुनि हारे कै सेवा, ताहि न मिलिउ ओर का देवा।
हम अरी जेहि आपु न सूझा भेद तुहार कहाँ लों बूझा॥
कोन सो ठाउ जहाँ तुम नाहाँ, हम चखु जोति न देखहिँ काहाँ।
पाव खोज तुम्हार सो जेहि देखराजहु पंथ।
कहा होइ जोगी भए औ पुनि पढ़ गरंथ॥ १२०॥

ततखन सरद चाँद परगासा, विहँसि कुमुदिनी कीन्ह हुलासा।
चित्रावलि जनु पंकज कली सरवर जीउ काढ़ि ले चली॥
पहिरि चीर जल चिहुर[1] निचावा मानहु घन मुक्ताहल बोवा।
रचि भूषन पुनि कीन्ह सिंगारू पहिर कंठ मुक्ताहल हारू॥
पुहुपमाल पुनि है सब बारी, फूलीं आइ माँझ फुलवारी॥
जब लगि आहि आइ सब देखी, फूल माहिँ पुनि कौन विसेखी॥
तारहिँ कुसुम नवावहिँ डारा, कोऊ गेंद कोउ हार सँवारा।
उर उर मेलहिँ हार गहि, भौंर कवाँल तेहि संग।
मानहु दोऊ मिलि चलीं कालिंद्री औ गंग॥ १२१॥

(११) चित्रावलोकन खंड।

सखी एक आई तहँ धाई कहसि कि अचरज देखहु आई।
चित्रसारी जहँ चित्र तुम्हारा पुरुष एक कोउ लाइ सँवारा॥
अस विचित्र नहि आइ बखाना, पटतर दइ न आइ ससि भाना।
अपुरुब रूप चित्र वह दीठा राजकुँअर जनु आइ बईठा॥
देखत चित्र गई हम आऊ कहुँ चित्र अस देख न काऊ।
नैनन देखत हिये समाई, जनि पतियाहु तो देखहु आई॥
अचरज इह जो इहा को आवा इहाँ पान नहिँ संचरै पावा।
मानुष इहाँ न आवइ देवना लिखै न कोइ।
विधि ने अपने हाथ जो, लिखा होइ तो होइ॥ १२२॥

---

[1] १—प्रकाश।

सुनि चित्रिनि चित्रसारी आई, देखि चित्र मुख रही लुभाई।
सहस कला होइ हियें समाना, निरखि रूप चित चेत भुलाना॥
नैन लाइ मूरति सौं रही डोलि न सकी प्रेम की गही।
चित्रिनि कह सुनु सखी पियारी तुम्ह मोरि पीर सिरावनिहारी॥
यह सरूप मोहि सुख देनिहारा जोबन भयो जीउ-लेनिहारा।
करहु बिचार इहा को आवा यो कैसे सो आवै पावा॥
केहि क चित्र यो को अस लीखा, अस नै लिखै कहाँ दहु[1] सीखा।

करहु खोज ता कर सखी अहिक चित्र यह आह।
नाहिं तो मरिहों बूड़ि में बिरह समुद्र अगाह॥ १२३॥

सखिन कहा तुम्ह चतुर सुजाना, जो तुम्ह जान सो काहु न आना।
नाउँ ठाँउ जाकर नहिं आही धावत केस पावँ ताही॥
हम सब मिलि खोजब एक साथा खोजत खोज आउ पै हाथा।
तुम घर चलहु करहु कुल लाजा, जान यह बात सुन कहुँ राजा॥
तुम कहँ रिस के घरहि लुका। हमहि जियत है गाढ़ भराँघ(क)।
दुजन लोग करहिं सब हाँसी बालहिं बोल करहिं कुल नासी॥
जौ अपना है प्रेम, पियारी गुपत सहहु दिन दस दुख भारी।

बरजहिं आपन साथ सब अहित सुनै नहि पाउ।
कै तुम्ह कै हम कै बिधी, जे यह कीन्ह उपाउ॥ १२४॥

चित्रावली चित्र रँग राती, लिए बुलाइ निपुलक जाती।
या यह भद कहा तिन्ह सेती, तुम्ह जानहु कि सहेली जेती॥
जा यह बात चलाइह कोई आपन कीन्ह पाव पै सोई।
मूँड मुँडाय निसारौं देसा, कारा मुख गुजा कर भेसा॥
निस दिन इहाँ रहहु रखवारी, अहित न आव पाउ चितसारी।
दिये पाट राखहु निसि दीना, कोउ न उघार आइ मोहि बीना॥
जनम सेइ जे मोहिं न बिसारा, यहि सेवा मैं होब मयारा।

१—दहु = धैा। २—उत्पन्न। (क) हमहि जियत धरि ठाढ़ गढाव। पाठा।

सिख दइ निकसी चित्रनी रही चित्र चित गाडि ।
छूँछी काया ले चली जिउ चितसारी छाडि ॥ १२५ ॥

दिवस गया निसि आइ तुलानी परी जाइ धौराहर रानी ।
कहैं कहानी सखा पियारी, चित्तन ठाउँ को देइ हुँकारी ॥
नीँद न परे प्रेम चित जागा कछु न सोहाइ चित्र मन लागा ।
कुसुम सेज जानहु चित[1] जोरी देह लाइ दीन्ही जनु होरी ॥
जागन बरष एक दिन जाई पलक उलटि सम पहर बिहाई ।
चित अकुलाइ चलन कहँ चाहा लाज आइ पग साँकर बाहा[2] ॥
निसि जनु जम होइ जीउ हरि लीन्हा, पलटि भोर जानहु जिउ दीन्हा ।
बिहसित भोर अरुन उदै चित्रिनि चित्र सँभारि ।
दिन्हु सहेली सग ल, रहसि चली चितसारि ॥ १२६ ॥

चित्रावलि आई चितसारी, रहसि उघारेसि पारि केवारी ।
कौल बदन जो अहा कुम्हिलाना दिनकर दरस देखि बिगसाना ॥
रहे जो नैन बियोग जराए चित्र रूप जल आनि सिराए ।
टक टक रही चैन चित खोवा मानहुँ चिन चित्र मुख जोवा ॥
एक टक लाइ रही मुख आगा (क)चित्र चांद भा कुँवरि चकोरा ।
एहि बिधि दिन बाता निसि आई सखिनि आइ गहि बाँह उठाई ॥
सखी सब जो एकमत भईं बरबस ल धौराहर गईं ।
निसि दुख देखा चित्रिनी, सब निसि एक एक जाम ॥
जस असोक तर जानकी बिरह सहा बिनु राम ॥ १२७ ॥

एहि बिधि बीते जो दिन चारी निसि धौराहर दिन चितसारी ।
प्रीति आइ उर अंतर बसी प्रेम जानि माथे परगसी[3] ॥
रूप मलीन बदन पियराना अचल दीप न रहे छिपाना ।

१—चिता । २—टाला ।

(क) मनहु सरद ससि पाव चकारा—पाठा ।

३—प्रकाशित हुइ, चमकी ।

आनन पियर तैउ बिनु गाता । लखि बरजी मुख हेरा माता ॥
पारखि होइ मन परखो हीरा, परगट दोष न देख सरीरा ।
खेलन हँसत रैन दिन जाई । का तें आहि बदन पियराई ।
जिउ उदास आनन कुँभिलाना । बाज प्रेम यह दीसत आना ॥

पूछि एक एक सखी सब मो निपुँसक अत साथ ।
चित्रावलि जनु सुरसरी कहा सवन छुइ माथ ॥ १२८ ॥

अहा जो एक निपुंसक जाती । चित्रावलि सेवा दिन राती ।
एकचित करत रहन लिन पूजा । आन न सोहि सर सेवक दूजा ।
निसि दिन प्रेम दृष्टि भरि हेरा । हिये ध्यान चित्रावलि केरा ॥
फिरे भाग वै भइ मति हानो, आ भिमान[1] सेवा बहु जानी ।
चित्र रूप जब चित्रिनि राती । ताहि देखि सुठि बिहरी छाती ॥
जिमि जिमि चित्रिनि चित्र निहारा । कहै आगि भरि भया अँगारा ।
जिय न बिचार अभागा पेसा । राक होत राजा सो कैसा ।

जेहि सेवा जिउ दीजिये नित उठि ताहि असीस ।
जा जिउ जाने सो करै ता सौं कैसी रीस ॥ १२९ ॥

आइ तहाँ जहँ हीरा रानी । चित्र भान बह कहिसि बखानी ।
बारी मोहिं ओ हे चितसारी, तहँ चित्रावलि खेल धमारी[2] ॥
रेति काहु एक चित्र सँवारा । परगट भयेउ भयें भिनुसारा ।
को लिखि गा कछु जानिय नाहीं । जेहिक चित्र सो को जग माहीं ॥
ताहि देखि सो भूली बारी, फूली हियें प्रेम फुलवारी ।
औरे न मिला कौल कहँ आई, औरे छाँह लखि रही भुलाई ॥
चित्र प्रेम चित्रावलि हीयें, माती रहै प्रेम मद पीयें ।

जानहिं सब सखि सग की, औ निपुँसक दुइ चार
जा मोहि कहिबे सो कहा, करहु जो आव विचार ॥ १३० ॥

१—अभिमान। २—एक खेल।

सुनि रानी मन कीन्ह विचारा उपजत बीरा जो न उपारा ॥
भए विरष पुनि हाथ न आवै, जो बल करै सोई दुख पावै।
अबहीं कस न जाइ सो धोवाँ, प्रेम अँकुर मर तें खोवों ॥
जब लगि सुनै पाव नहिं राजा, करा सोई कुछ होइ न लाजा।
बहु दुख पहर रैन पर हली[2], तब लीन्हो सँग आगि सहली ॥
पहिले आइ कही रखवारा लै कुंजी पुनि बार उघारा।
देखा चित्र एक मनियारा, जगमग मँदिर होइ उजियारा ॥

जिमि जिमि देखै रूप मुख, हियँ छोह अति होइ।
पानी पानिहिं लै रही चित्र जाइ नहि धोइ ॥ १३१ ॥

(१२) चित्र धोवन खंड।

सखी एक जो अही सयानी कहिसि कहा बिलवावहु रानी।
यह सो चित्र जासौं जग हाँसी दुहिता पाव नाँउ कुलनासी ॥
धोवहु वेगि आहि जो लोना कान दूट का करिये सोना।
सुनि मति हीरा रानी जागी लै जल कर सौं धोवन लागी ॥
जिमि जिमि चित्र जाइ कछु धोइ राहु गरासि जानु ससि होई।
जिमि जिमि मिटै रूप मनियारा होत आउ नैनन्ह अँधियारा ॥
गई मेटि सो मुरति रसीली, जनु मनि आइ भुअंगम लीली।

मेटि चित्र रानी चली, हिये बुन्द दुख खाइ।
एतन न जाना विधि लिखा मेटि सक नहि कोइ ॥ १३२ ॥

चित्रावलि निसि बिरह दुखारी होत भोर आई चितसारी।
चित्र न देखि अचक होइ रही, चाँद सरूप गहन जनु गही ॥
अन्तक[5] बिरह आइ जिउ हरा धर बिनु जीउ पुहुमि खसि परा(क)।
सुनै न कछू कहे जा कोई जनु मनि खोई भुअंगिनि सोई ॥
काइ सखि दसन खोलि जल नाव, कोउ गह नाकि साँस जहि आव।

१—वीरुध = विरवा। २—गला। ३—हाथ। ४—नाश करता है। ५—यमराज।

(क) सदा सँभारहिं पूँछहिं बाता, उतर का देइ जीव नहिं गाता।
हिन्दी प्रति में यह अधिक है।

कोइ मचल गहि पोन डुलावै कोइ करनल पातल सुहराव।
कोइ चंदन घसि पोते काथा बरत अगिन जानो पिउ नाया॥

घरी चारि बीते बहुरि भयो चेत कछु तासु।
नैन उघारि निहारि तब कहेसि ऊभि ले साँसु॥ १३३॥

भयो काह सो रूप अमोला जहि बिनु गात पान जिमि डोला।
भयो कहा सो सूर उजियारा जेहि बिनु भयो जगत अँधियारा॥
कहहु सो आनि कहाँ अब गई, जेहि बिनु पूनु अमावस भई।
गई कहाँ सो मुरति पियारी जहि बिनु आजु सून चितसारी॥
कै जिन लिखा मेटि तिन गवा, कै छिति छाँडि सरग अपसवा[1]।
कै जम अहा जीउ लेनिहारा आइ जीउ लै सरग सिधारा॥
के कतहूँ माता सुनि पावा लाज जानि लिंहि आइ मिटावा(क)।

नाहि बोलि के लान्ह सुनि जो हुत निसि रखवार।
को आयो निसि सूरसुत[2], जिउ लै गयो हमार॥ १३४॥

आवा बोलि रैनि रखवारा सीस नाइकै किहिस जोहारा।
कहेसि राति रानी हुति आई लै जल से कर गई मिटाई॥
मात चरित सुनि हियें सँकानी[3] पिता सक पुनि अधिक लजानी।
कहेसि ताहि अब खोजहु आला, जे अस बात मातु सों बाली।
अस को आहि कुटीचर लगा के कुटचारि[4] कीन्ह रस भगा॥ [5]
बेगि खोजि आनहु पे सोई, करौं सोई जो मनसा होई।
होइ लाग चारिहुँ दिसि खोजू घर घर परा तिहूँ पुर खोजू॥

सुर नर मुनि गन सब डरे, सुनि चित्रिनि चित राष।
नाकर आहि अभाग बिधि, जाहि लाग यह दोष॥ १३५॥

मैं का कहौं जगत सब जाना यहि कलि पाप न रहै छिपाना।

१—स अपसरया = उड गया। २—सूर्यसुत = यम।
३—सकाच किया। सहमी। ४—चुगुलखोर चवाव करने वाला।
५—चुगुली चवाव। (क) निस आनि नसावा। पाठा।

जो खिन गोप कर संसारा आय आपु ल्योंर हट पुकारा ॥
छिपत जो किय कूप औ बापी कोउ न जगत कहावत पापी ।
पाप न रहै छिपाएँ छिपा छिपै पुन्य जो अहनिसि जपा ॥
पापहि गोर कहा कोउ सोवा आपहिं पाप जनम तेहि खोवा ।
तजहु पाप पथहि जिय जानी करहु पुन्य जो रहै कहानी ॥
पुन्य करन जनि लावहु आखा जो सो होइ दुहुँ जग मोखा[२] ।

मान करहु जो करि सकहु कथनी अकथ अपार ।
कथे न कर कछु आवई करनी करतब सार ॥ १३६ ॥

खोजत खोज कुगीचर आना बाधि सखिन्ह चित्रिनि पहँ आना ।
पग साँकर हाथन हथकरी दिपहि स्याम[४] जो आनी जरी(क) ॥
ततखन बेगि हँकारा नाऊ डेरिउ अस जनि होइ त्रिपाऊ[६] ।
मूँड मुडाइ लाइ मुख कारी पाछ(ख) रही देही रतनारी ॥
खर चढाइ कै नगर फिरावा वाला जैस कीन्ह तस पावा ।
नगर फेरि पुनि देस निकारा फिरे आइ पहुचावनिहारा ॥
गुन सेवा पति निमिष न हेरा किंचित (ग) दोष लागि मुँह फेरा ।

आपन करनहि जानिये अति मयार औ राउ ।
ठाकुर अछा मेटि कै चाकर भा न अकाउ ॥ १३७ ॥

चित्रावलि कह सो चितसारी जानहु भई भुअंगिनि कारी ।
फूल अँगार भए फुलवारी किछु न सोहाइ बिरह की मारी ॥
बेगि आइ धौराहर चढा बिरह बिथा वियोग उर बढी ।
लोयन जल जनु घन बरषाई देह दहे जानहु दौं[७] लाई ॥
मलय भद घनसार मिलावा सखी आनि चाहै उर लावा ।

१—पानी निकालने का एक यंत्र । २—छुटकारा । ३—प्यान ।
४—८ शकु = सीकर, जंजार । (क) दहि स्याम भा औगुन जरी—पाठा ।
५—कारिख = स्याही । ६—त्रपति । (ख) पाछु पटीर रही रतनारी—पाठा ।
(ग) तनिक दोष पाठा । ७—दावाग्नि ।

अस तन नवै बिरह नल[1] पागा , निकट सुखाइ(क) अग नहिं लागा ॥
पदुम गूँधि मेलहिं उर हारा टूटहिं अरि जरि होइ अँगारा ।

रोइ कहै तब सखिन सो , हम तन तपनि सो लाग ।
जौ तुम्ह हिमगिरि आनहु तउ न बुझ यह आग ॥ १३८ ॥

करहु उपाय साई चित आनी हिरदै आगि परै जेहि पानी ।
को अस विधनै जग उपराजा , जो चित हरन चित्र अस साजा ॥
करहु खोज सो कहाँ चितेरा मकुगा जीव बहुरि लिखि फेरा ।
कै जेहि मिलै सो करहु उपाई कै विष देहु मरौं जहि खाई ॥
रँगमति नाउँ सखी एक अही , त समुझाइ बात तब कही ।
करि गियान चेतहु चित माहीं आहि सो आहि नहिं सो नाहीं ॥
आहि कोऊ सो एहि ससारा जेहिक चित्र यह काहु सँवारा ।

कस न खोज तेहि लीजिय जाकर चित्र अनूप ।
एक न ऐसा रुप भै हे कुलीन काउ भूप ॥ १३९ ॥

तासोँ कहा प्रीति तुम्ह लाई जा जल धोवत गयो मिटाई ।
दिन दुइ कर चटक देखरावा गयो मेटि पुनि बहुरि न आवा ॥
कस न ताहि जिउ गोज आनी जेहिक चित्र तुम्ह देखि भुलानी ।
बूझि विचारि देखु मन माहीं कया सजीव चित्र परछाहीं ॥
कया सूर दीपक परछाहीं होइ पतग जरहु तुम्ह काहीं ।
जाकर परछाहीं चित हरई सो दहुँ कया काह धौं करई ॥
जो अति चित्र लोन लिख कोई सभु सरीग न पटतर होई ।

चित्र चित्र चित सौ हरहु धरहु ध्यान मन सोइ ।
तुम्ह ज्ञानी औ सुबुधि अति का समुझावै कोइ ॥ १४० ॥

सखी बात सुनि तपनि सिरानी उपनत अमिलि परा जनु पानी ।
परमवचन[2] सुनतहि मन जागा , तजि छाया चित्र काथहि लगा ॥

१—विरहानल । (क) अगिनि तन लागा—पाठा । २—सदुपदेश ।

चित्र सबै सो नास्ति के जाना काया अस्ति सोइ परमाना।
कहेसि सखी तैं हितू हमारी भूला पथ देखावनिहारी॥
अस्ति प्रेम उपजउ जित आइ नास्ति सबै अब गई हेराई।
हौं असूझ बन जात अकेली तैं गहि बाँह पन्थ सिर मेला॥
हिय क नैन पथ अब सूझा आन बिचार सबु नन बूझा।

कहु कैसे तेहि खोजिये, कै एकसर के साथ।
करु उपाय अब सोइ निजु जहि जिउ आव हाथ॥ १८४॥

सुनु सुन्दरि अस बचन सोहावा बिनु खोज कछु हाथ न आवा।
नियरहि आहि न चीन्हैं काई जानहिं कोस सहस दस सोई॥
दूरि नाहिं ओहि होइ निन्हाई नैन न आवै मन तहँ जाई।
जन दुइ चार चित्र जिन्ह चीन्हा गुधि होइ गियान तिन्ह दीन्हा॥
भसम लाइ तन जोगी भेसा पठयहु जाहिं देस पर देसा।
लेहिं सो राउ रंक घर फेरी पुर पट्टन सब देखहिं हेरी॥
भकु[1] तुम भाग जागि के जाई सो तुम हाथ चढ़ कहु आई।

ओहि काहु खोजै काऊ एक मन एक चित लाइ।
होइ दूरि जो अस्ति तऊ नियरहि मिल सो आइ॥ १८५॥

(१३) परेवा खंड।

कै सिव साज निपुन एक चारी जिन्ह सो आहि सो चित्र चिन्हारी।
बेगि सखाए चारिहु ओरा, ढूँढन चले सूर ससि जोरा॥
औ समुझाइ कीन्ह पुनि बाता आनत अहाँ जाहि मन राता।
ताकर चाह कहै जो आइ जो माँगहि सो देउँ बधाई॥
चारौ चले चारि दिस भए आपु आपु कहँ ढूँढन गए।
जल थल सायर मेरु सुमेरा रन बन पुर पाटन सब हेरा॥
जहँ तहँ भवहिं[2] गहैं बैरागा, दइहु इन महँ कोइ होइ सुभागा।

१—शायद, कदाचित्। २—सम्मुख प्राप्त। ३—भ्रमण्या कर।

बन घन गिरि सायर पटन जहाँ सुनहिँ नर नाम।
फिरि फिरि हेरहिँ रैन दिन, छिन न लेहिँ बिसराम॥ १४३॥

तिन्ह महँ अहा जो नाम परेवा हिएँ सँवरि चित्रावलि सेवा।
उत्तर दिसा नीप अति भला धौलागिरि पर्वत कहँ चला॥
प्रथमहिँ (क) नगर कोट कर फेरी काशमीर पुनि तिब्बत हेरी।
हरद्वार गै गंग अन्हावा, माँगि होछा सिधु मनावा॥
सिरीनगर गढ देखि कुमाऊँ खसिया लोग बसहिँ तेहि गाऊँ।
पुनि बदरी केदार सिधारा ढूँढा फिरि फिरि सकल पहारा॥
दुरगम देखि मगन कर देसा, चला नाकि नैपाल नरेसा।

काक कोट बसगित बहुत, चौ चारिहुँ दिसि ताल।
अमर पुरी जानहुँ बसी नाउ धरा नैपाल॥ १४४॥

अतिहि अपूरब ताल सुहावा इसिकंदर जुलकरन खनावा।
घाट बँधाए गच चिकनाई चहुँ दिसि फेर आरसी[1] लाई॥
तिरहिँ[2] हाइ पानी कर धोखा देखि पिआस पाव संतोखा।
पुनि दुइ नदी सुहावनि बहीं, उत्तम बेदब्यास जस कहीं॥
नागमती अहि मुख ते आई, बागमती नाहरमुख पाई।
तीरथ जानि जगत चलि आवा, अंग धोई सब पाप नसावा॥
बारह मास पटन पुनि घिरी, बरहो मास जातरा भिरी।

नर नारी सुंदर सबै, ससि मुख अधर रसाल।
नैन परेवा थकित रह देखि नगर नैपाल॥ १४५॥

घर घर नगर लीन्ह तहँ फेरी राउ रंक देखे तहँ हेरी।
रूप सरूप लोग सब आहा, सो न मिलै जा कहँ चित चाहा॥
जहँ न होइ सो प्रान पियारा बसत देस सब जानु उजारा।

(क) दूर नाहिं चहि गेल चिन्हाइ। गा सुमरु पुनि तपान हेरा—पाठा।

१—सीसाबंदी, सीसा। २—डाडे। किनारे।

चला नगर तजि परवत ओटा परी दिष्टि एक कञ्चन कोटा ॥
हीरा रतन पदारथ मोती जगमगाइ सब मानिक जाती ।
कहसि जाइ देखौं एहि ठाऊँ, लागत अनिहि सुहावन गाऊँ ॥
हियें धाउ भइ पाव न लावा, जोगी जाइ न नगर नियराया ।
आइ सींव[1] छिन नियर भो(क) लीन्ह अतीथ बोलाइ ।
धरमसाल जहँ हुत रचा तहँ ले गए लिवाइ ॥ १४६ ॥
गै जोगी महँ देखौ काहा, अतिथि सहस एक बठे आहा ।
ठाढ़े सबै राउ औ राना सेवा करहिं अस मन माना ॥
भाँति भाँति पकवान जेंवावहिं औ अपने कर पान खियावहिं ।
जो इच्छा मन मागै कोई जोगिहि आन पुरावैं सोइ ॥
देखि अतीथ सबै रहँसाए[2] सेवा कहँ चलि आगे आए ।
आदर सहित आनि पसारा पहिलें लै जल पाँव पखारा ॥
ता पाछें लाए पकवाना, जेंउ गोसाईं जो मन माना ।
जोगी कछु न जेंवई पूछैं कह न बैन ॥
चरचै[3] आनन चहूँ दिस कीन्हें चञ्चल नैन ॥ १४७ ॥
जोगि न जेंवा रह जेंवाइ, काहु कन्ह कुँअर पहँ जाई ।
धरमसाल एक जोगी आवा चित अचल बराग जनावा ॥
नहिं जानहिं दुहुँ का चित आनी, अन्न न खाइ पिय नहिं पानी ।
पूँछे कह न एकौ बाता पियर बदन जस काहुक राता[4] ॥
चञ्चल नैन चहूँ दिस हेरा चरचै पुनि आनन सब केरा ॥
पलक न लाउ जानु नहिं सोवा ढूँढत फिरै जानु कछु खोया ।
धरमसाल की नीत न होई भूँखा जाइ इहा हुत कोई ॥
भइ आयसु ऐसी कहा, बेगिहि आनहु सोइ ।
मैं चूक्यौं सेवा कछु तातें रिसि जिय होइ ॥ १४८ ॥
कुँअर पास तब जोगी आना जोगी कुँअर देखि पहिचाना ।

१—सीमा, सिवान । २—आनद हुए । ३—ताकता था । ४—अनुरक्त । ५—स ।
(क) आइ सींव बठेहु नियर-पाठा ।

चित रहसा जानहुँ निधि पाई कथा महँ जोगी न समाई।
पीत बरन जु अहा भा राता अति हुलास कपेउ सब गाता॥
देखि कुँअर आदर बहु कीन्हा निकट पाट बैठन कहँ दीन्हा।
विनती कीन्ह सुनौ हो देवा कस न धरम कै मानहु सेवा॥
हम सेवक तुम्ह देव गोसाईं सेवक हुते चूक बहु ठाईं।
रिस तजि उँबहु अँबन दवा होउँ सनाथ आज तुम्ह सेवा॥

कहेसि कुँअर सुनु धरम तरु अस लगेउ तुम्र भाग।
जरि पताल पालो सरग, इछा फल तेहि लाग॥ १४९॥

जा दिन तैं हम गुरु बिछोवा, अन्न न जेंवा नींद न सोवा।
भूख नाहिं औ नाहिं पियासा, नांउ अधार रहइ घट साँसा॥
दक्खिन देस आन जिन्ह देखा, रूपनगर कबिलास विसेखा।
असे गुरू तेहि ।गर सोहावा चेला देस बिदेस फिरावा॥
जोग अगिनि जब हिए प्रचारी[१] पल महँ कीन्ह भसम रिसि जारी।
काया जोग अहै रिसि रोगू, औ रिसि करै सो नासै जोगू।
कुँअर कहा कस देस तुम्हारा, औ को देस बसावनहारा[२]॥

मो सौं देस बखान करु कैस नगर कस भूप।
कौन लोग तहवाँ बसैं, पुनि गुन कौन अनूप॥ १५०॥

जोगी कथा कहन अनुसारी सुनहु कुँअर यह बात रसारी।
रूपनगर सो उत्तिम देसा जनु कबिलास आइ भुइँ वैसा॥
(क) धन सो नग्र धन उत्तिम देसा, चित्रसेन जहँ राउ नरेसा।
ऊँच नीच घर ऊँच उँचाए चित्र कटाउ अनेक बनाए॥
राउ रंक घर जानि न जाई, एक ते एक चाह अछवाई।
बेल चँबेली कुंद नेवारी, घर घर आँगन फुलि फुलवारी॥
लीपे चंदन मेद अवासा[६], भीत बैठि लेहिं अलि बासा।

१—परचाया, सुलगाया। २—राजा। ३—रसाली। ४—बैठा।
(क) यह उर्दू की प्रति मे नहा है। ५—फूली हुई। ६—आवास, घर।

मृगमद चोवा कुमकुमा खोरि खोरि महकाइ।
सुर नर मुनि गंधरब सब रहे सुबास लुभाइ॥ १५१॥

चित्रसेन अति राउ भुवारा जस रवि नप तेज मनियारा[1]।
जेहि घर विषम दिष्टि परि राइ बैरी नम जिमि जाइ बिलाइ॥
बड़ परताप अखंडित राजू अगनित हस्ति घोर दल साजू।
गुन विद्या सरि भोज न पावा पंडितन्ह हिये हत बहु लावा॥
दुखी न कोऊ सब सुख राता जहँ तहँ चलै धरम का बाता।
सब सुखिया काउ दुख न जाना ढूँढत फिरहिं लेइ को दाना॥
देस देस के राजा आवहिं ठाढ़ तेंवाहि[2] बार[3] नहिं पावहिं।

महथ[4] गरब अति मान नहिं रहे न एकौ थक।
रूप नगर की खोरि महँ राउ होहिं सब रंक॥ १५२॥

तेहि घर पुनि चित्रावलि बारी मात पिता की प्रान पियारी।
रूप सरूप बरनि नहि जाई, तीनिहुँ लोक न उपमा पाइ॥
दिनकर दिन पावै नहि जोरा इंद्र लजाइ देखि मुख गोरा।
अमरकोष गीता पुनि जाना, चोदस विद्या कर निधाना।
संतति आन न तेहि घर आवा वाही एक ते सब चित लावा॥
भौंह चढ़ाइ जो कबहुँ रिसाई मात पिता कर जिउ लिसराई।
औ जो चाह कर पुनि सोई, लेत देत कछु बरज न काई॥

दखिन दिसा पुनि नगर क, सरवर एक खनाइ।
सखिन साथ चित्रावली तह नित जाइ नहाइ॥ १५३॥

कहा सराहौं सरवर तीरा पानि मोती तह काँकर हीरा।
अति औगाह[5] थाह नहिं पाई, निमल नीर जहँ पुहुमि देखाई॥
अति अमोघ औ अति विस्तारा सूझ न जाइ वारहु न पारा।

१—मनियाला। २—प्रतीक्षा करे, अगार। ३—बार = गुजर — प्रवेश।
४—महत् = बड़ा। ५—अवगाव = अवगाह = गहिरा।

घाट बँधाए कचन ईँटा, सरग जाइ जनु लाग्या भीटा ॥
ऊपर ताल पानि जहँ ताईं ठाव ठाँव चौखडि बनाई।
औ जहँ तहँ चौरा कै लीन्हें निसि दिन रहहिं बिछावन कीन्हें ॥
जहाँ एक छिन करै निवासा सोई ठाव होइ कविलासा।

सुख समूह सरवर सोई जग दूसर कोउ नाहिं।
मानुष कर का पूछिय, देवना देखि लोभाहिं ॥ १५४ ॥

भीतर सरवर पुरइन पूरी देखत जाहिं होइ दुख दूरी।
फूले कँवल सेत औ राते अलि मकरंद पियहिं रस माते ॥
बासर पदुम कुमुद रह फूला सब निसि नखत चाँद रह भूला।
तीरि कँवल केसर भहराहीं[1] कसरि बास आव जल माहीं ॥
हंस झुण्ड कुरिलहिं[2] बहु घोरा चकइ चकवा पैरहिं जोरा।
सबरत ताहि सिरायो[3] हीया चातक आइ पानि सो पीया ॥
औ जिन पैठि अलके आए कलि करत अनि लाग सोहाए।

रहसहिं क्रीडा ब्रन्द बस भौंर कँवल (क) फहराहिं।
निसि दिन होहिं अनँद महँ देखत नैन सिराहिं ॥ १५५ ॥

सरवर तीर पछिम दिसि जहाँ चित्रावलि की बारी तहाँ।
सीतल सघन सुहावन छाहीं सूर किरिन(ख) तहँ सँचरै नाहीं ॥
मञ्जुल डार पात अति हरे औ तहँ रहहिं सदा फर फरे।
तुरँज जँभीरी अति बहुताई नेबू डारन गलगल जाई ॥
अमिरित फर औ दाड़िम दाखा सतति जिये निमिष औ चाखा।
नरियर और सोपारी लाई कटहर बडहर कोऊ न खाई ॥
आँब जमुनि लै एक दिसि लाए, बर पीपर तहँ गनत न आए।

मूर सजीवन कलपतरु फल अमिरित मधु पान।
देउ दइत तेहि लगि भजहिं देखत पाइय प्रान ॥ १५६ ॥

१—झलत हैं। २—गिरना। ३—ठंढा हुआ।
(क) बिकसाहिं पाठा। (ख) तरनि किरनि पाठा।

कोकिल निकर अमिरित बोलहिं कुंज कुंज गुंजत बन डोलहिं ॥
सारी सुआ पढ़ै बहु भाखा कुरलहिं बैठि बैठि तरु साखा।
पवई आपन आपन जोरी छकी फिरहि कुरलहिं चहु ओरी॥
खजन जहँ तहँ फरकि देखावैं दहिअल मधुर बचन अति भावैं
मोर मोरनी निरतहिं बहुताई, ठार ठार छवि बहुत सोहाई॥
चलहि तरहिं तहँ ठमुकि परेवा पडुक बोलहि मृदु सुख देवा।
बहु करनास[2] रहहिं तेहि पासा, देखि सो संग भाग अहि बासा (क)॥
भगराज[3] औ भृङ्गी, हारिल चात्रिक जूह।
निसि बासर तेहि बारि महँ कुरलहिं पछि समूह॥ १५७॥
औ पुनि रहै माँझ जहँ बारी चित्रावलि लाइ फुलवारी।
सोनजरद नागेसर फूले देखि सुदरसन दिष्ट जो भूले॥
जाही जूही अति बहुताई बनबन भाँति सवती लाई।
बनबेला सतबर्ग चँबेली रायबेल फूली सुखरेली॥
करना केतकि बास नेवारी चपकली जनु कुंदि उतारी।
कदम गुलाब लाग बहु भाँती औ बसाहि बकुअन की पाँती॥
मौलसिरी फूली औ मूँगा जनु सिगार हरावलि गूँदी।
पान बसेरा लेहि निसि तहि फुलवारी पास।
भोर भए अंग प्रगटइ तिन्ह फुलन्ह की बास॥ १५८॥
ललित लवंग लता जहँ फूली भौंरा भौंरि कुसुम तहि (ख) भूली।
नगर नगर महँ छगरै जूही गंधराज फूलहिं सबूही॥
कस्तूरी सुगंध बिगसाहीं ठौर ठौर सो अधिक बसाहीं।
भुइँचपा फूली बहु रंगा, मानहु दरसा रूप अनंगा॥
सूरज भाँति भाँति अति राते देखत बनै बरनि नहिं जाते।
उड़हिं पराग भौंर लपटाही जनु बिभूति जोगिनि लपटाही॥
भरकंडो[5] भौंरन संग खेली, जोगिन संग लागि जनु चेली।

१—भ्रमैं। २—नीलकंठ। ३—एक शिकारी चिड़िया जुर्रा। (क) बहुकर बास रहहिं तहि ठावें दरसि सो सकहिं भाग जहि पास—पाठा०। ४—सर्व्यमुखी। (ख) रस। ५—एक काँटा।

केलि कदम नवमल्लिका, फुल चंपा सुरनान।
छ ऋतु बारह मास तहँ ऋतु बसंत अस्थान ॥ १५९ ॥

औ पुनि जहाँ माँझ[1] फुलवारी तहँ चित्रावलि की चित्र सारी ॥
चंदन मेद कपूर मिरगावा इन्ह तिहुँ मिलि कै कीन्ह गिलावा।
हीरा ईंट लगाइ उँचाई[2] देखत बन बरनि नहिं आई ॥
चुनी चूरि[3] कै कीन्हो खोहा मोती चूरि गच जग मोहा ॥
अति निरमल जस दरपन कीन्हा नहाँ जाइ पुनि आपु न चीन्हा।
मँदिर एक तहँ आरि दुआरी नगिन जरी पुनि लागु केवारी ॥
कनक खंभ तहँ चारि बनाए हीरा रतन पदारथ लाए।

ठौर ठौर सब नग जरिन, अस होइ रहेउ ऊँजोर।
जहँ न रनि दिन जानिए धो न साँझ नहिं भोर ॥ १६० ॥

तेहि महँ चित्रावलि गुन ग्यानी आपुन चित्र लिखै अस जानी।
जो लौं सखी दरस नहिं पावहिं भारहिं माइ सीस तेहि नावहिं ॥
और जो चित्र अहहिं तेहि माहीं सो चित्रावलि की परछाँहीं।
अस विचित्र केहि लावों आरी अस्तुति जोग जीभ नहि मोरी ॥
वही रंग अपने रँग माहीं ओहि के रंग और कोउ नाहीं।
सोह न जाइ चित्र मुख हेरा धन सो चित्र औ धन सो चितेरा ॥
मानुष कहा सो देखै पावैं, देवता जाहिं ओहारे आवें।

कोटि चित्र चितसारि महँ, देखत एको नाहिं।
ज्यों दिनकर उद्दोत ही, नषत सवै छिपि जाहिं ॥ १६१ ॥

लखो लिलाट दूजि कर चंदा दूजि छाडि जग को कहँ चंदा।
भौंह धनुष बरुनों विषबाना, देखि मदन धनु गहत लजाना ॥
बरुनी बान गड़े जहि हीये बहुरि न निकसै जब लहुँ जीये।

१—मध्य। २—उँचाना = उठाया बनाया। २—पीस कर, चूर्ण करके।
३—मानिक-माठा। ४—नमस्कार करने के लिये।

लोचन विमल जानु सम जोवा निमिष जो देख जनम भर रावा ॥
अधर सुरँग जनु खाए तँबाला अबहीँ जनु चाहै हँसि रोला ।
लंक छीन जेहि भृंग लजाहीँ कोउ कह आहि कोऊ कह नाहीँ ॥
फीली चरन मराहीँ काहा अबहीँ रहसि चले जनु चाहा ॥

गुपुत रहै चित सारि महँ जग जाने सब काइ ।
सपने जो काइ देखई सौंतुक जागी होइ ॥ १६२ ॥

सुनी कुँअर जो चित्र की बाता हिए हुलास कँपेउ सब गाता ।
सचक भया चित औ मन गुना सपन जो देखा सौंतुक सुना ॥
सोवत भाग अहे सो जागे, श्रवन भए सुनि आहि सभागे ।
मोहिँ परतीति करम की नाही कहत आहि कोउ सपने माहीँ ॥
औ निहचय हौं सोअत अहौं, जनि जगाउ विधि हाहा कहौं ।
कौन घरी यह आह सुभागी, देखेउँ सोइ सुनेउँ सो जागी ।
कोन बार यह आह सरेखा सरवन सुना नैनन जो देखा (क)॥

यहि अंतर जनु बिरह अहि डंसन देइ छुआइ ।
थिथुरि गयो विष सकल तन लहरि चढ़ा जनु आइ ॥ १६३ ॥

गुपत पीर परगट पुनि भई सुलगत आगि फूँकि जनु दई ।
उठी आगि सिर पालहु जग धाइ कुँअर जोगी पग परा ॥
रहि न सकेउ हिय गह भरि[1] रोआ नैन नीर जोगी पग धोआ ।
बिरह अनल अल भे चखु ढरा लोचन नीर जागि नब जरा ॥
दुहँ हाथ गहि सीस उठावा पूँछन बात धकुर[2] नहि आवा ।
साँप डसा जनु विष छहराना, घूमत रह सुने नहिँ काना ॥
दिष्टी भुअँग नद जनु कीन्हीँ ते पढ़ि मत्र खोलि जनु दीन्हीँ ।

तब जोगी कर नीर ले, मुख छिरकसि करि हेत ।
पहर एक बीत भयो बहुरि कुँअर चित चेत ॥ १६४ ॥

(क)—यह उर्दू प्रति नहीं है। १—शक्ति भर जहाँ तक हो सके। २—शब्द।
३—फैला। ४—चक्कर खाता, मस्त। ५—हिताई।

बहुरि जो कुँअरउ सोइ कै जागा(क) बैठ सँभारि गहिस सिर पागा।
तौ पुनि कहिस ऊभ लै साँसा ए देखिहार निरासहि आसा॥
वाह सो चित्र जो मोहि दुख दीन्हा बरबस जीउ मार हरि लीन्हा।
जीउ लेइ तन दूरइ डारा हौं तो वही चित्र कर मारा॥
वही चित्र मै सपने दीठा, चित्त माँहँ वहि चित्र बईठा।
वही चित्र बिनु जीउ बिहूना¹, जिउ हरि लीन्ह कीन्ह तन सूना॥
वही चित्र जो नैन समाना सो तुक सपन आइ नहिँ जाना।

वही चित्र हम हिय महँ जो तैं कीन्ह बखान।
हौं अब रहउँ सरीर होइ, वह भो जीउ समान॥ १६ ॥

जहि दिन ते नैनन भा लाहा बहुरि न पायों कतहुँ चाहा।
पथ न पावउँ कहि दिसि जाऊँ, पूछौं काहि न आनउँ नाऊँ॥
मैं निरास भा बिनु जिउ आहा आस रहइ तें जिउ घट आहा।
आजु आस तें पुरवसि मोरी, तन मन धन न्योछावरि तोरी॥
अब कहु पथ गवन जहि पावा चलउँ वगि छिन बिलँब न लावा।
तुम्ह जहँ चहहु सिधारहु तहाँ मोहि अब कहहु पथ सो कहाँ॥
कै अब जाइ चित्र सो पावौं कै अपान वहि पथ लगावौं।

जिउ चितसारी महँ रहा देह रही हम साथ।
देहु सोई उपदेस मोहिँ, जहि जिउ आव हाथ॥ १६६॥

जोगी कहा कुँअर सुनु बाता, अबहीँ देखि चित्र तूँ राता।
यह सो चित्र तैं देखा नाहीँ जाकर ऐस चित्र परछाहीँ॥
चित्र देखि तैं चित्रै जाना ता महँ अहा सो नहिँ पहिचाना॥
चित्रहि महँ सो आहि चितेरा, निर्मल दिष्टि पाउ सो हेरा॥
जैसें बूँद माँह दधि होई गुरु लखाव ता जानै कोई।
जा कहँ गुरू न पथ देखावा, सो अंधा चारिहुँ दिसि धावा॥
मूरख सो जो चित्र मन लावै सेमर सुआ जैस पछतावै ॥³

(क) फरकि कुँअर सोइ अस जागा। पाठा। १—विकल। यह पद उर्दू की प्रति में नहीं है। २—आला। ३—मि सेमर सेइ सुआ पछताना। मारिसि ठौर भुआ उधिराना॥

यह मूरति औ चित्र जग जो बिधि सरा सुजान।
परगट देखहि नैन यह गुपुत जो पूजहिं आन ॥ १६७ ॥

अति सरूप चित्रावलि बारी जनु बिधिन कर चित्र सवारी।
चित्रहिं कहाँ जाति छबि बाती यह सजीव यह बिनु जिउ जाती॥
चित्र अराल हाइ जनु गँगा वोहि क बाल अस मानिक मँगा।
चित्र कटाच्छ भाव बिनु नैना वोहि क नैन सब मोहन सैना[1]॥
चित्र अडोल न डोल डोलावा जाहि गोनत जनु हंस सोहावा।
साथक बरुनि भौंह धनु ताना सौंतन जाहि लागु उर बाना॥
मद बदन तन चंपक सारी अलि सँग फिरहिं जानि फुलवारी।
काहि लगावों उपम तेहि अछर[2] पूज न छाँहि।
सुर नर मुनि गन पचि मरहिं दरसन पावहिं नाहिं॥ १६८॥

बदन जोति कहि उपमा लावों ससिहर पटतर[2] देत लजावों।
ससि कलंक पुनि खंडित होई ह निकलंक सपूरन सोई।
ससि बदी जब दूजिक[3] दीसा वोहि उदी निज देहिं असीसा॥
जो मुख खोलि करै उजियारा नखत छपाहि होइ ससि तारा॥
नैन कुरंग कहे नहिं पारों खंजन मीन ताहि पर वारौं।
तीन रंग जो महँ नित लहिय तहि कुरंग[4] कहु कस कहिय॥
जाकहँ नैन पकै उन हेरा सो बिष बान कै भया अहेरा।
ऐसन चित्र अहेरिया मारि न खोज करइ।
जेहि उर लागे बान सो रहसि रहसि जिउ देइ॥ १६९ ॥

सो तेहि संग अनेग सहेली सब सरूप अनूप नवेली।
उन्हक रूप बिधि अपुरुब कीन्हा करि करि चित्र आनु जिउ दीन्हा॥
कोउ कुमुदिनि कोउ पंकज कली एकतें एक चाह अति भली।
अबहीं सबै कली मुँह मूँदी भौंर चरन तें मलिन खूँदी॥
सब चित्रिनि औ पदुमिनि जाती सेवा करत रहत दिन राती।

---

[1]—सयन = कटाक्ष। [2]—उपमा। [3]—मुसलमान लोग द्वितीया के चाँद का देख कर बन्दना करते हैं। रमजान के पहिले मास भर रोजा रह कर द्वितीया के दिन ईद मानते हैं। [4]—बदाजन। [5]—कुत्सित रंग का = बदरंग।

अग्या होइ करहिँ पै सोई मेटि न सकैं रजायसु कोई ॥
श्रा जिहि ठाँव करहिँ बिसरामा, जपत रहहिँ चित्रावलि नामा।

निसि बासर ठाढ़ा रहहिँ लीन्हे आपन साज।
जो पठवहिँ सिप एक कहँ धाइ करहिँ दस काज ॥ १७०॥

पुनि सो चित्र लिखै भल जाना उनसौं जगत न कोऊ सयाना।
आपन चित्र अपु पै लीखा श्रार को लिखै जान ? नहिँ सीखा ॥
जगत चितर रहे पचि हारी ओकर चित्र न सकै सँवारी।
जा कोई आपन चित्त आनै अंतरजामी नबहीं जानै ॥
आपन चित्र छीन कै लेइ धो तेहिँ देस निकारा देई।
आपन चित्र जाहि लिखि दीन्हा तै सो घालि हिये मा लीन्हा ॥

यहि डर कोऊ न बीसरैं, अह निसि आठौ जाम।
लिये रजायसु नित रहहिँ जपत फिरहिँ सो नाम ॥ १७१॥

औ तेहिँ संग नपुंसक जाती पठवैं जहा आहिँ लै पाती।
गुन विद्या सब आना बूझा निरमल दिष्टि पथ भल सूझा ॥
अन्न न खाहिँ पानि नहिँ पीयहिँ, नाउँ अधार रैनि दिन जीयहिँ।
काम क्रोध तिसना मन माया, पंचभूत सौं तिन्ह की काया ॥
अग्या काज निलंब न लावा करहिँ सोई जहिँ दोष न पावा।
सब की बात जनावहिँ आई अग्या होई कहहिँ सो आई ॥
अग्या बिना पैग जो धरहीं अनल तेज सिखा लहि जरहीं।

दूरि रहहिँ तेहिँ गनति नहिँ, निकट रहहिँ ते चारि।
रचना सिरजनहार की, नावं पुरुष न नारि ॥ १७२॥

हौं तेहि माहँ परेवा नाऊँ सेव करौ चित्रावलि ठाऊँ।
वह सो गुरू हौं ओकर चेला, वहिक नाउ हम मुँदरा मेला ॥
वही पथ माहि दीन्ह देखाई वेहि क बचन सिद्धि मैं पाई।

دل بدست آور که حج اکبر است * از هزاران کعبه یکدل بهتر است

सि—१

औ सुमिरन दीन्ही वोहि केरा वेहि क नाउँ सुमिरौं हरि फेरी ॥
भूख नाहिँ औ नीँद पियासा चित्रिन सुरति ध्यान घट आसा ।
भा अग्या करि साज महसू, दिन दस फिरहुँ देस परदेसू ॥
औ लगु फिरत होइ नहिँ रागी, ता लगि सिद्ध होइ नहिँ जोगी ।
भसम अँग पग पाँवरी, सीस कलपि करि केस ।
कथ पहिरि ले दड कर, देखन निसरयौ देस ॥ १७३ ॥
सुनत कुअँर जोगी के बेना उघरे दोऊ हिय के नना ।
मन महँ कहसि साँचु यह साजा, वह सो कौन जाकर उपराजा ॥
अहिक चित्र अस जिउ लेमिहारा, दुहुँ[1] कस होइहि सिरजनहारा ।
साजा होई मेटि पुनि जाई सिभू[2] सरीर न काऊ मिटाई ॥
जो न आपु आपहि पहिचाना, आन क पेम कहाँ हुत जाना ।
जसे कुबुध आनि के देवा, बहुत करहिँ पाहन की सेरा[3] ॥
पाहन पूजि सिद्धि किन पाई, से मर सेइ सुआ पछिताई ।
कस न बूझि खोजौं साई अहिक चित्र सब कीन्ह ।
जीउ देई जो चाहई, लेइ जो चाहे लीन्ह ॥ १७४ ॥
कुअँर कहा अब सुनहु परेवा, मैं तार सीप[4] मोर तैं देवा ।
मैं तजि पथ जात बोराना तैं गहि बाँह पथ पर आना ॥
बूड़त मोर नाउ मँझधीरा तू खेवक होइ लाइसि तीरा ।
सोअत हौं जो अहा सो जागा, मन तजि चित्र चितेरहिँ लागा ॥
चित्र देखि न चितेरा जाना, बिनु चितेर अब दिष्टि न आना ।
अब फिरि कहु चित्रावलि बाता, ओहि के रूप आजु मन राता ॥
सुनतहि नाम दूरि भइ दाहा दहुँ मुख देखत होइहै काहा ।
मरत जियाए जाइ कहि फिरि फिरि कहु सो बान ।
सुनिबे कहँ अमिरित कथा श्रवन भए सब गात ॥ १७५ ॥

१—कौन जानता है । २—स्वयंभू—जो बिना किसी के बनाये बना है ।
३—सि प्रतिमा स्वल्पबुद्धीनाम् । ४—शिष्य, चेला ।

जोगी सँवरि कहै पुनि बाता वह चित्रावलि ओहि रँगराता।
बदन मयंक मलयगिरि अंगा चंदन बास फिरहिं अलि संगा॥
जो अलि अंग बास वह पाई, सो तजि आन फूल नहिं जाई।
बहुतन्ह सिर करवट गहि सारा, इछा करि मधुकर अवतारा॥
बहुत नाउँ सुनि जोगी भए मूँड मुँडाइ देसंतर गए।
ससि सूरज औ नखतन पाँती बरनै होहिं दिवस औ राती॥
भूषन सोभ पाव तेहि अंगा, ताते निसि दिन छाड़ न संगा।

चाँद न सरवर पावै, रूप न पूजै भानु।
अब सुनु नख सिख कान दै नखसिख करौं बखानु॥ १७६॥

प्रथमहिं कहौं केस की सोभा, पन्नग जनौं मलयगिरि लोभा।
दीरघ बिमल पीठि पर परे लहर लेहिं बिषधर बिषभरे॥
कच अहि डसा जनम नहिं जागा मंत्र न मानै मूरि न लागा।
बिथुरी अलक भुअंगिनि कारी कै जनु अलिन्ह लुबुध फुलवारी॥
कै जनु मदन नराने जौ तपा, सिसिरहि सुमरु पाछु तन छपा।
किमि कच बरनौं राजकुमारा ससि न समाइ दखि अँधियारा॥
मृगमदबास आध तेहि केसा पौन जाइ लइ देस बिदेसा।

सिरजी तब बिधि स्यामता, अब अंग सिरजा लीन्ह।
ते कच सिरजे सार कै सेष बाँटि कै दीन्ह॥ १७७॥

सीस सिँगार माँग बिधि कीन्ही तातें ठाउँ माँग पर दीन्ही।
सूर किरन करि बारहि धारा स्याम रैनि कीन्ही दुइ फारा॥
पंथ अकास बिकट जग जाना, का न जाइ जाहि पथ भुलाना।
तहाँ देखि अलकावलि[२] फाँसा, पथिन्ह परा जीउ कर साँसा॥
जिउ परतेजि चलहिं तेहि माहीं और बाट नहिं केहि दिसि जाहीं।
बेनी सीस मलयगिरि सीसा माँग मोति मनि माथें दीसा।
सूर समान कीन्ह बिधि दीया, देखि तिमिर कर फाट्यो हीया॥

१—मलयागिरि चंदन। २—अलकावली। ३—४ परित्यज्य = त्यक्त।

स्याम रैनि महँ दीप सम नाहि अँजार जग होइ।
अछज भुअँगम माहि बसि दिया मलीन न होइ॥ १७८॥

पुनि लिलाट जस दूजि क चंदा दूजि छाडि जग को कहँ बदा।
पटतर दूजि होति जो होती दूजि माँह दुओं क जाती॥
भाग भरा अस दिप लिलारा तीनहुँ भुवन होइ उजियारा।
होइ मयंक[1] खीन जहि दीसा सो लिलाट कामिनि पहँ दीसा॥
कुंदन तिलक सोभ कस पावा मनहुँ दुइज मां जीउ मिलावा।
मुकुता पाँत चहूँ दिसि पाइ मानहुँ मिली किरितिका[2] आइ॥
जाहि लिलाट भाग मनि होइ अस संजोग सुभ देखै सोई।
सुभ सँजोग वहि एक छिन जा कहँ सनमुख होइ।
जौ जग लागी गरह जिमि बार न बाँक कोइ॥ १७९॥

कुटिल भौंह जानों धनु ताना इन्द्रधनुष तेहि देखि लजाना।
जानहु काल जगत कहँ कढा निसि दिन रहै पनच[3] जनु चढा॥
भौंह फिराइ जाहि तन हरा देखत काल टाइ तेहि करा।
एही धनुष जुध मनमथ लीता के परनाम काम तन जीता॥
भौंह धनुष लखि इन्द्र सँकाना, सब जग जीत सरग कहँ ताना।
कौन सो बली जो न गै मारा तीनहु लोक एक हुँकारा॥
ऐस धनुष जग आर न दूजा (क), देवतन्ह आइ बाहुबल पूजा।
अहिपुर नरपुर जीति कै सुरपुर जीता जाइ।
अब देहु कछु न आलिय का कहँ धर चढाइ॥ १८०॥

बाँके नैन तीष अति दोऊ जगत जाहि सर पूजि न कोऊ।
राते कौल मधुप तेहि माहीं, कहत लजाउँ तेउ सर नाहीं॥
कौल देखि ससिहर कुम्हिलाने, ए ससि संग सदा बिगसाने।

१—मृगांक, चन्द्रमा। २—कृत्तिका = कचपचिया। ३—प्रत्यंचा।
४—यह उर्दू की प्रति में नहीं है। (क) अस धनुधारी और न दूजा। पाठा०।

स्याम सेत अति दोउ सोहाए खञ्जन जानु सरद रितु आए।
कै दुइ मिरिग लरत सिर नीचे काजर रेख डोर गहि खींचे॥
गाउ समुद्र जनु उठहिं हलोरा पल महँ चहत जगत सब बोरा।
तीछ हेर जाहिं चखु आछैं चली मीन जनु आगे पाछैं॥
बर कामिनि चखु मान सम निमिष हरत मन जाहि।
बहुरि जनम भरि मीन जिमि पलक न लागै ताहि॥ १८१॥
बरुनी बान तीख अरु घने सोई जानु जाहि उर हने।
मद सिराय न भाल सँवारे जाके हने सबै मतवारे॥
तापर बिष काजर सों बाँधा सोइ मरै जाहि तन साँधा।
लाग न बरनि बान जेहि हीया, सो जग माँह अमिरथा जीया॥
जते अहैं जीव जग माहीं साधन जाइ बान सो खाहीं।
जगत आइ हार रहा निसाना मकु हौं सौंह मारि तेहि बाना॥
गलि गलि हाड रहे जो आई रहे जो लागि जाइ ता जाई।
एक मूँठ[1] के छाडने लागे बान अलेख।
जग महँ ऐसन पारधी[2], दूसर काहु न देख॥ १८२॥
सुभग सरप सुरग अमोला जनु नारँग बरनारि कपोला।
ईंगुर केसर जानु पिसाए दोऊ मिलाइ कपोल बनाए॥
औंर सो देखि कपोल लुनाई मती हीन कछु बरनि न जाई।
तेहि पर तिल सो देइ अस सोभा, मधुकर जानु पुहुप पर लोभा॥
कै बिधि चित्र करत कर धर (क) करत उरेह बूँद खसि परे।
बदन सिंगार सीभ जो पावा रहेउ न दिन पुनि सो न उचावा॥
वह तिल जाहि दिष्टि तर परा, भयो स्याम तस तिल तिल जरा।
नहिं चीन्हत कोउ काहु कहँ जो जग माहिं न होति।
परछाहीं तिल एक की, सब नैनन्ह महँ जाति॥ १८३॥

१—जितना एक बार छोड़ा जाय। २—तीर चलानेवाला।

(क) कै चित्रित करता कर धर। पाठा।

किमि बरनौं नासिका सोहाई । नासिक सुनि मति थिर न जाई ।
खरग धार कहि आवै हाँसी । कौन खरग जेहि उपमा नासी ॥
तिलक फूल कवितन्ह चित धरा । उहो लजाइ पुहुमि खसि परा ।
(क) इह उघारि पुनि नीर कठोरा । उपमा दैन मन मान न मारा ॥
उह सुर भान जगत उपराई । ससि सूरज जहँ उगै कराई ।
तेहि पर हरि रही मति मोरी । उपमा नहिँ कहि लावौं जोरी ॥
बेसरि जा पहिर रहसाई । नग कुंदन छबि पाउ सोहाई ।
मुकुता बालन निरखि मन । सुर नर इह गुमाहिँ ।
कहत सोहागिनि नासिका । तिहुँ पुर पटतर नाहिँ ॥ १८४ ॥

अधर सुधा निधि बरनि न जाई । बरनत मति रसना पनियाई[२] ।
छुए न काहु अछूते राखे । प्रम दिष्टि मुख अजहुँ न चाखे ॥
विद्रुम[१] अति कठोर आ फीके । सुरँग मृदुल दुख दायक जीके ।
बिम्ब बदन सो सरि न तुलाना । अति लजान बन जाइ दुराना[३] ॥
बदन मयक जगत उँजियारा । अमिरित अधर प्रानदेनिहारा ।
का बरना का मति भइ मोरी । उत्तम अधम लगावउ जोरी ॥
ससि अमिरित देवतन्ह कै जूठा । अगन जान यह अधर अनूठा ।
लोयन जाहि कटाच्छ सर । मारि प्रान हरि लीन्ह ।
अधर बचन तत छिन दोऊ । अमिय सींचि जिउ दीन्ह ॥ १८५ ॥

दसन जानु हीरा निरमर । बदन आनि मुख सपुट धर ।
इक इक नग दुहुँ अग कर माला । जा जिउ देइ कहै सो बोला ॥
पान खान कतु भए उघारे । दिष्टि पर मजुल रतनारे ।
जनु दुइ लर मुकुता रँग अर । मजन लागि आइ मुहँ धर[४] ॥

(क) यह ... प्रति में नहीं है।

१—निकारत है। २—पानी आता है। ३—छुप गया।

४—मजन लागि अमीनुह बर। पाठा । ५—अमिरित छिया आनि कबरे। पाठा ।

कै देवनन्ह सेंसे कीन्ह कियारी अमिरित सालि बारि अनुसारी।
दाड़िम बीज नहा लै बोए, रखवारे राखे अहि पोए॥
निसि वासर ते निकट रहाहीँ मकु सुक पिक खञ्जन चुनि जाहीँ।
इक दिन बिहसी रहसि कै जोति गई जग छाइ।
अबहूँ सेंरित वह चमक, चौंधि चौंधि जिय जाइ॥ १८६॥

तेहि भीतर रसना रस भरी कौंल पाँखुरी अमिरित भरी।
बसन पाँति महँ रही छिपानी बोलन सो जनु अमिरित बानी॥
बोलन बैन अमी जनु चूआ सुनत जिये बरषन कर मुआ।
जस मन अहि कुतल[1] मे खाए बोलि जलि धन सबै जियाए॥
जाके सवन बचन उन आरा ताकर बचन जीउ देनिहारा।
उकतिन[2] बोलन रसन अमाली आँब चढ़ी जनु कोइल बोली॥
ब्याकरना जानै सगीना, पिंगल अमर पन्हि पुनि गीता।
रहहिँ रैनि दिन धाइ महँ, खिजिलि चखु भौ बैन।
त्यौं त्यौं रसन जियावई ज्यौं त्यौं मारहिँ नैन॥ १८७॥

आँब सूल सम ठोढ़ी भई वह आमिल यह अमिरित भई।
तेहि तर गाड अपूरब आभा पाक आब जनु अँगुरी दोभा[3]॥
पाका आँब गात पियराना, वह कुमकुम जनु ईगुर साना।
चिबुक कूप अति नीर गँभीरा, बिब अधर सँजीव जेहि नीरा॥
अमिरित कुंड अगम औगाहा, जा तहँ परा निकास न चाहा।
ताहि कूप ढिग रहत न आहीँ, बूड़न कहँ मुनि लाल[4] कराहीँ॥
परहिँ आइ मन रहइ न देई, कुतल काँट काढ़ि कै लेई।
नैन पियासे रूप जल पीवन जेहि न अघाहि।
कूप चिबुक जो मन परै, बूड़ि बूड़ि रहसाहिँ॥ १८८॥

१—कस, जाल। २—उकतिन = युक्ति से। ३—नोक।
४—चाउ, इच्छा।

सिंधु सुता सम[1] स्रवन अमोला, जल सुत[2] बचन लागि विधि खोला।
जे अमोल नग जगत बखाने नारि स्रवन महँ सबै समाने॥
ग्यान बात बिनु आन न सुना, सुनत मोनि तबहीं सिर धुना।
निसि दिन मुकुता इहे गुनाहीं खंजन झाँकि झाँकि जिमि जाहीं॥
कंचन खुटिला जा न बखाना गुरु सिष देइ लाग ससिकाना[3]।
राहु जुद्ध कहँ खपरि निसंका दुहुँ कर लीन्हे सेलि मयंका॥
मैं पुनि सोभै खुभी सोहाई अबहीं तरिवन कहा न जाई।

कलभ दसन खँभिया दोऊ सोऊ पट तर नाहिं।
एक छिन देखे जनम भरि खुभी रहैं जिउ माहिं॥ १८९॥

अब सुनु बरनौं गीँव सुहाई बिधि कर चाक भँवाइ[5] चढ़ाई।
अँगुरिन बीच रही जो रेखा सोइ चीन्ह रेखा नहीं आ देखा॥
केलि सम कैंतर[6] की रीसा तत छिन चलो लाइ भुइँ सीसा।
नाखन मोर गीँव सर जोखा, तबहीं सीस पाइ धरि रोखा॥
सख न सम भा साँझ सँकारा तातैं जहँ तहँ करै पुकारा।
तबही छरन[7] आन अपछरा भूषन लाग न बाँधै छरा॥
बोहीं कंठ जानु जिन्ह दीठी अमिरित चाहि न पूर मीठी।

सोहत हाँस जराउ गर बदन हठ निकलंक।
सर[1] न मयंक सूर जनु दुरत राहु के संक॥ १९०॥

दीरघ बाहु कलाई लोनी अति सुंदर जग भई न होनी।
दुहुँ पैनाल सोऊ सर नाहीं, तातें रथ[9] कलेजे माहीं।
सुभ्र भुजन पर टाँड[11] सोहाई, टाँड नहीं छबि पाव सवाई॥
देखि धुनहि गन गभ्रव माथा, एक सो इंद्र बज्र पुनि हाथा।

१—सीप। २—मोती। ३—[illegible] अथवा [illegible]। ४—चुभी हुई सी। ५—घुमा कर। ६—कबूतर। ७—छरना = [illegible], हीनता या तुल्य। ८—हसुला, गले का एक आभूषण। ९—बराबरी कर सका। १०—रथ = छंद। ११—एक बाहु का आभूषण।

देखि सो मञ्जुल सुभ्र कलाई, का न गयौं बनफलै सिधाई(क) ॥
वहि सग देखु आ जुरी हथोरी[1] कौल पाँखुरी ईंगुर बोरी।
विद्रुम बेलि सो अँगुरी दीसी वह कठोर यह मुँगफली सी ॥
अँगुरिन मुँदरी अरित की सोह छला प्रति पोर।
अमीकरन नग आखि जनु गाठि कनक के आर ॥ १९१ ॥
हात उतग सिहन[2] निरमरे, एक डारि दोइ नारँगि फरे।
कनक कगेरी दुइ गुन भरीँ, सकर पूजि उलटि जनु धरीँ ॥
झीने पट महँ झलकन दीसी जनु भीतर द्वै कँवल कली सी।
मुकुताहल चिच सोभा केसो, चकवा छवा बिछुरि जनु बैसो ॥
होत उतग दोऊ अति लोने, जनु द्वै बीर छत्रपति होने।
अबहीँ छत्र सीस नहिँ छाजू छबिन जहाँ तहाँ कर साजू ॥
दान दुद जारी गुन भरी दुई जनु डँका[3] उलटि कै धरी।
गढपति हयपति दुरदपति सुनि कुच कथा अकाथ।
होइ भिखारी सब चहहिँ, आइ पसारन हाथ ॥ १९२ ॥
रामावलि अबहीँ उर छीनी बरनि न सकै विधि मति हीनी ॥
सखि सुमेरु लही अहि पोवा, सीतल ठाँव पाइ जनु सोवा।
अमिरित अधर बास सुनि माती, उर जनु चढो पपील क पाँती ॥
द्व नृप सीँव लागि रिस बाढी रतिपति आनि लीक जनु काढी।
सौंरस रोमावली सोहाई, हेबर जाय दरलि सी खाई ॥
पौहन हिये जोरि वहि दीसो होइ लीक वह पाहन की सी।
नीँद न परी जनम भरि आगा, जिन्ह नैनन्ह होइ रही सरागा ॥
खैँची लीक हदीस की विधिना हियेँ विचार।
तिहुँपुर रोमावलि सरी, आन न दूजी नार ॥ १९३ ॥
नाभि कुण्ड पुनि अति गहिराई, जब चित चढै बूडि जिउ जाई।
सिधु भौंर जहँ पानि फिरावा, तह परि जनम निकास न पावा ॥

१—हथेली। २—फा सीना = छाती। ३—डंका। ४—छाती।
(क) न किये बल वली सिहाई। पाठा०।

बिगसत पंकज कली सोहाई, अजहुँ भौंर बास नहिं पाई।
छीर सिंधु मथनी जब काढ़ी, नाभि भौर आही जहँ ठाढ़ी॥
नैनूँ[1] त कोमल सो ठाउँ जीभ कठोर लेउँ का नाऊँ।
रोमावलि सोभा तेहि पासा, नैनूँ ते जनु बारि निकासा[2]॥
आसौं ग्यान हाथ भा हीना, जनमत धाइ नार जिमि छीना।

नारि पेट जेहि थत नहि, बारिधि गहिर गँभीर।
नाभिकुंड मन जा परे बहुरि न निकसै तीर॥ १९४॥

पातर पेट कहउँ का काई जनु बाँधी ईंगुर की लोई।
मनहु महाउर बूध सौ पागा, सतत[4] रहे पीठि सो लागा॥
छीर न पिये अतिहि सुकुवारा, कै तँबोल के फूल अधारा॥
बिनु रस पान आन नहि खाई, सोऊ बिकल करु अधिकाई।
तेहि तर त्रिबली अति सुख देई, गढ़ी बिधातै काम पसेई[5]॥
सोभित तीनौ रेख सोहाईं, तीन भुवन नहिं उपमा पाई।
सिसुता जानि तरुनता मिली तीनौं रख खाँचि कै चली॥

सिरजत भार नितब के, मिलत न कीन्ह सँबधि।
मनु कटि राखे बाँधि के, त्रिबली बँधन बधि[1]॥ १९५॥

अति सुकुँवारि लँक पुनि छीनी, दिष्टि न परै बारहु तब खीनी।
देखत सकुचै देखनहारा टूटि न परै दिष्टि के भारा॥
काम कला दुई साँचे भरी सकल सोहाग जोरि जनु धरी।
बिधिनै तारि जोरि पुनि लीन्हे, तातैं नाउ निगम कटि कीन्ह॥
अपने थल भूखे कहरी कोऊ कहैं कटि तिन्ह की हरी।
देखि लंक भृंगी[7] कटि टूटी, भँवति फिरै जनु सपति लूटी॥
तहँ सोहै किंकिनि कटि कसी काछे जनु आहे उरबसी॥

१—नवनात = मक्खन। २—निकाला। ३—सोदा। ४—सतत – नित्य सदा।
५—पसीकर, सच निकाल क। ६—गाठ। ७—एक कीड़ा, बिलनी।

सोभित किंकिन निकट कटि, मान उपम जी आइ।
हंस पाँति तजि मानसर, परबत बैठे जाइ ॥ १९६ ॥

सुभ्र नितंब नितंबनि केरे, गए हेराइ सोई जनु हेरे।
जनु संगम दुइ परबत अहहीं एक बार कै बाँधे रहहीं ॥
तेहि पर कटि सोभित निरमरी जनु सिंहिनि गिरि ऊपर धरी।
दुइ गिरि सम दोउ मगु जहँ नाहीं चित के चरन चढ़न बिछलाहीं ॥
मति नितंब बरनत झिझकाई, मति की दिष्टि न आगे जाई।
परगट सा कवि कीन्ह बखाना गुपत सो अंतरजामी जाना ॥
जहाँ जात मन पिंडुरी काँपी, तहँ की बात रहा सब झाँपी।

गुपुत जो रचना विधि रची परगट नहिं हानिहार।
ग्यान तहाँ नाह सचरे, जानै सिरजनिहार ॥ १९७ ॥

पुनि जंघा अति सुंदर साजी जुगल जंघ तिहुँ लोक बिराजी।
केरा खंभ कुम्भ कर हेरी जंघ निकट वे दोऊ करी।
अति सुंदर सम तूल[1] सुहाए जनु बिधि अपने कर चिकनाए ॥
सुरति करत सुख संपति हरी मन की दिष्टि थलकि तहँ परी।
गौन समै जनु चमकत चूरा, हंस गयंद गरब धरि चूरा[2] ॥
सीस धुनै गज लज्जित भए हंस मानसर बूडन गए।
छवाछीन भूषन छबि हरी पायल आइ पाय लै परी ॥

चकइ[3] जराऊ जेहरी जेहरि जिउ लै जाइ।
सुर नर हू झाँझर भए देखि सो झाँझरि[4] पाइ ॥१९८॥

चरन कँवल पर मन अलि गए जहि मगु चले तहाँ रज भए।
मकु तेहि पथ गौन पुनि करई, भूलि पाँव इन्ह नैनन धरई ॥
तरवा ऊर्ध्वरेख[5] सुभ बाँची सुरनर हिय लीक जनु खाँची।

१—सुहाल। २—नाश किया। ३—एक आभूषण। ४—झाँझ, एक पैर का आभूषण। ५—ऊर्ध्व रेखा पैर में होना सामुद्रिक में शुभ माना जाता है।

जेहि जेहि पथ चरन त चले केतै हिये पाँय तर मले ॥
रकत लाग रह पायन सगा जानहिं लोग महाउर रंगा।
चलत चरन भुइँ परे न देहीं सुर नर मुनि नेनन पर लेहीं ॥
अनवट बिछिया अगुरिन भरे मेन सोनार रतन नग जर।
जेहिं चित चित्रावलि चरन चित्र किए लिखि आमि।
ते जनु मगु बाहर कियो हियें सरावर पानि ॥ १९९ ॥

वह चित्रावलि आहै सोई तीन लोक बंदै सब कोई।
सुर पुर सबे ध्यान वोहि धरहीं अहिपुर सबै सेव तेहि करहीं ॥
मृतुमडल[१] जो देखा हरी घर घर चले बात तेहि केरी।
पछी वोहि लगि फिरहिं उदासा, जल के सुत[२] आहि नाउँ पियासा॥
परवत जपहिं मैान होइ नाऊँ आसन मारि बैठि एक ठाऊँ।
पुहुमी दहु जो सरग लहु बढी सेवा करतहिं एक पग ठाढी ॥
जानि बूझि जो ताहि बिसारा सो मनु जियतहिं मरा अडारा।
अति सुरूप चित्रावली, रवि ससि सर न करेइ।
धन सो पुरुष जो धन हिया वोहि क पथ जिउ देइ ॥ २०० ॥

भए सुनत चित्रावलि करना कुँअर नैन पवत क भरना।
गयो चेत चित रहो न ग्याना जनु एहि सागर ल—छ हराना(क)।
माथें चढी लहर जनु आई विसम्हरि[३] परा पुहुमि मुरझाई।
गहि जोगी पुनि कुँअर उठावा खेह भारि समुख बेठावा ॥
कहेसि कुँअर कस भए अचेता वहु सम्हारि हियें करु चेता।
एको बात कहै नहिं पूछी, जनु गा जीउ देह भइ छूछी ॥
मूँदे नैन साँस पुनि लेई सुनै न कछू उतर नहिं देई।
प्रेम मत्र जोगी कहै, कुँअर स्त्रवन महँ तंत्र।
सुनत नाउ चित्रावली निजन[४] गया विष सत्र ॥ २०१ ॥

१—पृथिवी। २—जल जन्तु। (क) जनुएहि दसा मरगनियराना। पाठा।
३—बेहोश हो के। ४—निरधन = नाश।

जबहि कुँअर जागा जनु सोई गहिसि पाउ जोगी कर रोई ॥
सो तुम रूप बखाना देखा भइ मनसा होइ उड़उँ परेवा ।
पुनि मन महँ अस होइ गियाना आउँ कहाँ जो पथ न जाना ।
कहु सो केहि दिसि नगर अनूपा जहाँ बसै वह नारि सुरूपा ॥
चलौं न करौं बिलँब एक घरी निस्फल जाइ घरी जो टरी ।
औरु न मोरे हियँ विचारा सीस मोर यो चरन तुम्हारा ॥
किचित रैनि जाइ तहँ ताईँ चरन लाइ लै चलहु गोसाईँ ।
लोचन रह चकोर होइ हिया सकल उनमाद ।
मकु ससि मुख चित्रावली देखौं तुव परसाद ॥ २०२ ॥

कहेसि कुँअर यह पथ दुहेला अस जनि जानु हँसी औ खेला ।
अगम पहार विषम गढ़ घाटी पंखि न जाइ चढ़े नहि चाँटी ॥
खोह खराट जाइ नहिँ लाँघी देखि पतार काप नर जाँघी ।
जाइ सोई जो जिउ परतेजा सार पाँसुली लोह करजा ॥
तैँ अबहीँ घट आप न बूझा बार देखि पिछवार न सूझा ।
बैठे वैहँ सेँध पिछवारे मूँसहिँ तसकर घर अँधियारे ॥
तैँ दै बार रहा गहि कूँजी रही न एको घर महँ पूँजी ।
निसिबासर सोवहि परा जागेसि नहिँ पल आध ।
घर न सँभारसि आपना का लेवे एहि साध ॥ २०३ ॥

एहि मगु केर करै जो साधा चलत निचित न होइ पल आधा ।
चाहै चरन चुभै जो काँटा चलै बराइ मारग नहिँ छाँटा[1] ॥
जौ पल एक कोउ बिलँमावै, साथ जाइ पुनि पथ न पावै ।
एहि मगु माहँ चारि पुनि देसा, जस जस देस करै तस भेसा ॥
चारिहुँ देस नगर हैँ चारि पथ जाइ तेहि नगर मँझारि(क) ।
चारिहु नगर चारि पुनि कोटा, रहहिँ छिपे एक एक क ओटा ॥
जो कोउ जान न चार[2] विचारा, बीचहिँ मारि लेहिँ बटमारा ।

१—छाड़ । (क)—बीचहि मारि लाहँ बटपारी । पाठा । २—आचार ।

चारि देस बिच पथ भो अब सुनु राजकुमार।
बेगर बेगर बरन गुर जस कछ तहँ व्यवहार ॥ २०४ ॥

प्रथम भोगपुर नग्र सोहाया भोग बिलास पाउ जहँ काया।
दुइ दुआर कर कोट सँवारा आवागमन यही दुइ बारा।
पुनि दूनहुँ दिसि अपुरुब हाटा अनबन भाँति पटन सब पाटा॥
आ कछु चाहिय सबै बिकाई मिरतक देरि जीभ ललचाई।
कहुँ पचअमिरित जेवनारा कहुँ सुगंधि करै महकारा॥
कहुँ नाच कहुँ कथा अनूपा कहुँ मिरदुल अति ससिहर रूपा।
इन्द्रपुरी जनु चहुँ दिसि छाई जो आया सो रहा लुभाई॥
घर घर मोहन जानहीं पथहिं बस कै लेहिं।
माया रूप देखाइ कै आगे चलै न देहिं॥ २०५ ॥

बसै भोई भोहि नगर मँझारी लेखा जानि होइ बैपारी।
सूधे मारग आवै जाई माटी लेखे बिपै पराई॥
सो देखै जेहि दोष न पावा सुने सोई जा पंडित सुनावा।
खाइ सोई जेहि ऊठ साँसा फिरै न माय लेइ सो बासा॥
मिलि क पाँच देहि जउनारी, सुगत ताहि साई बपारी।
आपन भस मागि कै लेई राज भस बिनु माँग दई॥
पाँच जूनि कै राजजाहारू करत रहै अस जग बेवहारू।
धरे छोह चित नेह सों रँस की डार रिसाइ।
ऐसी चलन चलावहि तेहि भल पाँच कहाइ॥ २०६ ॥

पथी जहि आगे है जाना सो व्यवहार कहौं कछ काना।
चख होइ नस मूँदे नैना बहिर होइ तस सुन न बैना॥
रसना मौन होइ नहिं भाषा, षट रस अमी न पावे चाषा।
मूँदै नास साँस नहिं आवै काम क्रोध के छार जरावे॥
दुष्ट के हनत न पाछे टरई पगु जो उठाइ आगु मन धरई।

१—अलग अलग। २—राजा का दंडना = निमान। ३—मि ।

[illegible]

बिलँब न लावै मन जग मंदा निसरै तोरि मीन जिमि फंदा ॥
पथी जो ओहि बार लहु जाई आगु कवार उघारि कै जाई ।

चित रहसत पट उघरत, मिटै नैन अँधियार ।
जैसे बाते स्याम निसि होइ विमल भिनुसार ॥ २०७ ॥

आगे गोरखपुर भल देसू, निबहै सोई जो गोरख भेसू ।
जहँ तहँ मढ़ी गुफा बहु अहहीं जोगी जती सनासी रहहीं ॥
चारिहु ओर जाप नित होई, चरचा आन करै नहिं कोई ।
कोउ दुहूँ दिसि डोलै बिकरारा कोऊ बैठि रह आसन मारा ॥
काहू पंचअगिनि तप सारा कोऊ लटकहि रूखन डारा ।
कोऊ बैठि धूम तन डाढे कोउ विपरीत रहे होइ ठाढे ॥
फल उठि खाहिं पियहिं चलि पानी, जोंचहि एक बिधाता दानी ।

परम सबद गुरु देइ तहँ ऊहि चेला सिर आग ।
नित जेहिं ड्योढ़ी लावई रह सो ड्योढ़ी लाग ॥ २०८ ॥

नाहि देस विच आहि सो पंथा, चलै सोई जो पहिरै कंथा ।
तेल नाहिं सिर जटा बढ़ावै रजक नासि जु बसन रँगावै ॥
भसम देह पग पाँवरि होई, पहि मग बिकट चलै पै सोई ।
मेखलि[1] सिंगी चक्र अधारी, जोगौटा[3] रुद्राष[4] धँधारी[5] ।
भल मेंद बसैं तहाँ इक भेसा होइ बिचार न रॉक नरेसा ॥
एही भेष सिद्ध बहु अहहीं एही भेष बहुत ठग रहहीं ।
एही भेष सों बहु ठग आए, एही भेष सों बहुत ठगाए ॥

जो भूले एहि भेष जग, खुले न तेहि हिय आँख ।
आगे चलैं न तहँ रहैं, बहु फिरि आवैं पाछ ॥ २०९ ॥

जो काउ आगे चाहै चला, परगट देह भेष सो रला ।

१—मेखला । —सिङ्गी = एक बाजा जिसे गोरखपंथी रखते हैं । यह सींग का होता है और इसे पूजा में बजाते हैं । ३—मोरा । ४—रुद्राक्ष । ५—डंड ।

पे अनर सब जानै अधा अष पत्याइ[१] सोई जग अधा ॥
घटही माँहि भेष सो लेख हिय के लोचन मारग देख ।
काया कथा ध्यान अधारी सींगी सबद[२] जगत अधारी ॥
लोचन चक्र सुमिरनी साँसा माया जारि भसम कै नासा ।
हिय जोगोट मनसा पाँवरी प्रेम बार लै फिरि भाँवरी ॥
परगट भेख तहाँ दह डारं आगे चलै सो पँवरि उघारं ।

रहहि नैन जो जोति बिनु दीपक पहिल मिलानु ।
पुनि ससिहर सम दूसरे होहिं तीसर भानु ॥ २१० ॥

आगे नेहनगर भल देसू, राँक होइ जहँ जाइ नरसू ।
भूलै देखि देस की सोभा जहँवहिँ देखनहा चित लोभा ॥
जाइ तहँहिँ जहँ काइ लै जाई, ऊँच खाल सम एक देखाई ।
खाइ सोई जो कोई खिआवै, बिष अमिरित एक स्वाद जनावै ॥
भल औ मद दोऊ एक लेखा दुइ न जान सब एक के देखा ।
मारि गारि जिय राख न काहू, रहस न हाउ किए कछु छाहू ॥
उतर न देइ जो काउ कछु कहा ऐसें रहै तहाँ सो रहा ।

पथ नाहि पुनि पथ सो ताहि देस निज पथ ।
बिनु गुरु काऊ न जानई औ पुनि पढ़ गरथ ॥ २११ ॥

आगे पथ चल पै सोई जाके सँग कछु भार न होई ।
डारै कथा चक्र धँधारी करै मया जिय काया सारी ॥
पेखन जित्र जहि लोभ न होई रूपनगर मधु दख सोई ।
हेरत तहाँ पथ नहिं पावा हरन चहै जो आपु हरावा ॥
पथिक तहाँ जो आइ भुलाना बिमल पथ तेहिँ पहिचाना ।
आवहिँ रूपनगर के लोगा परषन फिरहिँ कौन तेहि जोगा ॥
जो तेहि जोग लषहिँ जिय माहीं आगें हाइ नगर लै जाहीं ।

१—प्रतीति कर । २—अनहद शब्द का अलख ।

रूप भेष उनहिं क सजहिं औ सिषवहिं सब भाव।
ऐस न जानहिं तेहि काऊ, आन कहूँ ते आव॥ २१२॥

रूप नगर अति आह सोहावा जेहि सिर भाग सो देखै पावा।
अतिहिं डेरावन अतिहि सो ऊँचा काटि माँह कोउ एक पहूँचा॥
बहुनन्ह कीन्ह जोगि कर भेसा चले छाँडि घर मन धोहि देसा।
तैं सुखिया सुख कौतुक राता का जानसि दुख पथ कि बाता॥
भोजन निदु मुख जाइ सुखाई पानी बाजु कवल कुम्हिलाई।
छीन बसन जेहि अँग न सोहाई कथा कैसें सकै उठाई॥
सौरि माँह जिन बनउर टोवा[1] कुस साथरी सो कैसें सोवा।

बसन अपूरब पहिरि तन लावहु मोद सुवास।
अहहिं नारि अछरी सरस, मानहु भोग विलास॥ २१३॥

---

(१४) उद्योग खड।

कहिसि कुँवर सुनु गुरु परेवा, सुनि सो पथ उपजे उर केवा।
अब मोहि उहै पथ पै जाना, प्रेम प्रीति लै कीन्ह निदाना॥
मैं सुख तजि दुख लीन्ह सम्हारी, कै जिउ आइ कि मिलै सो नारी।
मोर दुख आदि सँघाती आहा मिलि आइ मैं सोइ सम्राहा॥
काकर सुख काकर यह राजू, दुखियहि अपने दुख सौं काजू।
भलेहूँ नारि अछरी सम पाई, मेघ पियास कि ओसहि जाई॥
औं चकार चँदहि चित लावा, कहा सो तरागन महँ भावा।

राज पाट सुख सकल अब, मोहिं न कछू सोहाइ।
चित लाग्यो चित्रावली, दुहुँ विधि कब लै जाइ॥ २१४॥

जब ते चित चित्रावलि महियाँ इहाँ क रहन न जानौं कहियाँ।
सक सँकोच न एकौ हियँ मोहि अब प्रेम पथ सिर दियें॥
अस साहस उपजा जिय माहीँ, आहै नियर दूर जनु नाहीँ।

१—टटासा।

जो विधि देत पख तन मारे अबहीं चलि उडि देखत तारे ॥
अगिलि होइ तो सनमुख आऊँ समुद होइ ना सोंह धसाऊँ ।
अँकरारा सम गनो पहारा लेखों समुद हिए मह नारा ॥
कबलों रहों परा घर घरे कहु उठि लागों पथ सबेरे ।
मैं अनाथ तुम्ह नाथ गुरु गहि दै बाहु सम डोर ।
तैं मोर अगुवा पथ नह मैं पिछरगुवा तोर ॥ २१५ ॥

लिहचे प्रेम सुरा इन्ह पिया उतरे मात न जा रहु जिया ।
सुना परखा कुँअर कि बाना निश्चय कहसि कि यह आहि राता ॥
लिहचै प्रेम पथ इन्ह गहा राज पाट तजि दुख सग्रहा ।
अब लै चलों विलंब नाहिं लादा ल चित्रावलि आस पुरावों ॥
वे पुनि अबलहुँ बहु दुख सहा, दहुँ घट मँह किमि जिउ आहि रहा ।
जस यह यहि के दरस पियासी, तस यह तोहि लगि हून उदासी ॥
अब जो मिलहिं बहुत सुख होई, आ सुख तिनहि जो देखे कोई ॥
माम जगत तेहिं जनम ल, बहुत भाँति सुख होय ।
इहि सम सुख नहि आर दुख, मिल जो माने दोइ ॥ २१६ ॥
कहसि कुँअर तैं साहस बाँधा चल अब तोर भार मैं काँधा ।
अब तोहि रूपनगर ल जाई चित्रावलि सों देउँ मराई ॥
पै कहु मोहिं घर छाडब कसे मया फाँस निरुआरब[3] कसे ।
मात पिता लागहि सँग दोऊ, एकसर ताहि न छाडै काऊ ॥
कुटुँब लोग जन परिजन तारा सब मिलि करहिं मया नहिं थोरा ।
मया मोह घर घरे आवा बिछुरत लोग सब दुख पावा ॥
यह सो पथ खरग की धारा सहस माँह कोउ गवन पारा ।
बन बीहर नारा नदी लाँघत बहु दुख होय ।
आपनि आपनि तहँ परे काहु कि सुने न कोइ ॥ २१७ ॥

१—नशा, मद । २—मि[illegible] निरुएवा ना मिल [illegible] दो ।
३—दूर करना, छोड़ना ।

कहेसि कुँअर पूछहु का माहीँ आपन भार दीन्ह मँ तोहीँ।
हौं अजान तू पँडित सयाना पढ़िन पूँछै जानि अजाना॥
करहु सोई जा महँ भल होई जा तुम कहहु करौं मँ सोई।
मैं बिचारि देखा मन माहीँ भाइ बधु काउ काहु क नाहीँ॥
का कर पितु को का कर माना, कहाँ क लोग कुटुब कर नाता।
जस दिन आते परे अँधेरा पंछि आइ तब लेहिँ बसेरा॥
भएँ भोर दिनकर परगासा, नैन कौल पुनि करहिँ बिगासा।
रवि प्रसाद पथ सूझई मिटै मन अँधियार।
जाहिँ जहा ते आइ इत, तजि तरवर की डार॥ २१८॥
कहिसि कुअर अब आपु सम्हारहु राज काज कर लाज उतारहु।
काढहु दगल सुहावन राता पहिरहु त्रिरकुट कथा गाता॥
मनि कुडल मकराकृत डारहु, फटिक मुदरा[१] स्रवन सँवारहु।
गोवहु बदन भसम चढ़ावहु किंगिरी गहहु वियोग बजावहु॥
तजहु सेल कर लेहु अँधारी धोर सुमरनी चक्र अधारी।
सिंगी पूरहु जटा बरावहु, खप्पर लेहु भीख जहि पावहु॥
काँधे लेहु बाहि मृगछाला गीवँ पहिरहु रुद्राच्छ क माला।
करहु कान जनि एकहू कहै कोऊ औ लक्ख।
पहिरि लेहु पग पाँवरी गोलहु सिरीगोरक्ख॥ २२०॥

(१५) प्रस्थान खड।

कीन्ह कुँअर जो जोगि कहा, देखत लोग अचँभौ रहा।
बोलि सुबुधि सौं कहा बुझाई मात पिता सौं कहियहु जाई॥
पहिलें पालागन जस अहा, तौ पुनि कहब कुँअर अस कहा।
आपन जिउ मैं खोआ जहाँ पाएउँ चाह चलेउँ उठि तहाँ॥
रूपनगर है दक्खिन देसा चलेउँ तहाँ करि जोगि क भेसा।

[१]—कुडल, यह चक्र के आकार का होता है और गोरखपंथी साधु इसे कान पहिनते हैं।

चित्रावलि राजा की बारी जिहि क बिरह दुख ग्रहौं दुखारी ॥
परम सँजोग आइ मकु पावौं, आपन जीउ माँगि ल्र आवौं ।
तुम्ह चित चिन्ता अनि करहु हम ग्रस आउ बिचारि ।
जौं घट जिउ है फिरि मिलहिँ नरबर कोगि जाहार ॥ २२१ ॥
तत थन दोउ जन करि उपचारी[1] झोलि मतरा लीन्ह सँभारी ।
नैनन्ह महँ लुकअजन दीन्हा ग्रो मुख घालि गोटिका लीन्हा ॥
डडा डोंकि चले उठि दोऊ न देखहिँ उन्ह देख न कोऊ ।
देखत लोग ग्रचक होइ रह कहाँ भए विधि ए जो ग्रह ॥
जत कग धावहिँ जहँ महँ जोवा दिष्टि न ग्राव करें सब रावा ।
देखि चरित्र नैन हिय जाग ग्रापु ग्रापु कहँ रावन लागे ॥
जस ये देखत गए हेराई एक दिन हमहूँ जाब बिलाई ।
कौन भरोसा देह का, छाड़हु जतन उपाइ ।
कागद की ग्रस पूतरी पानि पर घुलि जाइ ॥ २२२ ॥
कही काहु राजा सों आई कुँअर गया कछु चटक[2] लाई ।
जोगी एक कतहुँ तँ आवा नहिँ जानी का भेद सुनावा ॥
कै कछु ग्रानि खियाएसि मूरी कै पढ़ि कै सिर मलेसि धूरी ।
भगा[3] फारि वह पहिरेसि कथा कोऊ न जान गयो केहि प गा ॥
गयो सभन्हि पुनि चेटक लाई देखत देखत गया हेराइ ।
गयौ कौन दिसि काहु न जाना के ग्रकास के धरनि समाना ॥
बल एक सुबुधि निकट प रहा तासों कछुक सँदेसा कहा ।
राजा सुनि पुहुमी परे परी मँदिल महँ हूल ।
धाइ लछिमिदेइ माता व्याकुल फारि दुकूल ॥ २२३ ॥
घर घर नगर परा सुनि सोगू रावँ बार बूढ सब लोगू ।
फिरि फिरि राजा खाइ पछारा, रानी बदन हहिर कै धारा ॥
तोरि कस ग्रौ सीस उघारा को ले गयो मोर मों बारा ।

१—तान्त्रिक प्रयोग । २—तंत्रिक प्रयोग । टोटका । जादू ।
३—लबादा = जामा ।

निकट होत अस होत न भगा जोगिनि होइ जाति हौं सगा ॥
मैं पापिनि कछु जिय न बिचारा बारे दिनन दूरि कै डारा ।
पूत बियोग मरत हौं झूरी छूँछ जानु मेलि सिर धूरी ॥
को अस आइ देखावैं पथा जोगिनि होउँ पहिरि गर कथा ।

गात गात भागा भए टूटे सिर सिर केस ।
राउ राँक सब रोवई रोव नगर नरेस ॥ २२४ ॥

---

(१६) सुबुद्धि खंड ।

सुबुधि आइ तहँ देखी करा घर घर सोग नगर महँ अहा ।
राजा निकल सँभार न आपू भो रानी बहु करे बिलापू ॥
कहसि बाँह गहि चेतहु राजा तुम्ह पुहुमीपति सोग न छाजा ।
जौ तुम्ह पुरुष मरौ अस रोई मेहरिन्ह[1] का समुझावे कोई ॥
छमा करहु अब सुनहु नरेसा अकत कहा जो कुँअर सँदेसा ।
लाग्यौ मातु पिता क पाया कहसि नजहु जनि जिय ते माया ॥
सपने जीउ खोइ जहँ आएउँ तेहि की चाह इहाँ अब पाएउँ ।

दच्छिन देस नरेस एक चित्रसेन तेहि नाउँ ।
तेहि घर धिअ[2] चित्रावली स सिमुखि कहत लजाउँ ॥ २२५ ॥

रूप नगर तहँ बसे सो नारी, पुहुमी बिधि अछरी औतारी ।
चित्र एक वै लिखा बनाई मोर जीउ ते लिन्ह चोराई ॥
सो न चार जिन जीउ चोरावा चोर सो जो अस चार बनावा ।
पाएउँ खोज चार बस जहाँ अगुवा मिलो चल्यों उठि तहाँ ॥
चोर सुनत जो बिलँब न लावै उठि धावै तहँही पै पावै ।
जो बिधि करे न आगे भगा, आनौं जीउ चार लै सगा ॥
भा बिचार अस हम चित माहीं, तुम्ह चित करुन[3] करहु कछु नाहीं ।

१—स्त्रियों का । २—सदुहिता = कन्या । ३—करुणा = विलाप ।

इहै सँदेसा कहत खन ठाढ़ भया उठि राउ।
लुकअंजन चखु देइ कै तहँवहिँ गया छपाय ॥ २२६ ॥

अब तुम्ह चित करहु जनि डीयें मिलै न पुल कछु चिता कीयें।
देहु दान पर हाथ उँचाई बिकट पथ किन होइ सहाई॥
भूखेहिँ भोजन बसतर नाँगा देहु पियासहिँ जल बिनु माँगा।
इहाँ देइ जा उहा सो पावै इन्छा मिलै बगि घर आवै॥
दुहु जग हितू दान सम नाहा बूडत दधि काढ गहि बाहा।
खेवक दान होइ मँझनीरा गहि गुन खइ लगावै तीरा॥
एक देइ दस पावहिँ लाहू दै देखहु जा न पनियाहू।
धरनीधर नृप खन चित उघरा खोलि भँडार।
देइ दान ओ माँगै करै न कछु बिचार ॥ २२७ ॥

(१७) यात्रा खड।

आगी चला कुँअर लॅग लाई जैसे पान पात ल आइ॥
आगे चला आइ सो आगी, पाछे लागा कुँअर बियोगी॥
बन बीहर जहँ लहु नदि नारा गिरि सायर[1] गहि बाह उतारा।
परबत लाँघि देस एक पावा दिष्टि परा एक नगर सुहावा॥
कचन कोट अराउ कँगूरा चहुँ दिस बाचटि मन्दिल तूरा।
घर घर होइ गीत झनकारा चदन मद बास महकारा॥
औ चारिहु दिसि तरुवर पाँती सीतल छाहँ सुहावन भाँती।
देखत भाव चहुँ दिसि आयतन गीत सोहाय।
छाँह देखि भा कुँअर मन छिनक तहाँ जिलम्हाय[2] ॥२२८॥

जोगी कहि कुअरहि समुझावा हम पथी यह नगर परावा।
जो अनि सुदर कोट बिराजा पथिहि दिष्टि न ऊपर छाजा॥
पथिहि चाही दिष्टि तराहीं चलत न चुभै काँट पग माहीं।
औ तुम्ह कीन्ह जोग कर साजू, जागिहिँ कहा भाग सों काजू॥

१—सागर। २—विश्राम लय।

औ अति आह सुहावन गाऊँ, छाडे गाँव केर का आऊँ।
नियरहिँ आह देस पुनि तोरा, अब केहिँ बिलँब कोन दहुँ ओरा॥
आगे अबहिँ दूरि है जाना पहि रे गाँउ तो पहिल पयाना।
नाँच कूद कसबा[1] इहाँ ठाँव ठाँव बहुताइ।
जा कहँ जाना दूरि है नियरहिँ कस बिलँमाइ॥२२९॥
ठाँर ठाँर पुनि छाँह सोहाई, पथी होइ सो कस बिलँमाई।
पथिहि कहा धूप औ छाहाँ चलै जरन पग भूँभर माहा॥
जोगी सोई दरस कर राता छाला पाँवरि सूरज छाता।
आगे दूरि नदी औ नारा लिबहै सोइ जो तिसना[2] मारा॥
यही नगर देखत मनियारा यही नगर बसहिँ बटपारा।
यही नगर जह माहनि डारहिँ पूँजी लेहिँ आउ पुनि मारहिँ॥
सोई पुरुष जो बिलँब न लावै आँखि मूँदि कै पाँव उँचावै[3]।
बहुत इहाँ लगि आवहीँ देखत नगर लोभाहिँ।
कोऊ एक आगे चलै नत इहवँ रहि जाहिँ॥२३०॥
सुनिकै कुँअर चेत चित चेता, हीरदै लिखा कहा गुरु जेता।
लोचन मूँदे चरन उँचाए छिन महँ नगर नाँघि कै आए॥
और देस महँ और भाषा, कीन्ह सो जो कछु गुरु सिखावा।
देखि देस औ देसाचारा गिरि सायर सब उतर पारा।
सुना सो जो कछु सुना न काना देखा सो जो न जाइ बखाना॥
गुरु जाहि चेला सँग होई, नाहि कहा बिलँमावै कोई।
नदी नार परबत की घाटी गुरुप्रसाद सब लेख माटी॥
मूँड मुडायें जग फिरे जोगी होइ न सिद्ध।
जा कह गुरु किरपा करहिँ, सो पावै नौ निद्ध॥२३१॥
ततखन पोन बास लै आवा, भा हुलास हिय लागु सुहावा।
जगमग जोति दिष्टि जो परी, भा भिनुसार गई सरवरी[4]॥

१—नगर। २—तृष्णा। ३—उठाव। ४—शवरी = राति।

क जनु चमकै बिज्जु अकासा, के जनु भोर सूर परगासा।
कहसि गुरू [1] अचरज एक हुआ पूरब छाडि दखिन रवि ऊआ॥
ठावँ ठावँ तारागन अहहीँ सूरज उए नखत किमि रहहीँ।
चौंधी दिष्टि निहारि न जाई कहुँ ससिहर कहुँ सूर दिखाई॥
धान आजु पुनि सीतल बहा मिलन सिरान हिया जो दहा।
मिटल आइ अँधियार अबु, हात आउ उजियार।
जैस बीते स्याम निसि, होइ आव भिनुसार॥ २५२॥

सुनि क बोला गुरू सरखा लहच रूपनगर तुम्ह देखा।
एही नगर जहँ बसे सो नारी, जहि लगि क्या भसम कै जारी॥
एही नगर तुम्ह सुना सो देखा रूप नगर कबिलास बिसखा।
यही नगर आ सो जग राना इछ तुम्हार पुजाव बिधाता॥
इहहिँ छाडि जिउ गया सरीरा अब जिउ मिलिहि राखु मन धीरा।
दुख की रनि बीति सब गई सुख रबि किरन सो परगट भई॥
एही नगर जेहि लागि बियोगी इहवहिँ सिद्ध होहिँ सब जोगी॥
एही ठोर कबिलास सम रूपनगर तेहि नाउँ।
कतहुँ होइ कोउ जोगी, सिद्ध होइ एहि ठाउँ॥ २५३॥

ऊँच जो देखहि जैस सुमेरा, सो मन्दिल चित्रावलि केरा।
अति बिचित्र जहँ कीन्ह कटाऊ, चढ़ि न जाइ अति बिकट चढ़ाऊ॥
ता ऊपर जो कुंदन मडी, सो चित्रावलि की चाखडी [2]।
रतन पदारथ मानिक जरी सुरपुर हियेँ आनि जनु धरी।
सात धौराहर ऊपर ठाऊँ, कहहिँ सब सुखमदिर नाऊँ॥
नहाँ निवास करै सो बारी जीउ देइ सो देख अँटारी।
जिउ हारहिँ देखत उपराहीँ चलै जगत सब दिष्टि तराहीँ॥
ऊपर कोउ न निहारइ अरु मग चलहि तराइ।
दिष्टि तराहीँ कै तहाँ, सब जग आवै जाइ॥ २५४॥

---

[1]—पूरी कर। [2]—चौपाल, उठक।

पूरब दिसि जो आहि पहारी जनु बिसुकरमै आपु उतारी।
झरना झरैं सोहावनि भाँती तरुवर लागे पातिन्ह पाती॥
बोलहिँ पंछी अनवन भाषा आपन आपन बैठे साखा।
सिखर चढ़े कूकहिँ बहु मोरा परबत गूँजि उठे चहुँ ओरा[1]॥
जोगी आइ रहें तेहि ठाऊँ सुमिरहिँ बैठि बिधाता नाऊँ[2]।
पाहन काटि गुफा बहु साजी ठाँर ठाँर धुनि मढ़ी बिराजी॥
तुम बैठहु तेहि ठाउँ सोहाई में अब चाह सुनावौं आई।

चाह सुनावों प्रथम मग पाछे दरसन पाइ।
कै वह तुम्ह पहँ आवइ कै तुम्ह लेइ बुलाइ॥ २३५॥

सुनतै कुँअर दरस की बाता अहा जो पीतबरन भा राता।
कहेसि कि माहिँ भाखु सो ठाऊँ जहाँ जपैं चित्रावलि नाऊँ॥
कुँअर चला सो ताकि पहारी उड़ा परेवा ताकि अँटारी।
देखा कुअँर जाइ सो ठाऊँ जल थल जपै बिधाता नाऊँ॥
पंछी सुमिरहिँ अपनी भाषा सुमिरें पात पात तरु साखा।
परबत धर ध्यान जनु तपा, गुपुत जपहिँ परगट नहिँ जपा॥
जो बीरो उपजै ओहि ठाऊँ सबै लेइँ परमेसर नाऊँ।

देख कुँअर चित रहस भा अतिहि सोहावनि ठाउँ।
बैठेउ आसन मारि कै लागा जपै सो नाउँ॥ २३६॥

जौलौं ध्यान धरै नहिँ कोई, तौलौं दरस न प्रापत होई।
घट में परमरूप परछाहीं जा बिनु जग महँ जीवन नाहीं॥
पै तिन्ह नैन न अंजन सोई जेहि ते दरसु न प्रापति होई।
गुरु बचन चखु अंजन देहू हिया मुकुर मंजन करि लेहू॥
माया जारि भसम कै डारौ परमरूप प्रतिबिंब निहारौ।

१—परबत धर ध्यान जसतपा। गुपुत जपै परगट नहिँ जपा। पाठा ।
२—सबै जपैं परमेसर नाहू। पाठा ।

जो वह जाति नैन ठहरावं चौदह भुवन दिष्टि सब आवै ॥
कुँअर ध्यान धरि बैठे तहाँ परम रूप की आसा जहाँ।
परम आस लगि जिमि भयो कुँअर चित्त उतपात ॥
तिमि चित्रावलि बिरह की कहौं सुनौ अब बात ॥ २३८ ॥

(१८) बिरह खड ।

चित्रावलि चितवै पँथ लागी अँचै चहुँ दिसि त्रिनयन लागी।
भूख गई औ नींद नसानी कन पियास पिय का पानी ॥
परगट हारि सकै नहिं आसू बिरहा गुपुत करै तन नासू।
वाहन धाइ सग त्रिन राती, प्रेम दुरावं तिय मृदु छाती ॥
कुल की लाज बिरह तम गोवै परट हँस गुपुत महँ रोवै।
निकट न बैल अहित जो होई आँसु उसास न चरचै काई ॥
कुटुँब लाज नहिँ करै सिँगारा बैसदर होइ हाइ सब जारा।
मजन करि पहिरावहीं बरन बरन तन चीर।
तेऊँ तेऊँ दूनी परचरै बिरहा अनल सरीर ॥ २३९ ॥
जो तन पहिर चीर रतनारा बिरह अगिन जनु धुकै अँगारा।
सिखा फुलेल सखी जो डारा, जनु सिर परी बिरह की धारा ॥
कचन तिलक मदन की गाँसी[३] जरी सीस जनु ताहि कि डासी।
अजन पल सुहाइ नहिं लागा, दुहुँ नैन जनु बिरह सरागा ॥
बेसर बरन जानु बिष मढी छिन छिन डस बदन पर चढी।
पान खात मुख भा रतनारा बिरह पीर जनु रकत उडारा ॥
मोति हार गर कचन हाँसा, जनु गिँव परा बिरह कर फाँसा।
भुजा टाँड औ बलै कर, अँगुरिन मुँदरी टूट।
सब तन बधन बिरह के, प्रान सकैं नहिं छूट ॥ २४० ॥

१—मि
२—प्रगट हो सुलगे।
३—बाघा का नाक।

کامل در اسکے دل کی * صفائی صدروم حاصل کی
شود بوے از عشق صحت کند * طلبکار عهد الست کند

खुँभिया[1] कान सेल की ओरी बिरहै आनि हनी दुहुँ ओरी।
हियेँ डोल मुकुताहल हारू बिरहा जनु उर हनै कटारू॥
कटि किंकिनि काटै तन दाधा मानहुँ कीन्ह चहै दुइ आधा।
चूरा चूरै देह दुहेली पायल मानहुँ पाँवरि[2] मेली॥
अनवँट महँ जनु विष भैरसा बिछिया बीछु होइ पग डसा।
दाहै सब सिंगार तन जेता कुल की लाज सहै दुख पता॥
जरै अँगार पर जनु डारा चदन लागि दहै तन सारा॥
मान जगत परगट जरै पावक बिरह सरीर।
धन बिरहिनि मै। धन हिया गुपुत सहै जो पीर॥२५१॥

धाई मुख चरखै चखु जोआ कबहुँ परगट हँसि कै रोआ।
कबहुँ रहे सूर तन ओई आँसु ढरे न चरखै कोई॥
कबहुँ सखी सो मन मुख जोवा करि करि याद करे दिन रोवा।
कबहुँ अगर ले निकट जरावै धूम येम्वि चखु जल भरि आवै॥
देखै धाइ सेज दिन भीजी कहै रानि हौं बहुत पसीजी।
निसि मुख गोइ सेज जो सोवै, नींद न आउ भोर लहुँ रोवै॥
लोयन सजल उठै बोरानी धोवै बदन वेगि लै पानी।
गुपत प्रेम जल लोयन चाहहिँ परगट कीन्ह।
अतिहि चतुर चित्रावली बातन्ह गोवै चीन्ह॥२५२॥

दिन एक रोइ रँगमनि सों कहा अब नहि जाइ बिरह दुख सहा।
कब लगि जरौं बिरह की आगी अब परगट होइ चाहै लागी॥
बिरहा बली अनल हौं दही हिरदै लागि रहै नहिँ गही।
दूतन्ह भए बहुत दिन गए, तेऊ जाइ तहँहिँ के भए॥
कै सो देस अति आह सुहावा जो तहँ गा सो बहुरि न आवा।
कै सो अजहुँ तहि पाइन्हि नाहीँ कै वह रूप नहीँ जग माहीँ॥
बीते बारह मास दुहली, गुपत राइ छह ऋतु परहली[4]।

१—खूटा, कान म पहिनन का एक आभूषण। २—बेड़ा। ३—भरा हुआ।
४—बिताया।

सुनु सखि छन एक कान दै कहौं पीर सब तोहि ।
जैसे बारह मास प छह ऋतु बात मोहिं ॥ २४३ ॥

ऋतु बसन्त नोतन बन फूला जहँ तहँ भौंर कुसुम रँग भूला ।
आहि कहाँ सो भौंर हमारा जहि बिनु बसत बसत उजारा ॥
रात बरन पुनि देखि न जाई मानहुँ दवा दहँ दिसि लाइ ।
बग सुबास चढ जनु चाँटि फूल अगार कली जनु काँग ॥
कोकिल पपिहा करैं पुकारा बोलत बाल सॉग उर मारा ।
रतिपति दुरद रितुपती बली कानन देह आइ दल मली ॥
दहुँ केहि बन बस सिंह हमारा कस न आइ जग बिरह सहारा ।
पुहुप सरासन पनच अलि मनमथ धरे चढाइ ।
पचबान छिन छिन हनै बिरहिनि उर समुहाइ ॥ २४४ ॥

ग्रीषम तपनि तवै जग माहीं जिय कायर नाके परछाहीं ।
सूर आगि सिर पर बरसावे बिरहा भीतर देह जरावे ॥
हौं बिध जरौं अगिन दुइ माहीं जरत न परै प्रिय परछाहीं ।
जेठ जरनि दुख जाइ न काढा कन कलप दहु तहि बन बाढा ॥
बिरह दवा पुनि आइ न हरी परगट भई अगिन की ढेरी ।
कोइ न मया मयाही आव कतहुँ छाँह की चाह सुनाव ॥
रसना पिउ पिउ रटत सुखानी प्रेम पियास पिय को पानी ।
ग्रीषम पुहुमि अनल भई पथिक चल किमि काइ ।
मगु जोवत नैना जरे धुआँ न परगट होइ ॥ २४५ ॥

दूभर रितु जब पावस लागी घन बरसे पिउ हम तन आगी ।
जिमि जिमि परै मेघ जल धारा तिमि तिमि उर सों उठ लुआरा ॥
स्याम रैनि मॅह कोकिल बोला बिरह जराइ कीन्ह तन झोला ।
दामिनि सरग दीन्ह जनु बाढी , चमक देखाइ लेइ जिउ काढी ॥

१—दशो । २—बसत । ३—सामने करक ताक क ।

कासों कहौं बिथा जिउ केरी काकी होउँ पाँव परि चेरी।
स्याम घटा औ सेज अकेली जागि जाइ सब रैनि दुहेली॥
बिरह समुद जानु अति बाढा को गहि भुज जलबूडत काढा।

ऊँच खाल जग जल भरे भए समुँद औगाह।
सखी पथिक जहँ तहँ टिके, को लै आवै थाह॥ २४६॥

सरद समै अति निरमल राती कन बाजु[1] सँहि निहरै छाती।
राति निखँड चकाव पुकारा मानहुँ काढि सेल उर मारी॥
ससि पारधि भा पारस आँधा किरन बान चारिहुँ दिस साँधा।
कहाँ जाँय यह मन मृग भागा बिरह आगि चारहु दिस लागा॥
केतिक जाइ सकल निसि बीती बरबस रहौं बाँधि उर थीती[3] (क)।
आपु माह किमि सखी मिलाहीं जल परवाह दुहूँ पल माहीं॥
झुकै नींद बरबस चखु आई आँसु दरेर साथ बहि जाइ।

गुपन मदन दै पर चर प्रगट दहे दुजराजु[4]।
सखी प्रान घट क्यों रहै कत पियारे बाजु॥ २४७॥

हिम ऋतु यह बिरहानल बाढा कत बाजु दुख जाइ न काढा।
परे तुषार बिषम निसि सारी सिसकी लेति रहौं मे बारी॥
त न फिर जो गए बसीठी, बर लागि उर मदन अँगीठी।
बिरह सराग करेज पिरोवा चुइ चुइ परे नैन जा रोवा॥
उरध उसास पौन परचारा धुकि धुकि पजर होय अँगारा।
बडा रनि जीवन सुठि थोरा, चेत न परै दिष्टि जनु भोरा॥
पूस मास अति निसि अधिकाई सो घन जान जो बिरह जगाई।

थक नैन बरु देखते, घटै न कोऊ दुख।
बाढे सिर पर गुर दोऊ, एकसरि परि ये दुख॥ २४८॥

१—स नाह = नाहर। २—स पाथ = किनारा, घेरा। ३—स्थिति धैर्य।
(क) उर्दू में नहीं है। ४—चद्रमा।

सिसिर समीर सरीर सँतावै जाडेहुँ नैन नीर भरि आवै।
उरकै पैन करेजा काँपा बरिया बिरह रहै नहिँ झाँपा॥
श्रीपचम मानहीँ सब लोगू पूजहिँ देवता बिलसहिँ भोगू।
हौं कुल कान प्रेम बिच बसी हिरदै रुदन अधर पर हँसी॥
सखिन गुलाल आनि सिर डारा, परगट भा जनु बिरह लुवारा।
अब लहु रही गुपुत यह आगी अब परगट होइ चाहै लागी॥
केहि आगे लै यह सिर मारौं सिर की आगि सह नहिँ पारौं।

अब तन होरी लाइ कै होइ चहौं जर छार।
चहुँ दिस मारुत सँग होइ डूँढौ प्रान अधार॥ २४९॥

अबलहुँ सखी गुपत हौं जरी अब जिउ रहिय न एकौ घरी।
पिँजरा महँ अस पछी धरी सो पग परी लाज की बरी॥
पछी बन महँ करैँ पुकारा, होइ न कोऊ बरजन हारा।
हम तन बिरह रहा होइ रोगू परगट होउँ तो मारैँ लोगू॥
परगट लाज कहत पै माटी, दुइ कर बीच भई हौं चाँटी।
घट पिजर चहुँ दिस ते टूटा, प्रान परवा चाहे छूटा॥
अधरन आइ रहा जिउ मोरा, आइ बहुर मन लाज निहारा।

कबहुँ अधर कबहुँ हिएँ जानति हौं कहि भाइ[1]।
अति व्याकुल तेहि कन मगु झाकि झाँकि जिउ जाइ॥ २५०॥

सुनि कै बिथा कहै रँगमती पेसी जरै सोई धन सती।
परगट जरै सती सो नाहीँ गुपत जरै सो सती सराहीँ॥
जहि कारन दुख सहै सरीरा मिलिहै आइ राखु मन धीरा।
पहिलेँ दुख सहै जो कोई तो पाछे सुख पावे सोई॥
(क) पहिले दुख पाछे सुख होई, तब अनूप नग पावे कोई।
कागहि सब तन करिखा[2] सारा, छुवे आइ तब पद मलियारा[3]॥

१—भाति। (क) यह उर्दू की प्रति में नहीं है। २—कारिख = काला।
३—कौआ ने अपना सारा शरीर काला किया तब सीता जी का पैर छूने पाया।

मान हिअस्थल[1] बाँधि औ, लावै बीरा दुक्ख।
साँचि नैन जल तरु करै, तौ पावै फल सुक्ख॥ २५१॥

सुनु चित्रिनि एक बात सोहाई मिलै कन सो कहौं उपाई।
कोटि जतन कै चहुँ दिसि धावै बिनु सेवा कोई कन न पावै॥
महादेव देवतन्ह के पीता[2] इन्द्र सेइ इन्द्रासन जीता।
जो इच्छा करि सेवै कोई परसन होइ देइ पै सोई॥
महादेव कर खपर भरावहु, जोगिन्ह कहँ थैसाइ जेँवावहु।
तापर गेहि देहु कछु दाना, दानहीं खि[3] सरगहुँ तैँ आना॥
दान देत जनि लावहु धोखा हौं छा मिले होइ सतोखा।
गाँठ दीन्ह चित्रावली, उन गौनी कहि बात।
खप्पर भरौं सहस दस, जब आवै सिउरात॥ २५२॥

---

(१६) परेवा आगमन खंड।

तेहि दुख माँह परेवा आवा चित्रिनि देखा जीउ जनु पावा।
पूछिसि कुसल कहहु सो बाता, मिला सो भौंर कँवल जेहि राता॥
कहहु बेगि जीउ अधर बईठा निकसि जाइकै हियेँ पईठा।
धरि लिलार भुइँ कहेउ परवा आवा मधुप कज-रसलेवा॥
अब जनि अरहु मरहु तपि बारा, तुम्ह दुख रैनि भयो भिनुसारा।
रहा मलीन कौंल जेहि आसा आउ सूर अब करहु बिलासा॥
चातक जेइ रही दिन राती करु आनँद अब मिली सेवाती।
सुनि रहसी चित्रावली, पीन बदन भा रात।
जैस उगवत सूर के, पदुम होत परभात॥ २५३॥

पुनि पूछेँ निजु कटहु परवा कहा सो मधुप कौंल रसलेवा।
मो कहु कहाँ सो पाए जाई कैसे काढे प्रेम चिन्हाई॥

१—हृदयस्थल। २—पिता। ३—याचक।

करै ऊँच कै नीच बिचारी, राजा राउ कि रॉक भिखारी।
काह नाउँ काकर सुत आही, एक एक बैठि बखानहु ताही॥
जेहि सुनि रहइ जीउ मम गाता फिरि फिरि कहहु ताहि की बाता।
आजु सिरान हिया दुख जरा, मुए धान जनु पानी परा[1]॥
कै चकार ससि किरन देखाई पपिहा आनु सेवाती पाई।
नियर होहु तुम्ह चरन परि, सहस बेर बलि जाउँ।
एक जीउ घट मॉहि तेहि वारत अधिक लजाउँ॥ २५४॥

कहिसि कि ताहि सराहौं काहा, धन तूँ धनि आकर बर आहा।
नषत कि लखै तराइन थारा ससिहर होइ सूर कर जोरा॥
उत्तर देस नगर नैपालू राजा धरनीधर नृप सालू।
दान खरग चहुँ जुगत बखाना कोस सहस दस ताकी आना॥
तेहि कर सुत सरूप बुधिवना छत्रा कुल पवॉर कुलवता।
नाउँ सुजान चहुँदिसि जाना बल विद्या गुन कर निधाना॥
रतन एक जनु ससि मनियारा रहा होइ सब कुल उँजियारा।
बिधिचरित्र सोवत तेहि, कोउ चितसारि लै आइ (क)।
गयौ चित्र तुम्ह देखि कै, आपन चित्र बनाइ॥ २५५॥

जस तोर जिउ ओहि के रॅग राता वह पुनि आह तोर मद मॉता।
नाउँ न जाना ठॉउ नहिँ सूना, चित्र सरूप हिए महँ गूना॥
तुम्ह दरसन इच्छा मन वारा, देइ लाग सब खोलि भॅडारा।
धरमसाला महँ होइ रसोई, भोजन आइ खाहिँ सब कोई॥
नित उठि भोर सौंटिया धावहिँ, अगम जती ढूँढि लै आवहिँ।
सब की हिछा पुरवहिँ दासा, एक हीँछा तुम्ह दरसन आसा॥
तोरे भाग कीन्ह अगुवाई, सूध पथ मोहि दीन्ह देखाई।
एक दिन निसरेउँ करमगति, ओही नगर मॅझार।
देखि सौंटिया लै गए, जहँ हुत राजकुमार॥ २५६॥

१—मि सुख धान परा जनु पानी। (क) बिधि चरित्र सावत काऊ चित्र सारि लै आर

देखि कुँअर पुनि निकट बोलावा पूँछेसि कौन देस ते आवा।
कौन नगर तुम्र कौन नरेसा, भल गुन कौन तुम्हारो देसा॥
देखत ही सो कुँअर पहिचाना आनँद कछु न जाइ बखाना।
कहेउँ बइसि सब नगर कि बाता बरनेउँ चित्र जेहि क रँगराता॥
सुननहिं चित्र पाउँ लै परा कहेसि वही चित सपने हरा।
कहूँ लेइ अलि भूलि बसेरा चित्र कमोदिनि कँवल चितेरा॥
तोर रूप जब बरनि सुनावा, तजि छाया चित कायहिं आवा।
राज साज सब छाडि कै कीन्ह जोगि कै भेस।
लुकभञ्जन चख देइ कै लै आयों एहि देस॥ २५७॥
झरना तीर आहि सो जोगी, जो तुम्र दरसन लागि बियोगी।
आसन मारि बैठ होइ तपा, नाउँ तुम्हार करै मुख जपा॥
तुम्र तन परसि पौन जो जाई सर मुख होइ लेइ कंठ लगाई।
सीतल मंद समीर जो पावै अरत आगि हिय लाइ सिरावै॥
आयो दै सरवर आसा, आइ तीर अब मरै पियासा।
ठाँवहिं ठाँव जरत पुनि आवा, आसा जल मुख मेलि जियावा॥
अब जो मरै सो बिरह बियोगी हत्या तोहिं जाहि लगि जोगी।
मूरि मन्त्र गुन मरि कै ले आएउँ करि जोग।
अब न मोहिं कछु लागई बैद आन औ रोग॥ २५८॥
सुनि चित्रावलि चितहिं हुलासी, कौंल कली रबि उदै बिगासी।
रही साँस मन हिय गा दन्दू, सुनि कुलीन भा अधिक अनन्दू॥
कहसि परथा तूँ सो कीन्हा निक्ख[1] तोर मोहिं आइ न दीन्हा।
तैं सो बचन अमिरित अस भाखा निसरत प्रान फेरि घट राखा॥
मोहिं लगि सकति हाति जिय हानी, तैं हनु[2] होई सजीवन आनी।
दानौ दुख अहा बट पूरी, तै होइ भिम अमकानरि चूरी[3]॥
का तोरे नेंवछावरि सारौं, लाजन एक जीउ नहिं वारौं।

१—सं निष्क = एक प्राचीन सिक्का जो सोने का होता था। यह चार अशर्फी का होता था। द्रव्य, दाम मूल्य = बदला। २—हनुमान। ३—नाश किया, तोड़ा।

तन पचाल थाल सम, होत जो पुरिन प्रान।
काढि काढि तुअ चरन पर वारि देत मन मान॥ २५९॥

पै यहि आहि जगत कर लेखा अघ पताइ नैन जो देखा।
स्रवन[1] सोत[2] सुनि अमिरित बानी, नैनन तपनि दूनि अधिकानी॥
जस सुनि पावा स्रवन सतोषा नैन देखाउ जाइ जिउ तोखा।
मोर निकास न पकौ घरी परी पायजा[3] पुनि साँकरी॥
बठे रहहिं बार रखवारा मार मारु होइ झाँकत बारा।
धावन हटकै दाहन धाई रहस कूद लइ गै लरिकाई॥
कहाँ आहि दहुँ सरिवर बारी सपनेहुँ नहिं देखौं चितसारी।

एहि बिधि जोबन जाउ जरि सिसुता होइ अनूप।
निसरत बरज न कोउ जहि देखौं जाइ सरूप॥

अब फिरि जाहु कुँअर जहँ आही कहहु कहे तिय दरस उमाही[4]।
जाहि लागि तुम्ह भएहु भिखारी तुम्हते अधिक सो बिरह दुखारी॥
तुम्ह दुख रैनि अँधेरि बिहाना[5] करु मन धीर भोर नियराना।
ईंछा एक हिये हम पूजी, तुम्ह दरसन मम ईंछा दूजी॥
अलप दिनन्ह आवै सिउराती, नेवत जेंवावब जगम जाती (क)॥
तुम्ह तेन्ह संग बोलावब तहा बेठहु हेठ झरोखा जहाँ।
पाछे दहुँ का करै गोसाईं, नैन मिलाव होइ तेहि ठाईं।

जोबन बेडी पग परी, गोनन महा सँदेह।
नाहिं तो बरनिन आइ कै, झारनि तुअ पग खेह॥

अ पुनि आपन दरपन दीन्हा कहसि दिहहु लै यह मोर चीन्हा।
कहेहु राखु लै हिरदै लाई मोंजत रहब परै नहिं काई॥

१—श्रवन। २—श्रोत। ३—पायजा = लोहे का जुआ जिससे ... ई का पैर बाँधा जाता है—एक प्रकार का श्रृंखला। ४—उत्कंठित है।
५—आतुर। ६—बिगत हुए या प्रभात में परिणत हुए।
(क) पूजब शिवहि चढाउब पाती। पाठा०।

राखेहु सजग देखि जनि काहू छाडि परेवहि जनि पतियाहू।
नैन लाइ रहु दरपन माँहीँ पहिले देखु रूप परिछाहीँ॥
दरपन चखु ठहराइहि तोरा, बिगसि देखु तब दरस न मोरा।
एकहि बार जो सनमुख देखा होइ तूर[1] पर मूसक[2] लेखा॥
मोरे रूप आहि सो जोती, बारह भान किरन की गोती।
माँजत दरपन जीउ दै, नैनन्ह धरब अकास।
जेहि दिन पूजै देव जग पूजै हम तुम आस॥ २६०॥

दरपन लइ सो परवा आवा कुँअर आइ झरना ढिग पावा।
लेयन मूँदि माळ कर जपा, चित्रावलि चित्रावलि जपा॥
कहेसि चेतु जागी सिधि आई, लेहु सजग होइ गुरू पठाई।
अस लैलीन कुँवर होइ रहा, बचन परेवा मारुत बहा॥
तब गहि भुजा कुँअर झकझोरा उघरे नैन देखि मुख घोरा।
कहेसि कि जागी बैठु सँभारी सिख कहत सुनु सवन उघारी॥
मैं सब बाति गुरु सों कही औ जस बिरह बिथा तोर अही।
रहस गुरू चित ऊपजा सुनि जोगी कर भस।
मया थेलि औबहु असिष, दीन्ही लै आदेस॥ २६१॥

कहेसि कि जौं इहवाँ लहु आए, चिता करहु न सिधि अब पाए।
आए लाँघि समुद पहारा, अब नैनन महँ ठाँव तुम्हारा॥
जो दुख मोहिँ लागि तुम्ह पावा सो दुख सब मोहिँ ऊपर आवा।
जनि जानेसि मैं अकसर दुखी, तुमते दुखी दून ससिमुखी॥
जेते चुभे काँट पग तोरे सुनि सालैं सबहियरैं मोरे।
औ छाला जत पायन्ह परा, फूटि पानि मम नैनन्ह ढरा॥
औ जत पातल गडी अँकारी[3], सुनु मम पुतरिन समुहँ ददौरी[4]।
आवत मारग औरे जत सहा तेज रबिझार।
हाइ बैसदर मोर हिय जारि कीन्ह सब छार॥ २६२॥

१—एक पर्वत का नाम जहाँ मूसा को खोदा का प्रकाश देख पड़ा था वा दर्शन मिला था। २—मूसा एक यहूदियों का पैगम्बर जिसे ईश्वर तूर पर दिखाई पड़ा था। ३—अँकरी = ककडी। ४—ददोरा।

दरसन चाउ अधिक जिय माहीँ अबहिँ उहाँ मोर आवन नाहीँ ।
भा दुर्जन जोबन हतियारा, जातेँ रहहिँ सग रखवारा ॥
अब दहुँ कब आई सिउराती, पूजब सिभु चढाउब पाती ।
जहँ लहु जती सनासी अहहीँ जोगी जती खपर जे गहहीँ ॥
मंदिर तर बैठाउब आनी भरि भरि देब खपर अनपानी ।
तुमहुँ कहँ पुनि लेब बोलाई हेठ झरोखा ठाउ बिठाई ॥
सोही डाँड होइ नैनमिलावा सिउ परसन होइ हीँछ पुरावा ।
ऊपर ग्रीषम तज रवि हेठ सो चन गँवाउ ।
दीन्हा आपनु मुकुर यह जेहिँ महँ दरस मिलाउ ॥ २६३ ॥

यह दरपन तुम्ह लेहु सँभारी जेहि महँ देखहु दरस पियारी ।
एही मुकुर सिद्धन कर गहा, मन की इच्छ इही मधि चहा ॥
चौदह भुवन रहहिँ एहि माहीँ तिल समान कछु बाहर नाहीँ ।
नैन होइ गुरु अजन आँजा दरपन होइ नीक करि माँजा ॥
जहँ लगि धरती सरग पतारू परैँ दिष्टि सब बाँच न बारू[1] ।
अब नहि लावहु चित बैरागा माँजत रहब जो मल न लागा ॥
औ पुनि माँग देहु जनि काहू माहिँ तजि जनि आनहिँ पतियाहू ।
तब लहु सहिय बिरह दुख जब लगि आव सो बार ॥
दुख गए तब सुक्ख हे जानै सब ससार ॥ २६४ ॥

सिउ सिउ करत बार सो आवा, चित्रावलि जानहु जिउ पावा ।
भोरेहिँ नेगिन्ह कहा हँकारी बेगिहिँ करहु रसोइँ सारी ॥
आजु आहि सिउबार सुहावा घर घर दपति सिभु मनावा ।
इछा एक हमारी पूजी औ इाछा मन आहि न दूजी ॥
साजहु अनबन भाँति रसोई जहँ लहु खिउपक जलपक होई ।
जोगी नाउँ जहा लहु पावहु, भरि खप्पर बेसाइ जँवावहु ॥
होइ न काहु परोसत धोखा, मैँ पुनि देखब बैठि झरोखा ।

१—बारू = रेखा ।

बेगि होहु बिलमाहु जनि, आजु सो उत्तिम बार।
हाछा हरि परसाद हम पुरवै मकु करनार ॥ २६५ ॥

नेगिन्ह साजी बेगि रसोई जेहि के स्वात प्रेम रस होई।
सब मीठे परकार सलोने भए न फीके खटे अलोने॥
धीपक जलपक जेते गने, कटुवा बटुआ ते सब बने।
धौराहर तर डाँड सँवारा जोगिन्ह जहाँ होइ जेवनारा॥
पाक रसोईं सोटिया धाए जोगी जती ढूँढि ले आए।
जोगी नाउँ जहा सुनि पावा, एक एक कहँ जाइ बोलावा॥
आदर सौ लै आवहिं जोगी जोगी सेवा करैं सो भोगी।
भोगी जोगी सेवई, इहै सो भोग आचार।
जोगी बाँचहिं भोग सों, तबही पावैं सार ॥ २६६ ॥

खिजिलि कहा हँकारि परेवा कहाँ सो जोगि करों जेहि सेवा।
आइ बैठ सब बार बराती दूलह कहा जाहि धनि राती।
धन सो दिवस धन बार सुहावा धन सो घरी जहि होइ मिरावा॥
सुनि कै बान परेवा बोला ए सुंदरि वह रतन अमोला॥
कञ्चन बरन मलिन[1] अरि गयऊ, बिरह अगिन जरि कुंदन भयऊ।
आनि देखावौं रूप सुजाना कसौ कसौटी दहुँ कस माना॥
अपने जान धोख नहि लायउँ, बारह बान सँपूरन पायउँ।
वह पिउ रतन अमोल नग, तू धनि कुंदन हेम।
जो बिधि जोरी है लिखी, जरे सो जरिया प्रेम ॥ २६७ ॥
चला परेवा कहि यह बाता, आवा जहँ जोगी रँगराता।
कहेसि कुँअर दुख रैनि बिहानी, उठि चलु अब सुखघरी तुलानी[2]॥
तोहि मया कै गुरू हँकारा, सिद्धि देत अब लाग न बारा।
आजु दरस जेहि लागि बियोगी, आजु सिद्धि जेहि कारन जोगी॥
आजु सो औषध जेहि लगि पीरा, आजु प्रान फिर मिलिहि सरीरा।

१—मैल, मलानता। २—आगइ।

आजु सो भोजन जेहि लगि भूखा, आजु सो पान अधर जेहि सूखा ॥
आजु सो कौंल भौंर जेहि रंगू, आजु दीप जेहि लागि पतंगू ।
आजु सेवाती घन बरिस चातक हुसि जहि लागि ।
आजु उदधि जल ऊमडेउ, बुझै हिये की आगि ॥ २६८ ॥

दरस नाउँ सुनि कुँअर हुलासा, जनु पंकज रबि सूर प्रकासा ।
रहसा बदन पेम कर गहा, भा मजीठ केसर जो अहा ॥
कहसि कौन सो वासर आजू दरसन मिले होइ सिध काजू ।
दाहिन भयो भाग हम आई, भयो भोर दुख रैनि बिहाई ॥
मोहिं न करम केरि परतीता दीरघ दुख होइ लहु[1] बाता ।
कहहि बहुरि मन मान न मोरा जिउ देनिहार बचन हे तोरा ॥
तैं अब लहु जिउ घट महँ राखा, नाहिं त आत सुआ तजि साखा ।
कहेसि आजु हे सोई दिन, अत होइ दुख तार ।
सरग उए ससिहर किरन पीयै पुहुमि चकोर ॥ २६९ ॥

(२०) दरसन खड ।

चला परेवा ले सँग जोगी, जहाँ बैद तह गौने रोगी ।
आनि भरोखा तर बैसारा नखतन्ह महँ जनु ससि मनियारा ॥
भा अकुत[2] जहँ जोगिन्ह मेला आवा गुरू होड़ु सब चेला ।
जत कतहूँ तै होइ आदेसू, देइ असिष बैठाइ नरेसू ॥
बैठे जोगी पांतिन्ह पाँती, धरे खपर सब भाँतिन्ह भाँती ।
गेरुआ बस्त्र चढाइ बिभूता शिव शिव बोलहिं उठै अकूता ॥
कोई सख लै पूरै नादू, कोई करै जोगी गुनबादू[3] ।
कोई बीन बजावई, कोइ घधारी फेर ।
कोई सुमिरनी कर गहे, जपे नाउ बिधि केर ॥ २७० ॥

ततखन भोजन अगिनित सारा, भाँति भाँति जे हुत परकारा ।
आने सब पकवान ओ कीहे कथा बाढ तेहि नाँवन लीन्हे ॥

१—स लघु प्रा लहु = छोटा । २—बात । ३—गुणानुवाद, प्रशंसा ।

पहिले खपर जो भोजन भरा लाए गुरू के आगे धरा (क)।
ता पाछे जो खप्पर भरहीं जोगिन्ह के ल आगे धरहीं॥
लागे खपर भरे चहुँ धारी, दे दछिना विनवहिं कर जोरी।
मानहु सेवा देहु असीसा, जेहिते हींछा पुरवहिं इसा॥
जोगी जबहिं पीवहिं पानी होइ सँतोष हियँ मनमानी।

मन बच कम बिनती करहिं हे देवन्ह के ईस।
सुदरि हिछ पुरावहु कहहिं लाइ भुइँ सीस॥ २७१॥

कुँअर न जँव नैकु अँचाई, रहा नैन दुहुँ दरपन लाई।
लागी बार न पूजी आसा बिष भोजन भा जानु गरासा॥
अमिरित भोजन लै कर काहा सो न मिला जा कहँ चित चाहा।
दरपन देखि सो देखै नाहीं उठै मरोर करेजे माहीं॥
बरी आगि उर बाढि सनेही पिघिल्न चली नैन जिउ देही।
तपि तपि मरै रहै धुनि माथा बिनु दरपन कछु आउ न हाथा॥
बिरह न कर जनम भरि तेता औधि आस करछिन महँ जेता।

मान तेज बल सब घटा, हियेँ सोच अधिकान।
औधि घरी नियराति है निकसि जाइ जनु प्रान॥ २७२॥

चित्रावलि भै सात बनाई दरसन लागि झरोखा आई।
तन गुजराती चीर अमोला लहर लेइ जनु उदधिहि डोला॥
देखि चकोर दिब्ब[1] मुख बारा, जनहु मयंक कीन्ह उजियारा।
भर माँग मोती मनियारे नखत पाँति ससि आइ ओहारे॥
सीसफूल कच ऊपर बासा, स्याम रैनि मधि सूर बिगासा।
भौंहे सौंह न होइ गियानू, लोचन मोचन सुरपति ध्यानू॥
बेसरि सरि न काहु कहँ छाजा, गयो अगस्त सरग कहँ लाजा।

पान खाइ भा अधर रँग, औ चौका रतनार।
परगट देखिय खरग जनु रुहिर भरा हथियार॥ २७३॥

क—पहिले खपर भोजन भरा—आनि गुरू क आग धरा। पाठा। १—दिव्य।

सरवन खुटिला[1] बने सभागे, जनु गुरु सूक सवन ससि लागे।
तरिवन बना तरनि की कला जनु रथ सजि सरग कहँ चला॥
गाँव माल मुक्ता मनि बसी, सुरसरि जनु सुमरु हुत धँसी।
पौ तन बनि कटाव की चोली रही फूलि फुलवारि अमोली॥
भौंर भए दुइ स्याम सवाई, तहि फुलवारिन्ह बेसे जाई।
बाँहन चूरी ककन हाथा देखि धुनहिँ गन गध्रब माथा॥
कटि किंकिनि धुनि सुनि मन माहै चूरा चमकि चौंधि घन जाहै।

कहहिँ देवता अजहुँ हम हम हाहिँ छिति जाइ।
परसहिँ चिछिया हाइ मकु चित्रावलि के पाइ॥ २७६॥

चित्रावली झरोखे आई, सरग चाँद जनु दीन्ह देखाई।
भयो अँजोर सकल ससारा भा अलोप दिनकर मनियारा॥
चौंधे सुर सब सुरपुर माहीँ चौंधे नाग देखि परछाँहीँ।
चौंधे महिमंडल नर नारी, चौंधे जल थल जिव सब भारी॥
चौंधे जोगी अहे तराहीँ, कस अँजार काउ जाने नाहीँ।
दरपन माह कुँअर देखि छाया गया मुरछि सुधि रही न काया॥
सूर जोति दरपन महँ ऊई यहि दुहुँ बीच कुँअर भा रूई।

ग्यान ध्यान सबही गयो परा पुहुमि ससि राइ।
देखि झरोखा चित्रिनी विहँसि मँदिर महँ जाइ॥ २७७॥

हँसि पूछहिँ ते सखी सयानी चित्रिनि भेद बात जिन जानी।
भाखहु सखि रैनिपति[2]-मुखी सो देखा जाहि लगि हुति दुखी॥
नैन कसौटी कचन कसा, बोलहु हियँ बान क बसा।
है वह रतन पदारथ सोई कुंदन मिलि जराउ जहि होई॥
सो पुनि हमहिँ देखावहु आनो जहि बिनु तुम्ह जुग गे नि बिहानी।
तेहि वा उतर चित्रावलि कहा देखा अजहु विरह कर दहा॥
ससिहर सुरनगरी जेहि रूपा, सूरज चाहि सो अधिक सरूपा।

१—करणफूल। २—चन्द्रमा।

देखत माथे भागमनि, निरमल रतन अनूप।
छपै न कैसहु जोग महँ प्रगट देखिये भूप ॥ २७८ ॥

दरपन माँहि निरखि मुखछाया, परा मुरछि गा जिउ तजि काया।
अबहीँ कचन कैसेँ देखाऊ, कुदन भान जो होइ जराऊ ॥
बिरह अगिन जरि कुदन होई, निरमल तन पावै पै सोई।
अबहीँ आहि सो कचन कॉंचा सहि न सका दरसन की आँचा ॥
रचक देखि दीप की करा[1] चौंधि पतग पुहुमि खसि परा।
पुनि जो चेत होइ अस आई तुम्हहूँ कहँ सो देखावौं जाई ॥
बोलि परवा कहा बुझाई, मरे न जोगि सँभारहु जाई।
कहहु जाइ दरपन अबहि सनमुखहु ते न टार।
पुनि मैँ झाँकब आइकै बैठहु आपु सम्हार ॥ २७९ ॥

परा जोगि खसि पुहुमी माहीँ चेत न आपु सम्हारै काहीँ।
कहूँ चक्र कहुँ खपर उदारा, कहूँ परा तिरसूल निनारा ॥
कहूँ सुमिरनी कहूँ अधारी औउ बाजु सब भयो धँधारी।
औ लहु तन जिउ दीप अँजारा, भोर भोर कै सबै बटोरा ॥
दीप बुझा घर भा अँधियारा जो हुत जहा सो तहा बिसारा।
सिद्धन्ह भलेहिँ पढा यह पथा, गापी झारि मेखली कथा ॥
भार जानि कै मथा झोली गौने पथ खेलि कै होली।
आवै मान बसत जब फूलहिँ तरुवर बेलि।
हौं पहिलहिँ गुरु बचन लै, लिखौ होली खेलि ॥ २८० ॥

चेला देखि गुरू बिकरारा, दौरि आइ दुकि करहिँ सम्हारा।
टोवहिँ हाथ पाँव जिउ नाहीँ, रही सास कछु हिरदै माहीँ ॥
गहे मुकुर कर जानि अँगूठी, छोरि न जाइ मरे की मूँठी।
सबै कहहिँ अबहीँ भल आहा, पल भीतर यह होइगा काहा ॥
कोऊ कहै मिरगी कर भावा, कोऊ कहै सनपात[2] सतावा।

१—कला। २—सन्निपात।

कोऊ कहै भोजन विष बासा कोऊ कहै गिव गहा गरासा ॥
कोउ कहै काहू देखि जो भूला, परगट प्रेम कॉल मुख फूला।
कहहिं चलहु सब जीउ ले, तजहु नगर के सींव।
जहाँ गुरू अस मारिय चेला बाँच न जीव ॥ २८१ ॥

घरी चारि बीते भा केतु, उठेउ सँभार सारि हिय हतू।
आस पास पूँछहिं सब जागी कहहु कया काह भा रोगी ॥
उह सो गुटका कहाँ अडारा[१] जेहि बिनु सिद्ध होइ नहि पारा।
कहाँ सो बारउ लोन अनूपा जहि सों होइ सोन औ रूपा ॥
तुम्ह अस गुरू सँभारहु नाहीं, हम चला दुहुँ काह कराहीं।
अब सो कौन बिथा जिय केरी ओषध मूरि सेर आनहिं हेरी ॥
फिरि फिरि पूछहिं चेला बाता, गुरू न बोल प्रेम मद माता।
रहा अचक मन जोगना ना हँसि आउ न रोइ।
साइ रह ठगमूरि सी गया जालि गँथ[२] खोइ ॥ २८२ ॥

आइ परेवं सबद सुनाया चेत मुछवर गोरख आवा।
अस भिखारि हम देख न कोई, बारहिं आइ रहै परि सोई ॥
जागत गयेउ सकल अँधियारा गया सोइ जब भा भिनुसारा।
काया पिंड कमाइ न पारा, गा होइ धूम अनल के भारा ॥
इन नैनन्ह तुम्ह रूप सो देखा परेहु चाँधि सो कोन परखा[३]।
अब फिरि गुरू मया तोहि कीन्हा लेहु सँभारि सिद्धि जो दीन्हा ॥
रहहु नैन पुनि दरपन लाई, चाँद झरोखा दखहि आई ॥
इन्ह नैनन्ह देखै न कोइ वह सो रूप अपार।
हिये नैन पट खोलि कै देखहु राजकुमार ॥ २८३ ॥

सिद्ध नाउँ जोगी सुनि जागा, गा बराग भयो अनुरागा।
दरपन सौंह लाइ चखु रहा, काहू दिष्टि कुज मन गहा ॥
सरग उदै भै दिनकर करी कुँअर जोति दरपन महँ हेरी।
नैनन्ह भीतर जोति समानी, जातिहिं मिली जोनि ठहरानी ॥

१—डारा = फेंका। २—स ग्रंथ गाठ। ३—परीक्षा।

अस परगट भा रूप सरेखा स्यान जो सुना सहस गुन देखा।
पाइ रूप जल नैन पियासे जिउँ जिउँ पीवँ अधिक पियासे॥
पुनि भा सोच हिये कछु आई राता बदन गयो पियराई।
मान दरस मह कौन गुन चन्दै सोच दिन आइ।
देखि रूप झुरवै मनहि पुनि अस करहुन चाह[1] ॥ २८४ ॥

सखि क सँग जा अहें तराईं तेऊ सरग कटि देखन आईं।
देखि कला रवि की जो अही गइ खोइ सुधि गात न रही॥
बोलीं सबै देखि ससि ओरा धनि तू धनि जाकर अस जारा।
तस दुख देखि तु अस पिउ लहिए, अस पिउ लागि कस न दुख सहिए॥
तुम्ह ससिहर यह रवि उजियारा तुम्ह कुदन यह नग भलियारा।
तुम्ह रानी यह आहि सो राजा, तुमही कहँ प अस बर छाजा॥
तुम्ह अनुज यह दिनकर साईं, मिलैं कँवल अब रहसि मराईं[2]।
अब विधना सो कौन दिन, मिटै हिये जहि दुद।
ससिहर मिलै चकोर कहँ तरइन होइ अनद ॥ २८ ॥

पुनि नेगिन्ह सौं कहा बुलाई, सिव सेवा सुख उपजउ आई।
जोगिन जँवत कौतुक होई, कौतुक देखि चाह सब कोई॥
औ पुनि दान देई चित भावा इहाँ क दीन्हा तहँ पर पावा।
कौतुक पुनि दोऊ सँग पाई, जागी रहहिँ दिवस बस छाई॥
नित उठि भोर करहिँ जेवनारा उभय भाँति साजहु परकारा।
भरि भरि खपर परोसा देहु, दै दै दान आसिषा लेहु॥
बहुरै नेगी अग्या मानी, चेरी करँ कहे जो रानी।
ठाकुर अग्या होइ जब, सबै करैँ जो नेगि।
जहवाँ कारज पुन्य कर, कसन सँवारैँ नेगि ॥ २८६ ॥

लाग होइ प्रति दिन जेवनारा, जोगी जगम करहिँ अहारा।
चित्रावली झरोखा आही, कुँअर देखु दरपन पर छाँही॥
दाऊ उदधि पै दोउ पियासे, पीपी जल पुनि रहहिँ पियासे।

[1]—चाह। [2]—स तरणि = सूर्य।

देखत काहु होइ न सॉंती दिवस चारि बीते एहि भाँती ॥
पुन जो कुटीचर देस निसारा, वै पुनि सुना जोगि जवनारा।
कहेसि कि मइँ जोगि होइ जाऊँ, मकु परसाद जाइ कछु पाऊँ ॥
सनमुख भाग होइ जौ आई जोगिन साथ लेउँ सिधजाई।
आइ सो जोगिन्ह महँ मिला कै तपसी कर भेस।
बोले सबै कि गुरु सेव हों जाइ करो आदेस ॥ २८७ ॥

---

(२१) कुटीचर खड।

गुरू पास चेला चलि आवा, चित्र चीन्ह मुख देखत पावा।
औ दरपन चित्रावलि करा, परतष[1] देख कुँअर जेहि हरा ॥
मन महँ कहेसि आह यह सोई जाहि लाग यह कातुक होई।
एही लागि होइ जेवनारा, एही लागि एता बिस्तारा ॥
एही लागि हम देस निसार, एही लागि हम पुनि पुनि आरे।
अब मिलि लेउँ सो आपन दाऊँ पुनि अस दाँउ हाथ कब आऊ ॥
बैठो जाइ कुँवर के पासा, कहसि कि हम चित्रावलि दासा।
जैस परेवा तेस हों, सो पठयो तुम्ह पाँहि।
कहसि कि कबलगि ससि किरन, कुमुद पियै जल माँहि ॥२८८॥
तोहि देखि सो कौंल हुलासा, आप भौंर होइ जेहि आसा।
कौंलहि सूर सँतोष न देई, जौ लहु भौंर बास नहिँ लेई ॥
कसा कसौटी निकसा बाना, कौंल क मुख मधुकर पहिचाना।
अब उठि चलहु कौंल बस जहवाँ, सेज सुगध सँवारी तहवाँ ॥
यह विचारु तूँ जोगि सयाना, जल न पाव पावस ऋतु आना।
चदबदन देखहु भरि नैना, औ सुनु सरवन अमिरित बैना ॥
अधरन्ह टूटि अधर रस लेहु, भुजनि भुजा आलिगन देहु (क)।

१—प्रत्यक्ष।

(क) यह पद उर्दू की प्रति में नहीं है।

लीन्हेसि दरपन माँगि पुनि , कहेसि चल्हु अब राय ।
कुदिन आइ नियराइ जो , पहिलेहिँ बुधि मिटि जाय ॥ २८९ ॥

जोगी अग समाइ न फूला , बैन कुटीचर की सुनि भूला ।
कहिसि कि भाग निसेनी आई अब चढ़ि सरग मिलौं ससि आई ॥
देखौं सौंह जाइ सो रूपा नैन सिराहिँ जर जा धूपा ।
अक म गहौ जो हिया सिराई अमिरित बैन सुनो अब जाई ॥
अस न जान अमिरित विष बसा , यह विष नाग चाह उर डसा ।
बहु दुख पाइय ससिहर छाया कैसे चाढ़िय बेगि उठि काया ॥
ऐसे केत बिगूचे[1] पाए , थोरा छाड़ि बहुत कह धाए ॥

कीन्ह न सोंच कुँअर जिय चल्यौ कुटीचर सग ।
कोऊ न सकै सँवारि ओ कीन्ह जहै विधि भग ॥२९०॥

कहा कहौं मैं जग व्यवहारा यह मन कैसहुँ मरै न मारा ।
तरि नपि लुहि लुहि एक जो पावा होइ न सँतोष दोइ कहँ धावा ॥
पाछिल दु ख बिसरि सब आई सुख ऊपर सुख ढूँढ धाई ।
सोन लागि जो पाव सुमरू रतन लागि रतनाकर हरू ॥
मुकुता होहिँ समुँद के ढेरी , पुहुमी होइ सरग बह चेरी ।
करे जोहार सकल ससारा भँवहिँ न नैन बाजु अहि झारा[2] ॥
विक्रम नैन पुहुमि सब आँटी भरी आइ मरघटि की माटी ।

कहाँ सो विक्रम सकबँधी , कहाँ सो राजा भोज ।
हम हम करत हेराइ गे मिला न खोज खोज ॥ २९१ ॥

वह लै मुकुर चला होइ आगे , जाइ कुँअर पुनि पाछ लागे ।
झोली हुत एक अजन काढा सनमुख कुँअर भयो फिर ठाढा ॥
कहेसि कि यह लुकअजन सोई , नैन दिये जो देखन कोई ।
सो चित्रावलि पठवा तोकाँ , नैनन्ह देइ चल्हु सिवलोकाँ[3] ॥

१—धोखा । बहाला । २—ईर्षा । ३—कैलाश = स्वर्ग ।

रहसि कुँअर लुकअजन लीन्हा वेगिहिँ दुहुँ नैन महँ दीन्हा।
अजन देत भयो अँधियारा रहा अचक तब राजकुमारा॥
भया असूझ न जब कछु सूझा दूत भेद तब मन महँ बूझा।
हाय मले औ सिर धुनै अजन धोवै रोइ।
पहिलहिँ आ न विचार भा, अब राए का हाइ॥ २९२॥

कहसि कुँअर सुनि हौ सो अहऊँ आपन भेद बान ताहि कहऊँ।
तोर चित्र चित्रसारी हुता देखा चित्रसेन की सुता॥
उपजा प्रेम चित्र के देखे कौतुक आन न आनै लेखे।
मोरे जिय भल काज न आवा रानि लाई म त्रिय धोआवा॥
तै रिस लगि हौं देसनिसारा अब लहुँ सहा विरह की झारा।
तैं सब कीन्ह मोर सुखहानी गादुर[1] भयो सूर सो रानी॥
खोजत रहउँ मिलेहु नहि राऊ, पाएउँ आजु मिलेउ सो दाऊँ(क)।
/ कहा सो गोडिया तुच्छ नन कहाँ किसन[2] अस राउ।
बैरी जो बस कै मिले लेइ सो आपन दाउ॥ २९३॥

यह कहि गहि भुज कुँअर उठावा सात समुद्र पार लै आवा।
डारसि लै तहिँ खोह अधेरा जहँ न मिलै दिन दीपक हेरा॥
दिन न सँचार किरन रबि जहाँ रैनि नाहिँ ससि तरई तहाँ।
अँधे ठाँव अँधरी पाई जनहु मसि ऊपर मसि लाई।
चला तहा तजि कै दुखदाता, चलती बेर कहसि एक बाता॥
बहुत कोह उपजा मन माहीँ जीउ न मारौं जानेसि काहीँ।
अस हो बिरह अगिनि महँ जरा तस तू अरसि इहाँ अब परा॥
तोहि डारा लै नहा, जहा न डोल पाखि।
जो जस करै सो पाउ तस, कुँअर देखि लै आँखि॥ २९४॥

गा उठि गुरू देखि सब चेला, भरा भग जहँ जोगिन्ह मेला।
जत कत चले झारि मृगछाला, पखी सबह[3] डोल जनु घाला॥

—समगादड़। (क) यह उर्दू की प्रति मे नहा है। २—कृष्ण। ३—प्रात काल।

उठि उठि आपन मारग गहहीं, गुरू बाजु चेला कहँ रहहीं।
चले पखि उडि पीँजर टूटा, उडसा नाच पखाउज फूटा॥
चित्रिनि खोलि झरोखा बारा, देखि कहा बसत उजारा।
ना सो फूल न सो फुलवारी, दिष्टि परी उकठी सब बारी॥
ना वह भोर आहि रँग राती, बिहरैं[1] लाग कौल कै छाती।

निगसत कौल न बार भइ गयौ अथै जग भान।

मारेसि हूँट देखाइ गुड साईं भा उपखान[2] ॥२९५॥

यह कहि कौल कली कुँभिलानी भा रवि अस्त सूखि गा पानी।
कौल देखि जब कुमुदिनि धाईं ससि गरास भा डरीँ तराईं॥
कहहिं कि यह अजुगुत भा कहा राहु न काउ चाँद कँ गहा।
इहे घरी हम बारन अहहीं, लागी सैन कहन पुनि रहहीं॥
आनन ढाँप देखाउ ■ काहु चाँद सँपूरन लागै राहु।
लागीं सब मिलि कर सम्हारा पूछहिं कस भा जीउ तुम्हारा॥
चंद बदन जो दमकत अहा कहा मलीन रानि सब कहा।

का पूछहु किन देखहु खोलि झरोखा बार।

फूला रहा बसत जहँ तहाँ उडै अब भार[6] ॥२९६॥

ऋतु बिपरीत भई चहुँ ओरी, गा बसन्त तब लागी होरी।
पलहा माहँ भया सब कहा सौंतुक[6] हाकि सपन बिधि अहा॥
धापउँ देखि रही घर की सी, गई अथे हरिचंद पुरी सी।
चटक लाइ गयो कहु जोगी, उठिगा बैद जियै नहिं रोगी॥
जोगिन आह छंद बहु साखा घर घर फिरहिं लेत पुनि भीखा।
जे जग छार लपेटी कया, तेहि का होइ काहु की मया॥
तासौं सकति प्रीति तुम्ह लाई, जो नहिं भयौ काहु कर आई।

१—बिहरना = फटना। २—उपखान = कहानी। ३—अजुगुत = असंभव, अचंभा। ४—मना करती। ५—धूल। ६—आगत अवस्था।

काज परा तेहि कठिन सों जे न कोइ अपनाइ ।
गया अकारथ यह जनम बरु न जनमती माइ ॥ २९७ ॥

जो जानत वह अस निरदई, कत हौं प्रीति करत घर गई ।
जरौं मरौं जिउ उठे परखा दीप पतग भयो मोर लेखा ॥
सहस[1] पतग जो आपु अपावा, एक न दीपक आपुँ आवा ।
हम तन इहाँ रहा अधजारा गयो दीप घर क अँधियारा ॥
कहाँ जाउँ तन पख न पाऊ, मरौं खाइ विष इहै उपाऊ ।
कर हुत रतन आइ आ खोई, भागन बहुरि पाव जग कोई ॥
आपन दीप कहाँ का काऊ गहउँ सोइ लाग्यो ससि राहु ।
सीख लेहु सखि मोहि सों, जनि करि हठ मकु खोउ (क) ।
प्रेम पथ चढि सोउ जो, सो देसैं पुनि रोउ ॥ २९८ ॥

सखिन्ह कहा सुनु चित्रावली, वह सो भौंर तुम्ह पकज कली ।
फूल फूल करि मधुकर फेरा, आइ कालि पुनि लेइ बसेरा ॥
जौ तैं जीव भोहि पर परछेवा, उहै परिहि होइ चिरिनि[2] परेवा ।
पै दिन दस पुनि काढहु पीरा, मिलिहि आइ जौ जीउ सरीरा ॥
गुपुत रहहु कोउ लखै न पावे प्रगट भएँ कछु हाथ न आवै ।
गुपुत रहे ते जाइ पहूँचे, परगट बीचहि गए विगूचे ॥
रहिये गुपुत भेद नहिँ कहिये, जैसी परैं तेसि अब सहिये ।
खीन मयक जो दुइज भो, पुनि सो मयक अकास ।
सब विधिना क चरित, जनि जिय होउ निरास ॥ २९९ ॥

(२२) अजगर खंड ।

कुँअर अँधेरें हा जहँ परा विधिना कहँ विनवै भा खरा ।

(क) सीख लेहु सखि मोहि सों, नगर जकर हुत खोउ ।
प्रम पथ चढि सोउ जो, सो पुनि यहि विधि रोउ । पाठा ।

१—सहस्रा । २—चिरी = चक ।

ए गुसाँइ जग—रच्छ विधाता तोहि बिनु और न दुख सधाता (क)॥
अह निसि जगत कीन्ह सब तोरा, तैं सिरजा अँधियार अँजोरा।
तहीं सरग ससि सूर बनावा तहीं कीन्ह दधि अत न पावा॥
तहीं सकल गिरि मेरु सँवारा तैं सब कीन्ह नदी औ नारा।
तुहीं पताल कीन्ह बलि बासू तैं पति और सबै तोर दासू॥
तुहीं सोई जो सब जग पूजा सुमिरौं काहि और नहिं दूजा।

तैं सुखदायक दुहूँ जग दुख भजन जेहिं नाउँ।
तहीं बिछायसि[1] दुइ मिले, तहीं करसि एक ठाउँ॥२००॥

मैं जबहीं जिय सौंरा तोहीं, तहीं मया करि काढे माहीं।
कूप माहिं जे सुमिरन साजा काढि किय तैं देस क राजा[2]॥
प्रेम बिछोह अध जहि की हे बहुरि मिलाइ जोति तेहि दी हे।
अगिन जरत जे तहाँ सँभारा किय ताहि फुलवारि अँगारा[3]॥
मैं अब परा आइ तेहि ठाऊँ, अपनी सकति निकास न पाऊँ।
मकु तैं होइ दयाल बिधाता, तारे निकट कहाँ यह बाता॥
मैं जस हा तस कीन्ह गोसाईं, अब तूँ कर जस चाहसि साईं।

हेरु गोसाईं आप कहँ मोरे काँ जनि हेरु।
आपन नाउँ दयाल गुनि, हो दयाल एहि बेरु॥ ३०१॥

जहाँ कुँअर चित सुमिरन ठाना, अजगर एक आइ नियराना।
ओदर[4] खोह जाहि नहिं अतू लीलै हस्ति और को जतू॥

(क) दुख सुख दाता—पाठा। १—बिलुगता है। २—यूसुफ को उसके भाइयो ने कुएँ में फेंक दिया था और कह दिया था कि यूसुफ को भ ड़िये खा गये। उसका बाप शाक मे अधा हो गया। यूसुफ को कारवान ने निकाल कर मिश्र मे बचा। वह वहां भाग्यवश राजा हो गया। कनान मे काल पड़ने से उसक भाइ मिश्र गये। वहां यूसुफ ने उनकी रक्षा का। चलते समय अपना वस्त्र दिया और कहा इसे अपने बाप को देना। उन लोगो ने जब कपड़ा अपने अधे बाप को दिया तो वह उस कपड़े को मुँह पर डालने से देखने लगा। ३—हदीस मे लिखा है कि खलील पैगंबर को काफिरो ने चिता मे फूँक दिया था पर खुदा ने उनके लिये चिता का आग और अंगारे को फूल कर दिया था। ४—उदर = पेट।

सिखर डाँग[1] नस आवै चला बन बीहर सब कौं दलमला।
औ तहँ पाइस मानुष बासा खोह लाइ मुख पै खिस साँसा॥
पाहन रूख डार भरमाना साँस सग पुनि कुँअर समाना।
गयो कुँअर पुनि साँसहि लागी, उठी खात ओहि ओदर आगी॥
परथा उलटि भा उदर दुहला डारिसि उगिलि जैस हुत लीला।

आजा अजगर जीउ ले, परा कुँअर बिसँभार।
जै तापै विरहा अगिन तहिँ को निजचै पार॥ ३०२॥

कुँअर सँभारि बेतु पुनि तहाँ नैन न जाति जाइ उठि कहा।
टोइ टोइ तहँ ठाव सँचारा टारे पाहन या द्रुम डारा॥
बनमानुष एक तेहि बन अहा कुँअर चरित सब देखत रहा।
कहसि जाहि बिधि चहे न मारा अस अहि ओदरहु ते निसारा॥
जौ जन सौं बिधि जीउ उबारा, रह न नैन जोति विष भारा।
कौन जिअन जो नैन न जोती, सोत न लहे पानि बिनु माती॥
हाथ पाँव वर बुधि सब आही, एक बिनु नैन करै का काही।

मान न बातैं इमि करै जौलहु घट महँ पौन।
बिधिना पलना राखु थिर, नैन बैन मो सौन॥ ३०३॥

बिधि तेहि हिये दया उपजाई, नियरे हाइ पुनि देखेसि आई।
देखि रूप मन किहिसि बिचारी, यह सुरपुर हुत दिये अँडारी[3]॥
जग न होइ अस काई मानवा, निहचे यह गन गध्रब छवा।
अब पूछौं एहि की सब बाता, कौन जाति कस कीन्ह बिधाता॥
केहि अभाग क दीन्ह सरापा, अस कारन दहुँ भौ केहि पापा।
कहेसि रे अध निधातादोही, कहु सो सन सत पूछौं तोही॥
जो सत सग साथ लष गोती, हियें सत्त लोचन सिर जोती।

सती मरै जौ सत चढै सत्त सहस दस आउ॥
तन मन धन बरु जीउ किन, जाउ सत्त जनि जाउ॥ ३०४॥

१—पहाड़। २—निगलना। ३—गिरा दिया।

सत्य सपत दै पूछौं तोकाँ का तोर जाति जनम कहि लोकाँ।
का तोर सरग देव(क) औतारा, इन्द्र सराप लहे महि डारा॥
कै रे जनम बल बासुकि देसा, कै तपि मही आइ परवेसा।
केहि गुन सकति इहाँ तैं आवा, मानुष इहाँ न आवै पावा॥
जौ मानुष तौ गुन कहु मोहीं अहि तें साँप न लिजवै तोहीं।
कै तैं जनम भ्रध खधु पाए, कै अबहीं भौ अहि के खाए॥
देखौ सब मानुष के भावा कहु सत इहाँ कौन लै आवा।
देखत लोना रूप तोर छोह उठै जिय माहिं।
कहसि सत्त सत पूछौं सपथ सिधु दै तोहिं॥ ३०८॥

---

(२३) बनचर खंड।

बनचर बचन कान जब परे, कुँवर रोम तन भै सभ खरे।
मानुष जानि रहस उपराजा, कहिसि किहौं मानुष विधि साजा॥
जम्बूदीप देस अग आना धरनी धर पितु पूत सुजाना।
दच्छिन दिसा गएउँ होइ जोगी, चित्रावलि के रूप बियोगी॥
रूप नगर जहँ चित्र मन हरा, तहाँ आइ काहू हौं छरा।
है भजन चखु कै अँधियारा छिन महँ इहाँ आनि हौं डारा॥
तैं कहु सत को हसि का नाऊँ, गाढे मीत भएसि एहि ठाऊँ।
कहेसि कि अस तूँ तेस हौं कोइ बस बन कोइ देस।
हम सब सेवक ताहि क जो जग दुहुँ नरेस॥ ३०६॥
अब चित चित करहु जनि भाई, कहौ मीत तौ करौं उपाई।
औषध देउँ नैन होइ जाती, अब फिरि पानि चढ़ै चख मोती॥
यह कहि बनचर बन कहँ धावा, घरी चारि बीतें पुनि आवा।
भ्रजन घसा पात पर कीयें, नैन्हन होइ जोत जेहि दीयें॥

(क) लोक-पाठा।

कुँअर हाथ पर पात ओडारा, आपु ठाढ भा कूदि निनारा[1]।
कहेसि देहु यह अजन आँखी, हम तुम बीच बिधाता साखी॥
कुँअर नैन लै अजन दीन्हा, गा तम मेटि उदै रवि कीन्हा।

परा कुँअर कहँ दिष्टि जग(क) मन बच कहसि पुकार।
चखु निरमल जग सूर हो, जो जग पर उपकार॥ ३०७॥

दिष्टि परा बनचर जो अहा, मोहि का देख कुँअर तब कहा।
नियरे आउ रे परउपकारी तन मन जीउ करौं बलिहारी॥
कहसि तौ हौं नियरे चलि आवौं, तुव चरनन रुचि आँखें लावौं।
निमिष न जाइ निबाहे तोरा तें सहदेव धनतर मोरा॥
कहसि कितै केहि देसक अहई छाडि झूँठ काउ साँच न कहई।
आन क दरब लेहु जिउ मारी निसि चोराइ दिन कइ बटमारी॥
आन क मानुस आन जो होरा कहु परतीत कौन तेहि केरा।

औ हम जानत सत्त बिनु असत न तहाँ समाइ।
छाडि देस सपति सकल कत रहते बन आइ॥ ३०८॥

यह कहि बनचर बन कहँ चला देखि देखि हाथ कुँअर पै मला।
रहेउ ठाढ सनमुख चखु लाई औ लहु बन मों गयो छिपाई॥
कहेसि हतु जो इन्हके नाहीं तो तजि देस रहहिं बन माहीं।
अब उठि चलौं तजौं एहि ठाऊँ, करम सँजोग पथ मकु पाऊँ॥
चला कुँअर उठि बन खँड माहीं सग न काउ बाज[2] परछाहीं।
सौंरि हियें चित्रावलि नेहा, नैनन्ह चुवे मघा कर मेहा॥
नदी नार बन चहुँ दिस फूला, भटकत फिरै कुँअर तहँ भूला।

पथ न सूझ असूझ बन चलत राह नहिं पाइ।
खन बैसइ खन धावइ, खन रोवइ बिलखाई॥ ३०९॥

१—नियार अलग। (क) दिष्टि परा जग कुँअर कहँ। पाठा। २—मिला।

(२४) हस्ती खड ।

बीते चलत पाख दुइ चारी, परा दिष्टि एक कुजर भारी।
ऊँच सीस जनु मेरु देखावा, सूँड जानु अजगर लरकावा[1] ॥
तरुवर जनु चबाइ दुइ दाँता, डारत आउ खेह मदमाता।
धावत जाइ पुहुमि जनु धसी, आधे पीठ सरग सौं खसी ॥
भागहिँ थैर हस्ति मद बासा कुँअर देखि जिय भयो नरासा।
कहेसि मीचु अब पहुँची आई पहि आगे कहँ जाब पराई ॥
अख नाहिँ जो सम्मुख धाऊँ, मारौं एहि जैपत्र[2] जौ पावौं।

जनम अकारथ अगत मा, गई अमिरथा आउ।
चित्रावलि के दरस कर रहा हियँ पछताउ ॥ ३१० ॥

अख न जो सनमुख होइ लरा, जो निजु मरन भागि का मरौं।
कुजर धाइ कुअँर पर परा, रहा ठाढ ही नेक न डरा ॥
धाइ लपेटि सूँड सौं लीन्हा चाहेसि मूड डाढ तर दीन्हा।
कुअँर हिये बिधि सँवरा तहाँ, जो बिधि केर माधु तेहि कहाँ ॥
ततखन राज पछि एक आवा, परखन डोल जो डैन डोलावा।
ओहि हस्ती पर टूटा आई, गहि ले उडा सरग कहँ जाई ॥
सूँड समेटि जो कुजर रहा कुअँर न छूट डरन्ह सुठि गहा।

उडा जाय अतरिख महँ दीखै जैस पहार।
घरी चारि महँ लै गयो, सात समुदर पार ॥ ३११ ॥

बारिधि तीर जहाँ हुन रेतू परा तहाँ छुटि कुअँर अचेतू।
भरि गये सीस देह सब खेहा जेहि तन नेहाँ गति देहि पहा ॥
जेहि के हिए बस प्रान पियारा सतत देह चढावै छारा।
जिमि जिमि छार देह पर चढा, तिमि तिमि रूप मुकुर जिमि बढा ॥
छार चढावैं बहु गुनि जोगी छार मरम का जानै भोगी।
मानुस देह छार हुत कीन्हा, छारबुद्धि[3] जिन छार न चीन्हा ॥
कवन जनम केहि तप करतारा मूँठी छार अमित बिस्तारा।

१—लटकाया हुआ। २—जयपत्र। ३—बुद्धिहीन।

दखि बड़ाई छार की, बसेउ आइ करतार।
छारहि ते कीन्हेसि सबे, अत कीन्ह पुनि छार ॥ ३१२ ॥

पहर एक गइ उठा जा चेती दखा परा समुंद की रती।
ना सो हस्ति जहि क बस अहा ना सो पछि जा कुंजर गहा ॥
सौंरिस हिय विधाता सोई जहि क करत खल सब होई।
पै गोसाईं है दुहुँ जुग राजा प सब चरित देति प आजा ॥
जिअतेहिं मारि मिलावसि छारा चहसि ता दुसि फरि अातारा।
गिरि परबत कै पालि बहावसि पानिहि साजि चमरु दखावसि ॥
छत्रिन अछत्र[1] राँक सम करई चहइ तु छत्र राक सिर धरई।

भजन गठन समस्त तू आर न दूजा काइ।
तही अहा अह है नही भा पुनि आगे होइ ॥ ३१३ ॥

कुअँर सबरि चित्रावलि नेहा उठि क चला भार तन खहा।
गिरि परवत औ कानन घना प्रम प्रसाद न लेख गना।
निडर आहि तेहि बन खंड माहीं अस सो बान्ध मीच अब नाहीं ॥
बीता चलत मास एक सारा बन आगर भा भा उजियारा।
रहसा हिय देस जब पावा दृष्टि परा एक नगर सोहावा ॥
कहेसि आउँ अब नगर मझारि मकु मिलि जाय काऊ अगारि।
पूछि लेहुँ तेहि नगर की बाटा चित्र बिकान ह जहि की हाटा ॥

देखेसि पुनि फुलवारि एक फूले फूल अपार।
अलि गु आरहि जहाँ नहँ करहिं मजार कलोल ॥ ३१४ ॥

देखि अपूरब ठाउँ सोहाई, कुअँर तहाँ छिनु बइठ जाइ।
सपति कुसुम देखि चित लावा लोचन जर निहारि सिरावा ॥
जूही फूल दिष्टि भरि हरा लखे भाव चित्रावलि करा।
देखि गुलाल अधर चित चला[2], दारिम दसन रहसि हिय बढ़ा ॥
चपक माँहि सरीर की शोभा नारँगि लखि उरोज मन लोभा।

१—अछत्र = निच्छत्र। २—चला = चलाया हुआ।

अली माल फूलन पर हेरी, होइ सुरति अल्कावलि केरी।
गीव मजोर देखि मन आवा, लोचन खञ्जन आइ देखावा॥
जाहि होइ चित की लगनि, मूरख सों सो दूरि।
ज्ञान सुजान चहूँ दिसि(क) वोहि रहा भरि पूरि॥ ३१५॥

(२५) कौलावती खंड।

सागर गढ़ पति सागर राजा सागर नाउँ वोहि पै छाजा।
दारिद गगा आउ जो दुखी, पकुन लहर करै पै सुखी॥
तेहि कै सुता कौलापति। बारि सखिन साथ आई फुलवारी।
सब मुगुधा[1] जोवन अँगिराता कोइ ज्ञाता[2] कोई अज्ञाता[3]॥
काहू तन अजहू लरिकाई काहू घेरि लीन्ह तरुनाई।
जोवन सिसुता सम नग काहू, कोउ न जान नाई[4] कस नाहू॥
सबै कँवल जनु सूरन देखा सब कुमुदिनि जनु चाँद न पेखा।
अजहूँ मनमथ उपनत[5] पेम न जानहि नाम।
अजहुँ काहु देखा नहीं, सुरति[6] सेजसग्राम॥ ३१६॥

कौलावति गुन सागर रानी पढ़ी अमर पिंगल सुर[7] ज्ञानी।
लागी तजन गात सिसुताई आए सँचार कीन्ह तरुनाई॥
आइ जो रतिपति गात समाना भूषन खाउ हिये अधिकाना।
घरी घरी पुनि लाज सुहाई लोचन दसन झाँपि कै जाई॥
भौहैं धनुख उतँग होइ चढ़ी, लोचन कार दुहूँ दिसि बढ़ी।
उर अँगिरात भाँति अति भली कँचन बेलि कपूर की कली॥
राजत रोमावली सोहाई, कुंदन कोविदार सी खाई।

(क) कइ सुजान सो जान"। पाठा॰
१—मुग्धा। २—ज्ञात यौवना। ३—अज्ञात यौवना। ४—नाथ = पति।
५—उत्पन्न। ६—संभोग। ७—स्वर = सहित।

सिसुनाई तन कोटि गहि रही अटक दिन चारि।
चलि निकसि पुनि हारि कै, तरुनाई बरि आरि ॥ ३१७ ॥

कौलावती आइ फुलवारी, फैलि गईं चहुँ दिशि सब बारी।
देखि पुहुप चित भया हुलासा, लागा तोरन कुसुम सुबासा॥
गूँधहि हार गाँथ लै उारहि करहि गेंद आपुस महँ मारहिं।
भारत सीस कस मुकुलाई[1] धावत उर अचल फहराई॥
खेलहि तिया सबहिं बिलम्हाई रति[2] के रूप रंभ[3] की जाई।
साजि गेंद कौलावति रानी सखी एक कहँ मारि परानी[4]॥
हँसति आय धाइ कै तहवाँ, कुअर सुजान येठ दुत जहवाँ।
देखत रूप कुँअर कर रही अचक होइ ठाढि।
जम होइ हिये समाइ गा लीन्हेसि जिउ जनु काढि ॥३१८॥

आनन देखि रही छिन खरी पुनि मुरछाइ पुहमि खसि परी[5]।
प्रान परा प्रेमानल आँचा उखिगा रहा हाथ पै साँचा[6]॥
सखी सबै चहुँ दिसि तैं धाईं देखि चरित सब रहीं ठगाईं[7]।
करहिं सँभार न जागै रानी मेलहिं दसन खोलि मुख पानी॥
घरी एक बीते भा चेतू आहि अचेत आउ हिय चेतू॥
पूछहिं बात उतर नहिं देई घूमत रहै सांस पै लेई।
करहिं बसन लै मुख पर छाहाँ कहहिं भयो का खेलत माहाँ॥

पुनि जो देखिन बिरिछ तर, तपसि एक बनचीन्ह।
कहा सबन मिलि निहचै प जोगी कछु कीन्ह ॥३१९॥

१—मुकुलित होता था = खुल जाता था। २—कामदेव का पत्नी। ३—रंभा एक इंद्र लोक की अप्सरा। ४—भागा। ५—गिरि परी। ६—ढाँचा = ठठरी। ७—ठकमारी = विस्मित।

छरी[१] काहु पहि खेलत माहीं, अब धौं इहाँ रह भल नाहीं।
पुनि जो एकमत होइ सब आईं, डाँडि घालि मदिल लै आईं[२]॥
औ पुनि सबै गईं लै तहाँ कौंलावति की माता जहाँ।
गगा नाउँ उदधि की जोरी, धन जननी जेहि बिमल किसोरी॥
बोलीं सखी नैन भरि पानी खेलत कँवल कली कुम्हिलानी।
दाड़िम डार गहे हुति जरी, कै दानो कै चुरइलि छरी[३]॥
सुनतहिं लहरि चढी चित गगा होइ गइ बिकल भयो सुख भगा।

देखि अवस्था धीय कै, उठी करेजे पीर।
बूड़ि गई नख सिखर लो, दुहुँ लोचन भरि नीर॥ ३२० ॥

कठ लाइ मुख चूमै रानी, धोव बदन नैन के पानी।
पूछै धान प्रान कहु मोरा काहे बूड़ि गयो जिउ[५] तोरा॥
कै तुइ तन कोउ पीर उपाई कै कछु दिष्टि परा हुत आई।
कहसि बेगि जेहि औषद मागौं प्रान होइ तौ देत न खागौं[७]॥
बैद बुलाइ खिआवौं बरी जोगिन्ह आनि बँधावौं जरी[९]।
जोगी नाम कान जब परा बहुरा चित जो चित हुत हरा॥
देखा नैन खोलि चहुँ ओरा देखेसि सीस माता की कोरा।

लाज सकुच चित ऊपजी, उठी बेगि अकुलाइ।
बैठी ओढ़ि सँभारि पट लोचन गए सुखाइ॥ ३२१ ॥

रहसि रानि जब देखिसि बेतू, कठ लाइ पूछै करि हेतू।
नित गौनति खेलति फुलवारी आजु बिकल काहें भइ बारी॥
कहेसि सखी सँग अपने आई, भँवति[१०] फिरत हुति बाल सुभाई।
फिरत सीस चखु भा अँधियारा, ताँवरि[११] आइ परी बिकरारा॥
तुम माता जनि बिस्मै करहू, अब जिय कुशल हियें जनि डरहू।

१छली = मन मारा। २—डाली। ३—आरश किया। ४—मुरझा गई।
५—जी बूड़ना = मूर्छा आना। ६—उपाइ = उत्पन्न हुइ। ७—कमी करो। ८—बटिका = गोली। ९—जड़ी = औषध। १०—भ्रमित = घूमती हुइ। ११—झाइँ = मूर्छा।

सुनि रानी जिय भयो अनदू छाडेउ राहु पून कर चदू ॥
परतिहार[1] सों कहा हकारी, अब जनि आन देहु कहुँ बारी ।

दिन भर आय यहँ छइन[2], परी साँझ जब आइ ।
बिकल भई कौलावती चढि धौराहर आइ ॥ ३२२ ॥

बिकल कँवल अथएव जनु सूरा हिरदै जमेउ बिरह अँकुरा ।
लोचन नीर सेज सब बूडी कौंलहि अछज भई जर जूडी ॥
दहकि सरीर अगिनि जनु लाई जहँ जहँ भीजे जाइ सुखाई ।
सायक अलिल अनल भइ ससी साँपिनि सेज अग अँग डसी ॥
भवन भयेउ निखड अँधियारा बोली चुरइलि नाहर द्वारा ।
कुमुदिनि नाउ सखी एक अही तासों बोलि बिथा सब कही ॥
सुनु कुमुदिनि त कँवल की जोरी, सगिहु सन ना भावै थोरी ।

हम तुम्ह ठाँइ एक सग अब प्रगटेउ सोइ नात ।
तोहि सों कहौं उघारि के सुनै न पावै मात ॥ ३२३ ॥

तोहि सो कहौं जो मोर मन माना परे न पाउ आन के काना ।
कालि जो गई सखी सँग बारी बीनत आहि फूल फुलवारी ॥
जागी एक अहा तहाँ लोना देखत जनु सिर मलिसि टोना ।
भौंह धनुष बरुनी सर साधा मारसि हियँ बान बिष बाँधा ॥
सुधि न रही बुधि लैगा हरी, बिनु जिउ होइ पुहुमि खसि परी ।
मैं अचत यह अहा सचतू, गयो बिछोहि[5] हिए दै हतू[6] ॥
नहिं जानों वहु का भा जोगा भई आहि कारन हों रोगी ।

खोजहु सखी सो जोगना, जो रे गयो मोहि मारि ।
नाहि तौ करिहौं काँथरी तन दुकूल मै फारि ॥ ३२४ ॥

अबहीं पही नगर महँ सोई, पावे वेगि जो खोजै कोई ।
आजु जो इहाँ खोज सो पावा, कालि जो आइ रहै पछतावा ॥

१—प्रतिहारी = रखवारा । २—छय हुआ । ३—दहार = गर्जन ।
४—यात्रिका । ५—छोह रहित = निर्मोही । ६—श्रम ।

पथिन्ह दया होइ सुनु थोरी, मन जहँ रमे चलै तेहि ओरी।
हौ अधीन वह अति निरदई दहुँ कहि भाँति लिखाहै दई।
पथी पछो थिर का राखा छिन छिन बैठ आन तरु साखा॥
ओहि सुपख बहु तरु वर डारा हा पींजर महँ करौ पुकारा।
कौन सा हितू मिलै अब आइ व्याधा होइ फँदाये[1] ओई॥
हा रहुँ तें जौ उडि गया पुनि कहुँ दिष्टि न आइ।
तेहि पछो क पाछु महँ जनि बूझि जिव घाउ[2] ॥ ३२५॥
कौल बिथा सुनि कुमुदिनि रोई अस दुख दुखी कहसि अन[3] कोई।
अबहिँ न सुरज किरिन समानी अनगुन कौल कली कुम्हिलानी॥
अबहिँ न बैठि रहस रस कीन्हा भार बियोग आनि बिधि दीन्हा।
उपजेउ प्रेम हियँ जो आई करु न चिन मे करब उपाई॥
प्रीतम नेह अगिनि जनु डरिये एकहि बार धाइ नहिँ परिये॥
धरै धीर दुख सहे जो बारी ताहि सो अगिनि होइ फुलवारी।
हौं कुमुदिनि पढि पारथ जानों कहसि तो माहि सरग लसि आनों॥
तोर बिथा सुनि मोर हिय जामेउ बिरह अँकूर।
अब निसि बीते कौल कहँ भोर देखावौं सूर॥ ३२६॥
कुमुदिनि सो मन रचा उपाई, भोर होत गगा पहँ आई।
कहेसि राति मैं सपना दीठी, जागी सँग जनु बार बईठी॥
तिन्ह मह एक सिख जो आहा, कौलावति कर अचल गाहा।
हौं जनु बरबस जाइ छोडाई, जोगी माँगे खपर भराई॥
पको नाहिँ जौ देखों जागी, तब ते नैन खटपटी लागी।
कस यह सपन कैस बेवहारा, तुम रानी अब करहु बिचारा॥
काल्हि जो कवँल अग भरि आवा मकु कछु होइ देव कर भावा[4]।
बोली गगा साँचही, महादेव कर भाव।
जोगिन्ह आनि जेवावहु, जाइ कौल अरसाव[5] ॥ ३२७॥

१—फादा लगा क फँसाव। २—घाला = लगाया। ३—अज्ञात।
४—भाव = आवेश। ५—बाधा।

कुमुदिनि रहसि रसोई साजी, सगरे नगर दुदभी बाजी।
जोगी जन कोइ कतहुँ न जाई जो आवै राखौ बिलमाई॥
आनि जँवावै अपने दोसा[1], राजवार कर लेइ परोसा।
पाक रसोई ठाँव सवारा, जन कत गये बुलावनहारा॥
जोगिन पाँति आनि बैसाई, कुमुदिनि कौलावति पहँ आई।
धीरहु आइ कौल रवि मानी जेहि बिनु रहसि रैनि कुम्हिलानी॥
को अस जोगि काहि सिर जटा जेहि क बिरह परी हिअ कँटा।

सुनि धाई कौलावती भा अनन्द हिय माँझ।
चितवत भई निरास जिअ, होइ गई जनु साँझ॥ ३२८॥

कहसि कुमुदिनी यह गन तारा यह नहिं आउ सूर उजियारा।
बेगहिं खोजहु देवसहिं जाई अनि रहि जाई रैनि हिय भाई॥
आसन आसन ढूँढहिं दासा दहु कहि आसन मिले सो आशा।
कुँअर गवन सर साज सँवारा, तत खन आवा राज हँकारा[2]॥
कहसि आजु है राज बुलावा, जोगिन कतहुँ जाइ नहिँ पावा।
पहिले राजपरोसा खाहू पाछे जहँ भाव तँह जाहू॥
अम्या राज न मेटइ कोई का जोगी का भोगी होई।

जोगिन्ह सुना अतीथ एक, आवा अम्या मानि।
बहु आदर कै लइ गए, सिह पुरुष पहिचानि॥ ३२९॥

कुमुदिनि देखि कुँअर की ओरी, कहेसि किये अलि पकज जोरी।
निहचै यही बिदेसी जोगी, परगट जोगि गुपुत कोउ भोगी॥
निहचै यही सूर उजियारा जेहि बिनु कौल आहि बिकरारा।
निहचै यही सो भौंर उदासी जेहि बिनु जल महँ जलज पियासी॥

१—दिवस = द्योस = दिन को। २—बुलावा।

निहचै यहि पहँ पेम ठगौरी[1] जो धन[2] देखै होइ सो बौरी।
जानि बूझि कोउ जीव न दई लेयन केर छोरि जिउ लेई॥
रनि सो कँवल धनि यह रबि साईं हम कुमुदिनि कहँ लखैं तराई।
गई धाइ सो देखिकै कँवलावति क पास।
कहसि कि मलिनाई तजो सूर कीन्ह परगास॥ ३३०॥

सुनत सूर कोलावति रानी, अति हुलास चखु भरि गए पानी।
तब कुमुदिनि हँसि पूछा बाना कहु दहुँ माहिं सूर परभाता॥
जहँ हुलास तहँ हँसी बखानो लेचन पानि भरे का जानी।
कौलावति तब उत्तर दीन्हाँ, सुख कर ठाँव दुख हुत कीन्हाँ॥
निसि जो अथैगा पीतम सूरा हिय सर रहा दुख जल पूरा (क)।
अब पिउ आइ चाह तोइँ दीन्हा, सुनि सुख हस फुरहुरी लीन्हा॥
तेहि की पाख पानि जो भरा सो दुहु लेचन के मगु ढरा।
दिष्टि लपेटी सुरति पिय, अब सुनि दरसन होइ।
दुहुँ लेचन के नीर सों बेगिअ डारा धोइ॥ ३३१॥

कौंल आइ दिनकर पहिचाना, भा रतनार[3] बदन पिअराना।
दरसन देखि दडवत करी, कहेसि कि यही अली हौं छरी॥
यही मोर जिउ लीह चोराई, यही मत्र पढि हौं बौराई।
जेहि बिनु राति अही कुम्हिलानी सो तैं सूर देखावा आनी॥
तैं बरबस हौं चेरी कीन्हा, भौ बिनु दाम मोल पुनि लीन्हा।
ओहि के हेरत हिय न सेराई, नियर जाउँ करु सोइ उपाई॥
असमन आवै होउ जो होना, नियर जाइ मुख देखो लोना।

१—ठगने की जडी। लोगो का विश्वास है कि साधुओं के पास कोई जडी होती है जिसे छुला कर लोगों को मुग्ध कर उन्हें अपने वश कर लेते है फिर उनसे ठग कर जैसा चाहते है कराते हैं। गद्। २—ध क्या=खा। ३—उगा। ४—प्रियतम। (क) हिय यह रहा दुख कर कूरा। पाठा। ५—लाल।

कह कुमुदिनि ससय कछु, जनि जिअ माहिँ करेहु।
आपन हाथ परोसि कै भोजन जोगिहिँ देहु॥ ३२९॥

कौलि सोरहो साज बनाई, रहसि सभु[1] सेवा कहँ आई।
अपने हाथ परोसा लेई, दुनौं हाथ जोगिन कहँ देई॥
दइ भोजन बिनव कर जोरी मन अरु नैन कुँअर की ओरी।
कुँअर न देखै सीस उँचाई रहा नैन दुइ पाएहँ लाई॥
कौलावति कहँ सबै सिगारा भग भग होइ लाग अँगारा।
जाहि लागि सब साज सोसाजा देख आ सो न आव केहि काजा॥
बहुरि हिये महँ करै बुझाऊ औ न देख तो का पछिनाऊ।

मोरे मुख सौं सहसगुन सुन्दरता ओहि पाउ।
जौ दिन दीप न दीखई यहि कर का पछताउ॥ ३३३॥

पुनि रानी छर[2] एक उपावा भोजन भीतर हार चारावा॥
तेहि भोजन सौं खप्पर भरा लै सुजान के आगे धरा॥
पै पुनि ठाढ़ भई कर जोरी, सुनहु देव एक बिनती मोरी।
बारी गयेउँ काल्हि एक घरी, खेलत तहाँ काहु हाँ छरी॥
तेहि घरी सेती अब नाईं डोलै गात पात की नाईं।
पै जो चित्त काहु हुत हरा, अबहीं आइ फेरि घट परा॥
परसन होहु करौं नित पूजा, मोरे तुम बिनु और न दूजा॥

देखु न हिये बिचारि कै तोर सबै यह भाव।
करु सुदिष्ट औ कृपा जेहि जाइ मोर अरसाव॥ ३३४॥

सुनि के कुँअर हिये तब जाना, चलत पथ झाँखर[3] अरुझाना॥
जो बरि चलौं कहै मति छोटी, अरझत होइ बात पुनि खोटी।
मोरे करत न एकौ होई, जो बिधि करै होए पै सोई॥

१—शिव = योगी। २—छल = चालबाजी। ३—कँटीली झाड़ी।

यह गुनि खप्पर झोला पाहा[1] उठि भा ठाढ कौल नहिं चाहा।
गुरु के उठत उठे सब चला कौलहिं भा जनु निसि सों मला॥
पकज सो कुमुदिनि हँसि गेली आजु सोह घन गेलि कि चोली।
बना अग अँग सरे सिंगारा पै कस गाँव न पहिरे हारा॥
सुनि कै देखन्हि उरज कँह कहसि अबहिं है टूटि।
इहँवहि काहु लीन्ह है चोर कहूँ नहिं छूटि॥ ३३५॥
भा अँधेर सब काहुन जाना कौलावति कर हार हराना।
ढूँढहिं सखी जहाँ नहँ पूँछा जोगि भारहिं झोली छूछी॥
कौले नेगिन्ह कहा हँकारी साधु चोर कै लेहु बिचारी।
ठाढ होहु घरि के बारु राकहु बाघा मैर सेवारू॥
एक एक सब फान्दु हरि सीप सीधरि केका[3] नेरी[4]।
कौतुक देखें सब ससारा साधु चोर कर होइ बिचारा॥
आजु कसहु कचन कै ताता न्हु को पीत होइ को राता।
जोगि बोले सहज सो मुद्रा मुकटा बार।
जाना एही पथ अब दै दै आपु निवार॥ ३३६॥
नेगी ठाढ भए तेहि बारा एक एक कर लेहिं(क) बिचारा।
कथा भारि ढूँढ़ि कै झाली, गहि भुज काढि बहु भल बोली॥
खलत दिगबर काउ न पूछा गहै न कोऊ देखि कै छूछा।
देखि दिगबर सब पछताने जोगि पथ तब भये अचाने॥
काहे लागि समेटी झोली तापी कस न लाए कै हाली।
काहे के हम कथा सीया काहे लागि हम धधा कीआ॥
भा भरि जनम काँध कर भारा आजु सो गीवँ केर फँसियारा।
भा गिँव कथा काल अब औ जम झोली काँध।
भारन अरुभा आइ के अपने सीगन्ह भाख॥ ३३७॥

१—टाला। २—एक मञ्जली। ३—नालकुमुदना। ४—नरी = कुई का फल। (क) लाग—पाठा।

(२६) जोगी बंधन खंड ।

देखि देखि सब काढ जोगी रहा पाछ तब विरह वियोगी ।
कहसि कि महूँ निकसि कै आऊँ जोगिन साथ पंथ मकु पाऊँ ॥
अस नहिं जानै जोगि अजाना राज परासा त्रिय सों साना ।
जे रुचि राज परीसा खाया जानि बूझि ते जोग नसाना (क) ॥
जोगिहिं राज संग तस लागा फूलहिं आँजन कर जस दागा ।
निसरत अबहिं बार महँ आहा सकट कै तब नेगिन्ह गहा ॥
छोरि खोलि जब कथा भारा गिरा हार जग भा उजियारा ।

हार हराना पाउ जब(ख) चहुँ दिसि बन्गा सार ।
निकसि चले जोगी सबै कुअर धरा कै चार ॥ ३३८ ॥

लागा छुर जो कौरि साभा मिलि जन चार चोर कहँ बाँधा ।
कुअँर देखि मन सोचक रहा कहसि कि बिधि यह राइगा कहा ॥
बीती आउ मीचु पुनि आई चित्रावलि नहिं देखै पाई ।
गा सब जनम अमिरथा मोरा कत भै खर कतवार बगोरा(ग) ॥
पै बिधना जो तोहिं अस भावा महूँ जीव बाहि मारग लावा ।
मन बच ताहिं सुनावउँ भाखी अहसि तुहा अब मारी साखी ॥
जेहि कारन भिख पहिरा कथा, जीव देत हौं तेहि के पथा ।

मान इहै पछताव मन सौंरि उठै जिउ आगि ।
इतना जान न चित्रिनी मुवा जोगी मोहिं लागि ॥ ३३९ ॥

बाँधि चोर राजा पहँ आना देखि रूप सब जग पछताना ।
अस रुपवंत चोर नहिं होई यो जो होइ मार नहिं कोई ॥
सागर नगर इहै एक रीती सनत यही रीति महँ बीती ।
तसकर जाको विषै चोराव, ता कहँ राजा पूँछि पठावै ॥

(क) जे कछु राज परासा खावा जानि बूझि तिन जोग नसावा । पाठा ।
(ख) पावा हार हेरत जब । पाठा ।
(ग) नमभर आइ मार यह भोरा । पाठा ।

जौ सो कहै तौ सूरी देही॑ नाहिं॑ तौ बाधि डाँड कछु लेही॑ ।
औ जो सोइ छुडावै आई बिलँव न लाव देइ मकुलाई ॥
आपन काँध भार नहि॑ लेई, तेहि की अर्घ्यां अर्घ्यां देई ।

नृप कह आकर चोर है ताकहँ पूछहु जाइ ।
भेगी आगे कौल के (क), ठाढ भए सिरनाइ ॥ ३४० ॥

कौले भेगिन्ह अशा दीन्हा आनु सिभु की सेवा कीन्हा ।
जोगी जँवाएँ औ फल पाऊँ, जीउ मारि का पुन्य नसाऊँ ॥
मैं ससिरूप अहाँ वह राहु, गहा रहै ना मुसै न काहू ।
राखहु बाँधि याहि बँद माही ऐसन चोर छुटा भल नाहा ॥
भेगिन्ह चार बाँधि बैसारा औ सँग दिये पाँच रखवारा ।
पाँचो भून रहैं नित घरे कोह भर चखु सौंहन हेरे ॥
कै अनेक भेगी रखवारी माँगहिं आपनि आपनि बारी ।

जोगी परा पाच बस नातँ भा बिकरार ।
पाँचो नाच नचावहाँ आपनि आपनि बार ॥ ३४१ ॥

दिन बीता निसि भई अँधेरी, कौल हिए खरकी यह भेरी ।
कुमुदिनि कहँ लै मतै बईठी कहसि चोर पहँ जाउ बसीठी ॥
कहु तैं ऐस निछोही जोगी, जीउ लेइ कीन्हेसि हौं रोगी ।
हार बिप नहिं छूटसि चोरा जौ लौं जीउ देसि नहि मोरा ॥
जनु देखसि अपनहिं साँकरी, तुम्हते हौं सुठि सँकरी परी ।
जौ है परी तौर पग बेरी, मोरँ हिए जो देखसि हरी ॥
जो तौर हाथन्ह है फाँसा, मोरे गिँव जेहि आव न साँसा ।

पछी पथी बन बसै, तिन्ह क भरोस न होइ ।
तबहीं लौं प थिर रहहिं रहहि जौ घेरे कोइ ॥ ३४२ ॥

(क) आइ कौल क आग । पाठा ।

कहसि सत्य का हसि का नाऊँ कौन काज आएसि एहि ठाऊँ।
अरु कहवाँ का मनसा तोरी, कहु सो जाइ जिउ संसय मोरी॥
जोगि न होइ कोउ एहि रूपा, प्रगट हासि बैरागी भूपा।
जौ हसि भूप तो परगट होहू होइ भरोस हिए कछु मोहू॥
जौ हसि जोगि आदि गिंव कथा देहु सबद लागौं तुम पथा।
तोरँ पथ पथ है साईं दाहिन होहु देहु जनि बाईं॥
तोर नाव चढ़ी हों बारा गहि गुन खेइ लगावहु पारा।

जस तू मोरे बद महँ तस हों तोरे ब द।
तोरे तन जो एक दुख, मोरे मन सो दुद[1]॥ ३४३॥

जहाँ कुअँर बँद भीतर अहा कुमुदिनि आइ सँदेसा कहा।
कुअँर कौल जस कौतुक कीन्हा सुना सबै पै उतर न दीन्हा॥
बहुत बिनति कुमुदिनि कै हारी, देखा सौंह न नेन उघारी।
होइ निरास कुमुदिनि फिरि आई कहसि कवल सौं अल निठुराई॥
सुनु पदुमिनि कुमदिनि हों सोहीं, बातनि रनि नखत ससि माहीं।
एह पाहन जल पर न भीजा कहाँ होइ दुख तो न पसीजा॥
सुनि कै कौल लीन्ह उर साँसा कह अब परा कठिन गिंव फासा।

बाँधी डोरि प्रेम की, बर सौं आइ न छूट।
दीपक प्रीति पतग ज्यों प्रान दिये पै टूट॥ ३४४॥

पुनि आपन मन कहँ समुझावा, अबही वे मो सौं दुख पावा।
मकु बीते बासर दुइ चारा जोगि निछोही होइ मयारा॥
कहहु जाय जे हैं रखवारा, जोगी दुख सहै नहिं पारा (क)।
औ कछु तिन कहँ देहु अँकोरी[1] कहहिं न कनहुँ कथा यह मोरी॥
भूतन्ह जबही पूजा पाई, होए गए पानो गइ कठिनाई।
लालच बाँधा सब ससारा, लालच सो मृदु होइ पहारा॥
लालच हस्ती कर बल हरा, लालच सौं हरनाकुस धरा।

१—द्वन्द। (क) जोगी दुख न पारवारा। १—घूस।

जो सिर होइ सरग लागा नवै न कौनी कानि[1] ।
लालच वेगि लगावै , पुहुमी सीस सो आनि ॥ ३४८ ॥

कैलेँ राता चीर उतारा , औ उत भूखन बाजनहारा ।
पहिरि अपूरब साँवरि सारी तम कहँ मिली दिये अँकवारी ॥
आनहु चखु लुकअजन दीन्हा कोउ न देख भेष तस कीन्हा ।
दूरहिँ वैसी वारि की थोरी देखै ससि मुख होइ चकोरी ॥
मनहिँ कहै भौ दरसन लाहा , सुनेउँ न बात रही उतसाहा ॥
इन्ह नैनन्ह दहुँ का तप कीन्हा , जासोँ यह सुख दरसन लीन्हा ।
ए स्रवनन के लद्दा सुभागे पिय मुख बचन सुनो अनुरागे ॥

अधरन लागी चखु रहीँ अब कह अब कह बात ।
तमचुर[2] यही सोच महँ बोलि उठा परभात ॥ ३४६ ॥

तमचुर सबद सुनत सुधि आई , जनु सोवत कोउ आनि जगाई ।
तमचुर बोल बान अस लागा , चहुँ दिसि उठे रोर कै कागा ॥
उठत देखि रवि किरिन कि धारा , जीउ छाडि भागी तेहि बारा ।
जेहि जन के मन प्रेम अँकूरू ताके बैरी तमचुर सूरू ॥
परी सेज पर मंदिर आई जिउ बिनु जानु चित्र लिखि लाई ।
अहा जो अम्बुज बदन बिगासा भा कुमुदिनि रवि क परगासा ॥
ज्यों ज्यों होइ जगत उजिआरा त्यों त्यों लागै मदन लुवारा[3] ।

मीत न वैरी होइ जग होइ मीत रिपु अत(क) ।
मोहि मीत दुरजन भयो औ मुख फेरा कंत ॥ ३४७ ॥

कहेसि रोइ ह दिनकर देवा मैं सन्तत कीन्ही तोर सेवा ।
सरवर माहँ एक पग खरी , सिर की धूप सकल तन जरी ॥
सुमिरत सब निसि रहौ मलीनो , तुमरी सेवा भइ तन छीनो ।

१—खनि मिथि । २—एक पक्षी जो प्रात काल मे बोलता है । चुहचुहिया ।
३—आग की ज्वाला । मदन दँवार । पाठा । (क) होइ भद रवि ऋत । पाठा ।

सुख महँ सेइउँ दै दुख जीवा गाढे आइ न छडावहु सीँवा[1] ॥
दुक दुखदिन महँ बैरी होहू बिनु अपराध धरहु अब काहू ।
अजहूँ सो सेवा सोँरहु नाहीँ अथवहु वेगि घरी दुइ माहीँ ॥
एहि विधि बिनवत सब दिन बीता , भई रैनि भा हीवर[2] सीता ।

पहिरि चीर तन साँवरी भेस कीन्ह अभिसार ।
देखेसि चद चकोर ज्योँ जौ लगि लग भिनुसार ॥ ३४८ ॥

एहि विधि अहनिसि कोलहिँ जाई कुअँर रहा त्रिभिनि लय लाई ।
अस भा लीन ध्यान आहि करेँ देखे मोही आन ना हरे ॥
त्रिभिनि सुरति रहै चखु घरी सकै न दिष्टि आन मुख हरी ।
जौ काहू पर बरबस जाइ उहै सुरति मेहि लेइ छिपाइ ॥
ता तैँ सबे निअर औ दूरी आपुहिँ आप रहा जग पूरी ।
बिधिना दे क सुदिष्टि दे मोहीँ लोचन सौहँहिँ देखौं तोहीँ (क) ॥
दूजा आइ न हिय महँ लेखा जहँ देखोँ तह एके दीखा ।

तुही रहा सब पूरि जग पै सुदिष्टि नहिँ मोहिँ ।
देहु सो अजन प्रम चखु जहि सब देखौं ताहि ॥ ३४९ ॥

---

(२७) सोहिल खड ।

सोरठ[3] देस विमल विधि साजा , सोहिलसेन जहाँ हुत राजा ।
तेहि के निकट जाइ जग जाना कौंलावति कर रूप बखाना ॥
सागर पति सागरगढ ठाऊँ , तहि घर धिय कौंलावति नाऊँ ।
अति सुरूप जनु पकज कली सुनि महि सकल भौंर होइ चली ॥
कौंल बदन जनु दिनकर दीठा , कौंल नैन जनु भौंर बईठा ।
कौंल पत्र नन सोहै सारी कौंल उरज लखि जगत भिखारी ॥
नाभी कौंल फिरैँ जेहि घरेँ बार न हाहिँ फिरैँ नहि फेरेँ ।

१—सीमा = मर्य्यादा । २—हृदय । (क) लाचन चीन्हि बुझावहु ताहीँ । पाठा । ३—स सराष्ट्र ।

राते अंबुज पग दोऊ कौंल चरन जग मोह।
सुनत बिकल राजा भयेउ, हिये लाग जनु लोह ॥ ३५० ॥

लागा हिय जो रति पति बाना, घूमै जनु सावज भरमाना।
होइ बिसभार परा भुइँ राऊ, लगे लोग सब करे उपाऊ॥
पुनि जो चेत चितहि भा आई, भेगिह कहेसि करौ कटकाई[1]।
सुनेउ आजु जो कँवल बखाना जहि त मन होइ भौंर भुलाना॥
मागि बिआहौं जाइ सो बारी भा जेहि पेम हिया फुलवारी।
सागर मदा मोर तरहेलू[2], कौन जगत जो आशा पेलू॥
औ हिम देइ तो मया करऊँ, नाहिं तो हठ बरिआईं लेऊँ।
हित सौं थापौं राज फिरि और देस पुनि देउँ।
नागरु दधि सब भुज बरन, मथि के मानिक लेउँ ॥ ३५१ ॥

फिरे लाग सब नगर दोहाई साजहु लोग भई कटकाई।
ईहहि क साज काज पुनि आवा नहि तो रहिय हाथ पछतावा॥
गाठि खोलि कै लेहु बेसाहा[3] अपनेहिं साथ होय निरबाहा।
करो निपट जेहि करना होई उहाँ काहु की सुनै न कोई॥
अपनहिं सीस जो लागै घाई, आन की कौन सिरावै जाई।
परिहै अबहि आनि सों काजू होइहै विय यह सब सुख साजू(क)॥
सभा सराहे होइ न सूरा, रन खडै सो राउत[4] पूरा।
मान कसौटी सुभट रन बचन सम नर गात।
तहा कसे पै जानिये कौन पीन की रात ॥ ३५२ ॥

सुनि कटकाइ कटक सँभारा घरे घरे पुनि परी पुकारा।
साजै लाग लोग सब साजा बाज निसान[5] गौन कर बाजा॥
अहा सोच जेहि एहि दिन करा, कै राखा ते साज सबेरा।
सुनतहि अगमन उठि कै चले, सबै सराहहिं राउत भले॥

१—तय्यारी। चलना। २—दबायल। मातहत। ३—माल खरीद।
(क) सखराजू। पाठ। ४—राजपुत्र = रायउत = राउत = क्षत्री, वीर। ५—डंका।

जेहि कहँ यह दिन घरी न सूझी रैनि नींद सुख सपति बूझी ।
अपनैं नाहिन पावहिं माँगा का लै चलहिं साथ सब खाँगा ।
खेलत दिवस सोइ निसि गई, जब सिर परी सूझि तब भई ॥
लाजति गोवहिं मुख झुरहि कहहिं हाथ धरि माथ ।
अपने गुन पाछे परे, चला निकसि सब साथ ॥ ३५३ ॥

सोहिलसेन साजि दल चला कमठ कसमसा अहि खलबला ।
डरे पुहुमि सब राउत राना का पर साहिल-राउ रिसाना ॥
को अस बली सौंह जो रापा का कहँ पेस साजि कै कापा ।
यह अगस्त सम सूर बिसेखा उदधि सुखाइ सोहँ जो देखा ॥
हम सरिता केहि गिनती माहीं चलहु दंड ल सेव कराहीं ।
सेवा पाहन भयेउ मयारा अचयेउ छीर आन ससारा ॥
ठाकुर आहि चहै जिउ मारा सेव देखि पुनि होइ मयारा ।
बहुरि कहै हम किच[2] नर इह इँदरेसर देव ।
चलहु जाइ बिनती करहिं सकल कहा कै सेव ॥ ३५४ ॥

बाजत गाजन चला निसाना, कास एक भा पहिल पयाना ।
जीत नाउँ तहँ बिप्र सयाना सगर नगर रहा पुजमाना ॥
काँध जनेऊ सीस असीसा गौनत राजहिं आइ असीसा ।
कहसि कि बचन एक सुनु राजा है तोहिं उहाँ आन सों काजा ॥
जनि भूलहु करु आपन राजू का कह भा जग पेखन साजू ।
को जग राज एकछत कीया जो नहि मीचु पिआला पीआ ॥
जब जम आइ सीस कच गहही, भाइ बंधु कोइ सग न रहही ।
अपनेहि माथ तहाँ परे, खोजे मिलै न साथ ।
गाढे सोई उपकरै[4], होइ दीआ जै हाथ ॥ ३५५ ॥

दान कि बात सुनहु रे भाई, देहु दान नित हाथ उठाई ।
हितू दान सम आन न पावा, एक जाइ दस कहँ लै आवा ॥

१—कर उपहार । २—नि किंचन = दरिद्र दीन । ३—स पूज्यमान ।
४—(कि उपकारता) काम आता है ।

दान खरग होए बैरिहिं लागै दान पास होइ पहरु आगै।
दान दुहु जुग होइ सहाई उहाँ मुकुति देइ इहा बडाई ॥
दान नाव है भार चढावै ओकरिआ[1] होइ पार लगावै।
रक्षा करै दान मँझनीरा बूडत आनि लगावै तीरा ॥
खिरिधि निमिखि दान हुन पावै, जगत जान जिउ जाइ छडावै।
हेरि दरब न लेब मह हस्ति घार पुनि साज।
गीम करहु दै दान कछु सीझ होइ सब काज ॥ ३५६ ॥
राजा कहा विप्र सन आई, दरब अकारथ दिया न जाई।
दरबहिं तें यह राज पसारा, दरब लागि जग आइ जोहारा ॥
औ लहि दरबकटक सब सगा रन जिउ देन न सँवरहिं भगा।
एह जग माहिं दरब मनिआरा दरब दिवाकर अस उजिआरा[2] ॥
दरबवत औ तपसा भसा दरब रह घर दिपै विदेसा।
प्रान देइ एह दरब बटोरा, सेतीं दीजै कौन निहारा ॥
जग दुइ भाति पसारिहिं पाई कै सुख देहिं कि करैं बडाई।
जहँ लालच तहँ कौन सुख लोभहिं बहुत उपाइ।
कुलपति मम दुति सो दरब बातन्ह दियो न जाइ ॥३५७॥
सोहिल चला कटक सग लीन्हे कौल प्रेम मन मधुकर कीन्हे।
प्रेम खोर महँ अति सकराई, जतन जतन मम तहाँ समाई ॥
औ लौ मम तहँ ठाउ न पावा तो लहु तन तेहि वार न आवा।
तेहि कारन ए लोग सनेही गलि गलि आँसु होउ रह देही ॥
सुख सपति घर बार बिसारा बावर भए फिरहिं ससारा।
प्रेम मेरु अति दुर्गम ऊँचा, सहस माह कोउ एक पहूँचा ॥
एह मगु देखि कटक जो फूला अपनेहि कटक आपु सो भूला।
सोहिल ऊठा गरब कै चला कटक लै साथ।
सिंधु मरजिया होइ धसै रतन चढै तब हाथ ॥ ३५८ ॥

१—उपकारी। २—प्रकाशित हो चमकै।

कटक असूझ जाइ जेहि बाटा बन अमराइ बिहर जा पाटा।
जेहि जल तीर राति बस जाई पानि ठाँव नहँ धूरि उड़ाई॥
अति असूझ दल अगम पहारा कहत न बनै जत बिस्तारा।
जेतिक राति कटक परि जाई चलै दिवस तेहि की ओथाई॥
एहि विधि निन उठि करत पयाना सागर नगर आइ निअराना।
गरब कहै गढ़ ऊँकहु जाई मति कह प्रथम बसीठ पठाई॥
गर्वहि मषि बाढ़ खिन आवा मति बरिअर भे गरव निवावा[1]।

एक बाभन अरु भाट गुनि चातुर बकता ढीठ।
ढूँढ़ि पठाअ दुइ जना सागर पाँहि बसीठ॥ ३५९॥

सागर गढ़ बसीठ चलि आए दर असीस राजहिं आहराए।
कहिन कि धनि सागर गढ़ देसा औ धनि सोहिलसेन नरेसा॥
तैं ससिहर वह रवि मनिआरा तुम दुहुँ निसि वासर उजिआरा।
तैं निसिपति वह दिनपति साईं तें ससिहर वह अग्नि सबाईं॥
नियरहि आन न पुहमी आँटी साँझ भोर सेवा दोउ बाँटी।
सोहिल सेन नहन रुपवता छत्र छत्रपती कुलवना॥
दुहुँ छत्री जो होइ सगाईं तिहुँ पुर मानहिं अनँद बधाई।
तुम घर कौल सो उपना तिहु पुर पसरी बासि[2]।
सोहिल आयो भौंर होइ लेहु आ आदर मानि॥ ३६०॥

बोला सागर सुनहु बसीठा अस बसीठ जग काहु न दीठा।
कौन सो घर जेहि बारि न होई सन चढ़ि माँगै नहि कोई॥
घर सौं पठवत बाभन बारी जेहि घर धिआ सो पात्र गारी।
भलेहिं जो सोहिल राउ कुलीना, महूँ नाहिं अपने कुल हीना॥
अझा राज परछि सिर लेतेउँ बूझि बिचारि उतर तब देतेउँ।
वै मोपर कीन्हा कटकाई, अब जो मानौं कौन बड़ाई॥
कहब जाय अब मोर सँदेसा, राजा पलटि जाहु सो देसा।

१—दवा। २—सवाच। ३—महँक सुगंधि।

तेहि घर गारी दीजिये जहाँ बारि सजोग।
कवॅल कली कौलावती नाहिँ बिग्राहन जोग ॥ ३६१ ॥

बसीठैँ कहा नैन कै राता सोहिल सेन सूर परभाता।
रिसि औ मया दोउ तेहि पासा जो जेहि चाहै सोइ प्रगासा ॥
मया करै तौ सीँव छडावै, जौ रिसि करै अगिनि बरिसावै।
तेहि कारन जग जिउ डर होई, भोरहिँ उठि बन्दै सब कोई ॥
गादुर नैन जो जग औतारे सूर छाडि ते बन्दहिँ तारे।
उतर सँभारि दहु तुम राजा ऐसो गरब न काहु छाजा ॥
वह अगस्त तँ उदधि अपारा अनरस छिप परसि किमि वारा।
आलहु नहि सनमुख भयउ कुसल तबहि लै जानि।
को सागर जग जल भरयो, जहि न उतारेसि पानि ॥३६२॥

सुनि राजा हाइ सिह बईठा कहसि गरब अनि बोलु बसीठा।
सोहिल सों सेना बर हेरा मार बर एक विधना केरा ॥
देखु कि बहै(क) दुहुँ दिस धारा विधना हाथ जीत औ हारा।
दहुँ का कहँ हनि धूरि मेरावै, काक माथे छत्र फिरावै ॥
एहि कलि महँ औतरे जो आई काऊ न सतन अमर रहाई।
बूढे कैस जिअन का हेरौं खरग नाउँ सुनि का मुख फेरौं ॥
जेतिक जीवन जियउँ नहि तेता राते करौं केस यह सेता।
जाय कहहु सागर कह हाथ लेइ चौगान।
हाल आउ जो आपस, यहै गोइ[१] मैदान ॥ ३६३ ॥

जाइ बसीठ कही तब बाता, सुनि सोहिल भा ज्यौं घन राता।
कहसि कि सागर कथ अस अहा सोहिल सौंह खरग जा गहा ॥
निहचै ओहि मीचु निअरानी चिउँटिहि चढेउ पाख तन आनी।
आजु छैंकि सागर गढ भानौं[२] सागर मारि कौल घर आनौं ॥
माँगा वेगि तुरग सवारी, सोहिल तमकि कीन्ह असवारी।
बाजा दुद जूझि कर बारा, जहँ तहँ पखरे[३] बीर जुझारा ॥

(क) खड़ग। पाठा । १—[फा گوی] = गद। २—ताड़ो। ३—पाखर डाला।

सुरन्ह जहँ तहँ खरग सम्हारा काषि चढ़ा मुख भा रतनारा।
सूरन मन उतसाह भा, हुलसहिँ मारू गाइ।
कायर जिउ सस परा गयो बदन पियराइ ॥ ३६४ ॥

चली फउज जनु सावन घटा चमकहिँ खरग सेल ज्यों छटा।
बाज दुद जनु घन घहराइ, सेन धजा बग पाँति सोहाई॥
जहँ तहँ मारू[1] ते सुर पूरा देखि छटा जनु कुहुक मजूरा।
हाथिन पीठि अँबारी कसी आवहि आनु सरग सौं खसी॥
मिलि अब चलहि तुरगम बली पान भँकार घटा जनु चली।
खली कमाने[2] गरब गहीली आ जिउ हरनो तऊ रसीली॥
जिउ मानिमी गरब जोबना एक एक पाइ लाग सो जना।
पायन लागे ना चलेँ, खैन्चहिँ हाथिन्ह पाँति।
गरबन तऊ न डोलँ, अस जोबन मद माति ॥ ३६५ ॥

बनी तुपक[3] जस बिरहिनि सती सब तन हाड माँस नहि रती।
काधे चढ़ी फिर जो रोगी परगट भेख किये जनु जोगी॥
लीन्हे सँगि अगिन परगसी बसन अरुन जनु डोरी कसी।
गुटका लालि लेइँ पुनि साँसा, भसम खाइ मुख धूम निकासा॥
जान प्रतीति सोइ पै गहई सहज नेह छाती चढ़ि रहई।
ज्यों ज्यों बिरह चढ़ावे छाती त्यों त्यों रिसिन्ह होइँ पुनि ताती(क)॥
जिअत न जाइ सरग की माँखी मारहिँ आखि जो ताकहि आँखी।
अरिगजन ते बिधि रची, कसे रहइँ निति लाँक।
पुहमी लावहिँ सीस तर, जौ रन मारहिँ हाँक ॥ ३६६ ॥

हाथ कमान सुन्दरी नारी हरी लँक पातरी पिआरी।
गुनवन्ती रँग भरा सोहाइ अपने कर करतार बनाई॥
वासौं बरजि पीढ़ी सम देई बान कटाच्छ जीउ हरि लेई।
बर सौं करै पाट बधनी सनमुख आइ नवै मोहनी॥

१—एक बाजा। २—ताप। ३—बन्दूक। ४—गाली।
(क) त्यों त्यों डसहिँ होइँ ज्यो ताती। पाठा।

पिअ लगाइ देखे रँग पागा एक अक पै नहिँ पै लागी।
भौंहन दिए गाँठि लिनि रहई देखि द्रोन भो सूरपति दहई।
पारवती जिमि पिय सँग रहई सवन लागि गुनवनहि कहई॥

मूढ न मारै गुन भरी, दुरजन दखि डेराइ।
अस धनि जाहि नर कर चलै निभरम जहँ तहँ जाइ॥३६७॥

भरे निखग बान अनिधार, जनु भँजोग निस पख पसारे।
राउत सदा मीस पर बाँधे नर्यं न काहु बीच रन काँधे॥
कर बत देइ सीस अग रहे नैन बाजु सिर करवट सहै।
पखी आँखिन भँवहिँ उदासी नख सिख लैं मो रहे पिआसी॥
नापी बैरी मीती नाऊँ एक भर अरथ तीनि तैहि ठाऊँ।(क)
सिम्रिरन काल अगिनि पुनि बूझी जेहि अस लाग ताहि तस सूझी॥
देखत सूध गाठि हिय माहीँ अरि भेंटन उर माँह समाहीँ॥

आप माँह पुनि हेतु बहु एक भर सहस रहाहिँ।
अज्ञा कारी धनुख क जहँ पठवे तहँ जाहिँ॥ ३६८॥

चमकैं हाथ लागि अनि पारी लहलहाहिँ अनु सापिनि कारी।
कचुकि तजै बीसदंति कैसी दृष्टि साथ उर चाहै पैसी॥
जौ करता मे बान बुझाई तऊ न बूझहि रुहिर निआई(ख)।
पैान पिए पुनि सीस उभासे आँखिन डोलहिँ रसन निकासे॥
परसहिँ सबै जानि कै सूधी प्रान लेहिँ जब होहिँ बिरूधी।
सूर किरन ससि लपति लूटै स्याम बरन आमहु अम छूटै॥
कर लीन्हे पैदर असवारा, आनहुँ परी पुहुमि बिषधारा।

साँग सुवसी नागिनी, स्याम रूप रसलाल।
हित जन कहँ सुख दायिका समर चढे अरिकाल॥३६९॥

बाँधी काट करवारि बिराजी, अति राजी पै नाउ न राजी।
देखत रूप पदुमिनि नागिनि, धामिनि जेउ उठि उठी लागिनि।

१—बिषदन्ती = साँप।

जब लगि माँदी[1] मह रहि गोई तबहीं लहु निरभै सब कोई ॥
नख सिख पानो तेउ उदासी जीभ निकासे रुहिर पियासा।
सुन्दरि सदासोहागिनि नारी जेहि कर चढ नाहि को प्यारी ॥
मूठिन मारि गहे कर कोई सान दिय प तीखी होई।
निभरम सोवहिँ नहि जहँ जागी रहै सकल निसि पाटँ लागी ॥
बाकी बाँकी भौहँ सो करै कटाछ कलोल।
सूधे नाहीँ जो नर सोई जगत अमोल ॥ २७० ॥

बारह हाथ बनी पुनि फरी[2] सुदरि नारि सदा रँगभरी।
अस बरिआरि नारि विधि कीन्हा पुरुषन्ह जाइ सरन अहि लीन्हा ॥
पाछे मेलि सरन जो आवा सनमुख खाइ आपु तन घावा।
कोमल हिया कौल अहँ रहई गान कठोर घाव अहँ सहई ॥
दरपन सम पुनि मजुल गाता पानी पर जनु पुरइनि पाता।
एकै बात बोलि को जुवरी फूल बिलोकि कहे जग फरी ॥
दूजी अमर बेलि अग आई जहाँ तहाँ ओझल लपटाई।
सतत पर कारन दुखी आनन नहिँ अपकारि।
जहँ कहुँ दुइ जाधा लरहिँ बरबस आइ म भारि ॥ ३७१ ॥

पुनि कटि बाँधे निषम कटारा, जा कह आपु कहे जमधारा।
सूरा सोंह धसे रन माहीँ दाहिन पाँव निकार नाहीँ ॥
रन अमट हथियार मनगा जब तब छार चमार भगा।
निसि दिन दिये अँधारी रहई, छूटै हस्त विना का गहई ॥
कालरूप कटकहिँ सिगारा, साँवर लोह लियँ मतवारा।
बाल त्रिलोकहिँ अग उघारी, नाँगा देखि बजावहिँ नारी ॥
बरत किय पुनि चित्त न धरई भोग लिये बल पारन करई।
मान कटारी बुद जल, हिये समात न बार।
महा अचज ससार में एक बुद दुइ धार ॥ ३७२ ॥

१—मियान। २—ढाल।

सागर जब बसीठ बहुराए[1] चारिहुँ निस बारी दैराए।
औ पुनि समाचार लिखि दीन्हा कौल लागि सोहिल बर कीन्हा॥
हौं पति लागि पैज रन ठानी तुम पुनि आवहु अस जिउ जानी।
औ लहु सागर अगम गँभीरा तोलहुँ पूरक सरिता नीरा॥
और वारिध न रहै जग माहा एक छिन महँ सब नदी सुखाहीं।
यह सुनि सरिता हिए सकानी उमरि आइ जनि सागर पानी॥
जो जैसेहि तैसेहि उठि धाए सागर ढिग सब गए हेराए।

जिन जिन हिय अभिमान हा नवै न सीस नवाहिं।
सूझि परा सागर विकट हम नहि लेखे माहि॥ ३ ४॥

बाज दुन्द जनु घन घहराई राता सेन धुजा फहराई।
सागर हिये कोप सुनि बाढा घर तजि सपरि पार भा ठाढा॥
देखा पाहुन आनि तुलाने आदर[3] कहँ डग चारि पयाने।
बीर अगुमने[2] भुजा पसारी दुइ दल माँह भई अँकवारी॥
छूनी तुपकैं छूटे बाना जहँ तहँ होइ लाग घमसाना।
तरुनि भौहँ सम धनुष बिसेखे, नोचहिं बान कटाछ अलेखे॥

कहुँ अरुझे पखरैत दुइ, कहुँ गयद चौदत।
कहुँ अखारे पुहमि महँ जनु दुइ मान भिरत॥ ३७४॥

जहाँ सेलि लागे उर आई, मनहुँ कँवल जल धार सोहाई।
जेहि सिर परी खरग की धारा, मानहुँ रेनी कर पतसारा॥
जाके ओर हाई धनुताना, निफरि जाइ सर ज्यों चखुबाना।
छूटहि चन्द बान उजियारे मानहुँ नट मुख आगि निकारे॥
जब अरसाइ कमान जम्हाई चुटकिहिं हनत जीउ लै जाई।
घायल परे जहाँ तहँ हाथी, मानहुँ आहि लोहार की भाथी॥
माथे छूटी सोनित धारा, भाथि फूँकि जनु आगि निकारा।

१—फेरा लौटाया। २—एक जाति जो दास का काम करती है। ३—आगे बढ़े।

घायल परी पुहुमि तलफाई प्रान रहे पुनि कठहिं आई।
एक बोल लगि स्रवन निरासे, अधर सुखितुअ अधर पियासे॥
अजहुँ न जाइ आस तेहि देहू मरन जिआइ पहर एक लेहू।
जाहि लागि यह परले होई, सो तोहिं लागि मरै अस रोई॥
अमिय बचन लागहिं बिख साँधे मोर मरहि हत्या तुअ काँधे।

सघन तिमिरि निसि जोह लगि जल बिनु कटक हार।
नत रहई पछताव कर, बिथरें भसम अँगार॥ ३८१॥

कहिसि जाय कहु राजकुमारी, हौं निरगुनि सुठि जोगि भिखारी।
एक तौ बिधि दुखिया मोहिं कीन्हें तूँ पुनि बाँधि अधिक दुख दीन्हें॥
कतहुँ प्रेम कि बाँधे होई, बरबस प्रेम करै नहिं कोई।
सोहिल हनि हौं कटक लुटाऊँ, सागर नगरहिं फेरि बसाऊँ॥
ताहि मारि करि सगरहिं राजा अब तौ आइ परेउ हम काजा।
कर गहि खरग करौं अब घाता राखौं कटका करि आघाता॥
जदपि सोहिल छुक जूझ सपारा, हौं सुजान सरदूल पँवारा।

परघट होउँ बचाइये, दीन्हों कर गहि खर्ग।
बचौं तौ लीन्हों कमल फल, मरूँ तौ जैहौं सर्ग॥ ३८२॥

सुनि के मया कुँअर जिय(क) भई, मौन गाँठि अधरन छुटि गई।
कहिसि जाइ कहु राजकुमारी, हौं निरघिन केहि जोग भिखारी॥
हौं भिखारि तुम गढ़पति राजा राज भिखारिन नेह न छाजा।
अपनेहिं दुख अहौं बौराना आन क दुख करौं का काना॥
मोर निदान होय जो चाहा, परगट होउँ रहौं छिपि काहा।
अब जो परी सीस हम आई, जोग माँह का रहौं छिपाई॥
मोर होत अस जल बरिसावौं, बड़वानल जो होइ बुझावौं।

कोपि चढ़ौं रन पैजि करि, मारौं सोहिल बीर।
सूर छुडावौं राहु हनि, कौंल धरो मन धीर॥ ३८३॥

(क) चित, पाठा।

सुनि सँदेस कुमुदिनी सिधारी कुअँर कहा रखवार हँकारी ।
जाइ जनावसि राय नरेसा, छत्री एक जोगी के भेसा ॥
कहै छाडु मोहिँ राज आहारौं, पैअ बाँधि रन सोहिल मारौं ।
रखवारे नृप जाइ जनावा, राजै(क) सुनत जीउ अस पावा ॥
हिए आगि जनु परि गा पानी, जानहुँ भइ अकास की बानी ।
जन कौलावति पाँह पठावा जोगी चोर जो आहि बँधावा ॥
छाडि पठावहु औ हम पासा, पूछौं बात देइ मकु आसा ।

जँहवाँ लहु हम बँद हुते, ते दीन्हा सब छोरि ।
तुमहु छोडहु बन्द सब मानहु अज्ञा मोरि ॥ ३८४ ॥

रहसि कँवल जोगी पहँ आई कहिसि तजहु अब अलि निठुराई ।
कहु का हसि का नाउँ सोहावा केहि कारन सिर जटा बढावा ॥
कौन देस ते आएउ राऊ काके पथ धरेहु भुइँ पाऊ ।
औ लगि कहसि न आपन बाता, बन्ध न छोरौं सपथ बिधाता ॥
अमिरित बचन कुँअर जब बोला अधरन पोए रतन अमोला ।
जाति कहिसि औ पिता क नाऊँ, आपन नाम जनम कर गाऊँ ॥
औ जेहि कारन जटा बढाई, नाम लेत चखु जल भरि आई ।

कहिसि निकारहु हथकरी, खरग गहौं अब हाथ ।
पल महे भारथ रचौं औ कौरौ दल साथ ॥ ३८५ ॥

सुनि कै कौल बिकल होइ गई मानहुँ साँझ उदय ससि भई ।
मनहि कहसि कर रहा परेखा भया मोर मधुकर कर लेखा ॥
मधुकर भँवै कज बैरागा कज क मन सूरज सौं लागा ।
सूर दरस जब कौल बिगासा, तब पूजै मधुकर मन आसा ॥
अपने करत जाइ नहिँ देऊँ, जीअत नैन न ओट करेऊँ ।
एह पछी बरु रहै पडेली, अब राखौं छल बन्धन मेली ॥
एह अरजुन जेइ भारथ काँधा अरजुन रहै बचा कर बाँधा ।

(क) सागर पाटा ।

मन, वच क्रम अब जो रहै सेव करू निसि बार।
सेवा हुत पाहन हिया, मकु होइ आइ मयार ॥ ३८६ ॥

कहिसि कुँअर सुनु अमुज बाता, तुम्र मन मधुकर कतकि राता।
का जो कौल राख हिय लाई अन मोर केतकि पह जाई॥
बिनती एक करूँ करजोरी इहै हिये अब इच्छा मोरी।
जो तू इच्छ पुराउ गोसाईं मोहिं जनि जाउ कत दै बाईं॥
औ सँग लेहु मया अखु हरी रहौं होइ चित्रावलि चेरी।
सपथ देहु जो करत पयाना सपथ आस घट रहइ पराना॥
ना तह देखि बिरह दुख दाइ होइ निरास मरि जाइ।

आजु सपथ जो देहु पिय बाजु कहे नहि जाहु।
बन्द छोरि कर खरग गहि सूर तुडावहु राहु॥ ३८७ ॥

मन गुनि कुँअर कँवल मुख हेरी कहिसि सपथ चित्रावलि केरी।
जो पहि रन बिधना जय देई पूजी प्रान रह घट सेई॥
तोहिं दै बाचा चलौं सो देसा जेहि कारन निसरेहुँ एहि भेसा।
सुनतहि सपथ कौल भा राता जनु रवि किरिनि उदै परभाना॥
बध छाडन आगे अगुसरी[1] पाय न जाय यही मिसु परी।
पायन परसि हिये सुख पावा अति गलब बँदि छोरि सि भावा॥
सखिन कहा चित चतु गियाना बिलम न लाउ भार नियराना।

सुनत भोर कौलावती भया चत चित आय।
छोरि बद मन्दिर चली परसि कुँअर के पाय॥ ३८८ ॥

कुँअर आनि राजहिं जोहरावा राजे मुख देखत सुख पावा।
आदर सहित लाइ कँठ लीन्हा, अपने पास ठाउँ तिन्ह दीन्हा॥
कहिसि कि तुम छत्री रस भोगी, कहहु भये कहि कारन जोगी।
आ पुनि कत अस हार चोराए, जेहिते बदि माँह दुख पाए॥
कुँअर कहा जनि पूछहु राजा, करहु सोइ जो करवे काजा।
जाकर आइ फिरी अब दसा बाट जात लागै अपजसा॥

---

१ अगुआइ बढ़ी।

छत्री तबहिं खोर पै होई बरबस चार कर्ं जो कोई।
हौं नैपाल नरेस सुत, छत्री बीर पॅवार।
यह सोहिल बरिआर जो हनौं होत भिनुसार॥ ३८९॥

राजै सुनि सम्या मन बूझी ज्ञान कि दिष्टि दूरि लै सूझी।
कहिसि कि तजहु जोग बैरागा पहिरहु अब छत्रा कर बागा'॥
सिर धरि मुकुट सेल कर लेहू, सोहिल मारि मुकुट सिर देहू।
औ जै खरग देइ करतारा छात पाट औ राज तुम्हारा॥
पुत्री नन कॉल फुलि मारी भारिहि पद पकज कर जोरी(क)।
कुॅअर कहा सुनु राज भुआरा, छात पाट में अपने डारा॥
अस कैसे कहि आवै ताहीं हौं जोगी तिय छाज न मोहीं।
भवी सुनि जो ना करै लिय अरु गाय गोहारि।
पुहुमा कुल गारी चढ़ै सरग होइ मुख कारि॥ ३९०॥

एहि मॅह रैनि बीति सब गई प्राची दिसा अरुन तब भई।
जहॅ जहॅ घुमिरे घार निसाना छूटै लागे दुहुॅ दिसि बाना॥
कुॅअर तोखार¹ साजि कै माना, बॉधि कटार खरग कै मॉगा।
सैरेसि हिये बिधाता सोई, जेहि की मया सुमिरि जै होई॥
ततछन नमकि चढ़े हय पीठी चढ़त न परा काहु की डीठी।
जबही कुॲर भयो असवारा, जै जै जै सब जगत पुकारा॥
उच्चस्रवा सूर सम लीन्हे, छिन महॅ पुहुमि सहस ससि कीन्हे।
कुॅअर निकसि बाहर भयो राउ ठाढ़ करि आस।
देखहिं धौराहर चढ़ी सब रानी रनिवास॥ ३९१॥

कौलावति दोउ अस्तुज हाथा छिन छिन धरै सहस सिउ माथा।
एह जोगी पर कारन दुखी, हौं रुद्राक्ष अहौं एक मुखी॥
परसन होइ दान जै करहू, जीतपत्र एहि के सिर धरहू।
तुम तें सबे असुरपति हारे, तुमहीं अधक कधक मारे।
तुमहीं दच्छ प्रजापति मारा, जीति मार तिपुरारि सॅघारा।

¹—पहिनावा। (क) भारी पदुम चरन रजतारी पाठा। २—सफेद रग का घोड़ा।

भरि भरि जल पुनि नैन कटोरी, लागि रवै माता की चोरी॥
बिनवे पुहमि लाइ कै माथा, जोगिहिँ देहु आनि जै नाथा।

तुम हि सकल सुर देवता, जीत हार तुत्र हाथ।
यह परदेसी एकसरा देहु मया करि साथ॥ ३९२॥

एक तो कुँअर गरब अस बाढा सागर सँपरि बार भा ठाढा।
आयो सूर फैज रन ठानी सोहिल बदन सूखि गा पानी॥
जेइ देखा तेहि इहै सुनावा, सोहिल काल खरग सौं आवा।
सूर सौंह छिन आइ न हेरा जिन मुख देखा तिन मुख फेरा॥
सोहिल देखि कटक मन ढीला रिस सो बोला बैन कसीला।
ऐ छत्रो ऐ बीर जुझारा कहा जानि तुम पौरुख हारा॥
तुम कहँ पालेउँ दै अन पानी काल बान कर आदि न जानी।

खरग सँभारैँ सूरमा बैरी मुख समुहात।
तौ लहुँ पौरुष ना तजै जौलहु आव न रात॥ ३९३॥

बीर सिंह अब साहस हारा, सो नहि मार जान सिस्रारा।
नृप बैसाव[1] बचन अब कह सुनि सब माथ बाँधि कै रहे॥
सोहिल हाँकि तुरै रन चढा, नख सिख लौं तन लोह मढा।
सौ तेहि मारेसि साँगि पचारी, झुकि सो दिष्टि पर कुँअर उबारी॥
पुनि गहि खरग कुअँर सिर भारा कुअँर सजग ओडन दै टारा॥
खरग टूटि रह ओडन साँथा छूछि मूँठि सोहिल के हाथा।
तब रिसि कै कुअँरहि लपटाना, कुँअरौ पुनि सरवई सु जाना॥

सोहिल बीर धरि कुँअर कटि चाहसि देइ गिराय।
खभा केरा सरवइ, उपरहि गा लपटाय॥ ३९४॥

दोउ लपटाइ पुहुमि में परे, जनु दुइ माल सरबई[4] भिर॥
कबहुँ कुँअरहि सोहिल चाँपा, कबहुँ कुँअर तर सोहिल काँपा।

१—व्यवसाय। २—रोक। ३—लडता थे। ४—सरो कसरत।

पलटेउ आनि कुँअर करि दाऊ, काढ़ि कटार कीन्ह तब धाऊ॥
एकहिं घाउ कीन्ह अरि घाता रुहिर देखि सागर भा राता।
सागर लहरि पौन जिमि धाई सोहिल कटक फाटि गौ काई।
जो जेहि गहा सो तेहि गहि चला, होइ गइ पुहुमी माहँ अनु हला॥
काटि काटि सिर कीन्ह मुनारा[1], लूटै हय गय सोन भँडारा।

दिश्रा अध ते दरप बर, गरबि चले मुख फेरि।
ज्ञानी हिरदय सोच भा, बिधि कर कौतुक हेरि॥ ३९५॥

सोहिल परा माचु मद पीये, उपजा ज्ञान कुँअर के हीये।
का भा सो ओ डोलत आहा जेहि बिनु पुहुमी थकि सब रहा॥
का भा सो ओ गरब कर बोला, जेहि बिनु भुजा डोलाव न डोला।
का भा सो जो कटक बटोरा, सोन भँडार हस्ति भौ घारा।
अब तेहि बिनु कोउ रहा न साथी, छिन महँ होइ गए उडि पाथी[2]॥
मैं का आनि सरग कर लीन्हा, यह कारन कहि कारन कीन्हा।
जोग पथ महँ बैर न आवा आनि बूझि मैं जोग नसावा॥

यह शुनि हिये अगिनि बरी, चखु छूटी जल धार।
सागर फिरि फिरि रहसै, लूटै सोन भँडार॥ ३९६॥

---

(२८) कँवलावती विवाह खंड।

सागर पलटि कुँअर पह आवा, हाथ चूमि गहि चख लगावा।
कहिसि कि धनि जननी धनि पीता धनि हीअर[3] जेहि यह रन जीता॥
ततछन कीन्ह कुँअर असवारा अपने हाथ चौंर सिर ढारा।
आनि फिरावा माथे छाता, जनु दूलह लै चले बराता॥
बाजा पुनि बाजन गहगहा, पुहुमी सरग सोर होइ रहा।
जबहि भाँट बीरुद उच्चारा, चहुँ दिसि उठा बिरुद भनकारा॥
पैसत राजअवास सोहाईं मंगल गावत चेरिन आईं।

१—शिखर। मीनार। स्तूप। २—पथिक, राही। ३—हृदय साहस।

तुरै चरन रज पूजि के टीका लावहिं माथ।
कहैं कि बाहन धन्य तू, औ धनि तेरो नाथ ॥ ३९७ ॥

पुनि जहँ हाट कपाट सँवारा कुँअर आनि कै तहाँ उतारा।
आरति ले आईं रनिवाँसा जनु ससि उड्गन सँग परगासा ॥
पूजहिं दोउ भुज चंदन चढ़ाइ कहैं कि धनि तू जनि तुअ माइ।
तैं हनि राहु मयंक छुड़ाया तैं नभ हरि दिनकर देखराया ॥
तैं होइ इन्द्र अमी बरसावा छत्र अगिनि जग जरत बुझावा।
औ न होन तें अस बरिआरा(क) को बहुरावत जम बरिआरा(ख) ॥
तैं बसत किय नगरी मारी नाहिं ता हात आज जरि हारी।

सरवन भौं नखिन रहा औ पुनि सें बुर सास।
औ तुम इच्छा सो मिलें जीवहु लाख बरीस ॥ ३९८ ॥

पुनि रानी राजा सौं कहा, तब जग दूसर कोउ न रहा।
मोरी कोखि सो कौंल बिगासा चहुँ खँड पसरी जेहि की बासा ॥
औ पुनि भयो आइ सओगा करहिं अबाड जहाँ नहँ लेगा।
यह कुलीन छत्री बरिआरा, पहि आंको[1] जा होइ निआरा ॥
राय कहा का कहहुँ छिपाई मे पहिलहिं सकलपि सुनाई।
औ सन्या छुति सो पुनि कही गगा सुनि लजाइ हिए रही ॥
कहिसि कि जागी भोग न जाना, औ बर दीज नो प माना।

सो कर गहि कौंलावती, ल मेली ओहि पाउ।
यह चेरी तुअ सेव कहँ सकल्पी जो राउ ॥ ३९९ ॥

कै मत राजा बाहर आवा आपन कुटुँब लोग हँकरावा।
कहिसि कि मैं अपने मुख हारी पहि सौंपा कौंलावती बारी ॥
बरु मैं आपु नाहिं ओहि दीन्हा सोहिल मारि जीति व लीन्हा।
तुम यह बचन मानि पुनि लेहु औ मिलि पच्च बड़ाई देहु ॥
कहिनि कि यह बर बिधनै गढ़ा, सोई फूल जो महेसहिं चढ़ा।

(क) धरहरिया, पाठा। (ख) अस बेरिया, पाठा। १—परीक्षा करो, परखो।

हमहुँ भाउ जो तुम्ह कहँ भावा, बिलम न लावहु करहु बधावा ॥
बाजन लागे बाजन बारा घर घर उठा मंगलाचारा।
    ततछन आए जोतिषी, गनि गुनि देखी रास।
    शुभ दिन औ शुभ मास पुनि उत्तम लगन बिलास ॥ ४०० ॥
चहुँ दिसि बाजन बाज सोहावा, कुँअर जान यह जीत बधावा।
अस न जान यह बाजन सोई जेहि तें अन्त महा दुख होई ॥
गात चढा अत जम्बन माला होइहै भार अगिन कर ज्वाला।
औ जत जगत निछावरि सारा होइहै भोर कांध कर भारा ॥
हाट कपाट जराव क छाता होइहै काल होत परभाता।
मानुस अध जाहि नहिं सूझा, दैव करै सब आपन बूझा ॥
होइ चत कछु आन सु आना बिधना करे आन कै आना।
    आपन चिन्ता मान जो जगत न पावै कोइ।
    कस न सोइ चित चेतिये जाकर चेता होइ ॥ ४०१ ॥
साँझ आय पुनि राउन राना, आँगन ताने आनि बिताना।
अनबन भाँति बिछौना कीन्हा दै दै लाख लाख एक लीन्हा ॥
बैठे आय महाँ सब राजा माथें छत्र विचित्र बिराजा।
धरे आनि चहुँ दिसि मसिआरे पुहुमी सकल भये उजिआरे ॥
ऊपर समियाना जनु नभा तर बैठी जनु सुरपति सभा।
गीतन्ह आन कीन्ह झनकारा जनु पुहुमी में अमिय सँचारा ॥
पुनि पैरिन काछें अतिलसी[१] जनु आईं रंभा उरबसी।
    नाच कूद भा पहर दुइ दीन दान बहुताइ।
    पुनि आए तहँ सहस एक बाभन बेदुराइ ॥ ४०२ ॥
आयो सागर सभा मँझारी गहे बाँह कौलावति बारी।
बारह सोलह साज बनाए आठो अंग बतीसो पाए ॥
प्रगटेउ जनु मयंक मनियारा, अकसमात होइगा उजियारा।
कुँअर पाइ तर मेलि किसोरी आपुन ठाढ भए कर जोरी ॥

१—(फा اطلسی) अतलस का बना हुआ परिधान।

कहिसि लेहु येहि चेरी जानो, मैं सकल्पी दै कुश पानी।
बोलहु स्वस्ति जैस जग रीती, तैं अपने भुज बल यह जीती॥
बह मैं नहिं अपने मुख हारी, तुम जीता सोहिल सधारी(क)।
सुनि कै कुँअर अचक रहा सांस गयो गडि लाज।
बकलि न कछु मुख आवै, जनहुँ परी सिर गाज॥ ४०३॥

छिन एक जिय भीतर गुनि ज्ञानी बोलिसि स्वस्ति लीन्ह कुस पानी।
तत छन आनि कीन्ह गँठजोरा बेद पढहिं बाभन चहुँ फेरा॥
तबलिन्ह पुनि कल कठ सुनावा, कौलहिं लाइ सुजानहिं गावा।
गाँठि जोरि फेरी सतफेरी जोगिहिं गाँठि परी सत फेरी॥
भा बिआह बाभन अब गए लै दूलह कहँ काहबर गए।
उठत न भौंर बरन अति भारी, नाचत कौल होत बलिहारी॥
कौलावति जिअ रहस अनन्दू, डरपै कुँअर जानि दुख दन्दू।
पाँलग साजि जराउ की, डासी सेज सुरग।
कौलहि सीतल जानु जल, कुँअरहि अगिन समग॥ ४०४॥
दुलहिन दूलह कोहबर मेली, औ पुन बाहर भईं सहेली।
घूँघट कै कौलावति रही फिरि सुजान पुनि पाटी गही॥
मबुज मान मनावन आसा भँवर निठुर पुनि लेइ न बासा।
कौलावति मन कीन्ह गियाना कौन मान जौ कत न माना॥
मोहिं पीतम अतर जहँ होई घूँघुट लाज जाउ जरि सोई।
कुलिस तें कठिन सो आहि करेजा, जो तिय मान न कर पिय सेजा॥
लोयन राखों घूँघट हेरी अतमान[1] का राखै फेरी।
मोहिं मूँदत चखु सकल तन, दीन्ह अगिन जनु बारि।
नहिं जानौं पिय सेज पर, मान करहि किमि नारि॥ ४०५॥
कौल खोलि मुख बचन हुमासा, पै दिनकर साईं जग आसा।
अब जौ जग जाना मैं तोरी, का जिय जानि रहहु मुख मोरी।

(क) वरु मैं अपने मुख यहि हारी। तुम्हहूँ जीत साहिल सँवारी। १—आत्मा।

सघन तिमिरि हिय फाटै मोरा, मुख देखाउ जग होइ अँजोरा ॥
पिता सँकलप दीन्ह सजि तोहीँ कस न मया करि हेरहु मोहीँ ।
तोरे मया बनखा मोरी जो आदरहु तो हौं मैं तोरी ॥
पिता राज सब भयो परावा, तोरे मया एक चित लावा ॥
मोहिँ बिनु तोरे नाहिँ कछु छूछा तोहि बिनु मोहिँ कोउ बात न पूँछा ।

सब औगुन गुन एक नहिँ का परगासौं आनि ।
मोहिँ निरगुनियहिँ मानि ले, आपु बड़ाई जानि ॥ ४०६ ॥

बिनती सुनि भा कुँअर मयारा बिनती एक जगत निस्तारा ।
बिनती सब औगुन गुन होई सेवक बिनत[१] तजै नाहिँ कोई ॥
गरब अगिन गहिरे सब जरा, बिनती थोड़[२] खरग निसतरा ।
रिसि बैसन्दर जहँ पर जाई, बिनती पानि परे बुझि जाई ॥
जहँ सेवा तहँ बिनती आनहु बरु दोनों कहँ एकै मानहु ।
ठाकुर कबहुँ दोष जो गहई सेवक आगे बिनती कहई ॥
नव सेवक हिय माँह समाई जहँ लहुँ औगुन गुन होइ जाई ।

आपन अवगुन सँवरि के गरब करहु जनि मान ।
औ औगुन पति मानई, सोई गुन परिमान ॥ ४०७ ॥

कुँअर कहा सुनु राजकुमारी हौं जोगी अस भँवर दुखारी ।
खोजत अहा जो केतकि बासा, बीचहिँ अबुझ कीन्ह गरासा ॥
जौलहु भौंर न केतकि पावै, कौंल आस तो लौं न पुरावै ।
तजि तोर मोहिँ बाजु न आना महूँ तोहिँ आपन कै जाना ॥
जो सँतोख मानहु जिअ बारी तोहि सौं भाषौं बात रसारी ।
नैन कौंल तुअ नैनन लावौं, अक में गहि तब हिया सेरावौं ॥
मोहिँ न अपन प्रेम रस चाऊ, तोहि लागि यह करौं सुभाऊ ।

हम तुम मानहिँ सबै रस जहँ लहु प्रेम सुभाउ ।
एक प्रेम रस होइ तब, जब चित्रावलि पाउ ॥ ४०८ ॥

१—विनीत, नम्र । २—रोक ढाल

कौलें रहसि कहा सुनु साईं चित्रावलि पावहु जब ताईं ।
हँसि बोलहु देखहु मम ओरा जानहुँ पाया लाख करोरा ॥
हौं अबही रस रीति न आनौं चितवनि हँसनि प्रेम सुख मानौं ।
तब हँसि कुअँर उलटि मुख हेरा बरबस लाज कौंल मुख फेरा ॥
घूंघट ओट रही मुख गोई नवनिन मान सुभावन होई ।
पुनि गहि कुअँर नारि कँठ लाई कौंल लागि हिय जरनि सिराई ॥
अधरन लाइ अधर रस लीन्हा एक रस छाडि आर सब लीन्हा ।

अधर रदन छद उरज नख उघलि[1] गई पुनि माँग ।
प्रथम समागम जनु कियो सिथल भयो सब आँग ॥ ४०९ ॥

भोर कुँअर जब बाहर आवा देखि सखिन सब मगल गावा ।
रानी कौलावति पहँ आई माँग चूमि लीन्हिसि कठ लाई ॥
सभा बैठि पुनि सागर राजा देइ लागि सब दाएज साजा ।
रतन पदारथ मानिक मोती, सोन रूप ससि दिनकर जोती ॥
दीन्हे हय उदन्त[2] औ दाँते औ हस्ती पुनि मिमते मात ।
दीन्ह अनेक पेटारी भरी, पाटम्बर जरकस पाँवरी ॥
आनि कुँअर कहँ सब देखरावा कुँअर कहा हम काज न आवा ।

हम गौनब तेहि पथ जहँ लाबर साथ न देइ ।
उहवाहिँ लागहि चार सँग अस बेरी का लेइ ॥ ४१० ॥

राउ कहा जहँ लहु कछु मोरा सब तोरै मोरि कौन निहारा ।
है हम सो सब थाती तोरी जब चाहव तब लेब बटोरी ॥
पुनि राजैं सब कुटुँब बुलावा, जो जस हुता सो तस पहिरावा ।
दै पहिराव बिदा करि आये, रहसन सब अपने घर आये ॥
भा हुलास जिय गा सब दुदू पति परजा सब करें अनन्दू ।
परगट कुँअर कौंल मुख हेरा हिएँ ध्यान चित्रावलि केरा ॥
अस ओहि गुपुत लाइ चित रहा, कौंल कहत चित्रावलि कहा ।

१—उघरि गइ, उकसिगइ । २—अदन्त, बेदांत वाले । ३—मृगछाला ।

कुँअर जैस पींअर सुआ, छिन छिन मन अकुलाइ।
गाढ बधन बचन के, निकसि न सकै न जाइ(क) ॥ ४११ ॥

(२६) गिरिनार यात्रा खण्ड।

एहि महँ काहू आनि जनावा गढ गिरिनार परब दिन आवा।
आवहिँ जोगि जती सन्यासी तीरथ अस जस मथुरा कासी॥
आवहिँ लोग बहुत घरबारी बार बून्द नरखी नर नारी।
एक मास लहुँ लागै हाटा, कौतुक कहि नहि पाइय बाटा॥
ऊँच पहार सरग लहुँ बाढा एकै पँडि¹ छोलि जनु काढा।
एक दिस सींग² दूरि हैं बने अँजिस जानु बिधाता गढ॥
बीर नाउँ तेहि देवन्ह धरा जा नहँ पर बार सो परा।

जेहि इच्छा कछु जिय रहे आगिल जनम बिचार।
करवट लेहि पराग मह बार परहि गिरनार॥ ४१२॥

कुँअरहि चाउ उठा सुनि नाऊँ कहिसि महुँ तेहि तीरथ आऊँ॥
मकु कोइ मिलै जोगि सन्यासी आवै रूपनगर कर बासी।
कहे कुशल चित्रावलि करा बूझि पथ उठि चलो सवेरा॥
मँदिर जाइ कौलावति पासा, कहिसि कि पै अछरी कबिलासा।
जौ दिन दस की अज्ञा पाऊँ महुँ जाइ तीरथ कै आऊँ॥
कौल कहा का आज्ञा देऊँ, जियत न नैनन ओट करेऊँ।
तबहीं लहु नीरज डहडहा, जब लहुँ सूरज सनमुख रहा॥

जो तुम साईं सूर जिमि जाउ बचन मोरि पेलि।
सोइ रहब मैं कौल जिमि गरल डारि मुख मेलि॥ ४१३॥

जब तुम कत पीठि मोहिँ दीन्ही, मैं निहचै अपने जिय कीन्ही।
बिधि जौ साईं होइ मयारा, तीरथ जाइ करूँ गिरिनारा॥

(क) करि नहिँ सकै उपाइ—पाठा। १—माग, राह। २—शृङ्ग।

मोहूँ(क) कत लेहु सँग लाई सिव पूजौं गिरिनारहि जाई।
कुँअर कहा जौ निहचै हाई, पुन्य काज कहँ बरज न कोई॥
तीरथ लागि सुजान पयाना परे सहस हय पीठि पलाना।
साजे सब हस्ता सिघली एक तें एक छरक पै बली॥
चले कुँअर पुनि चढ़ि चँडोला, झूलहिं मानिक रतन अमोला।

साठि सहली कौल सँग, एक तें एक सुरूप।
जिन देखा तिन कहा निजु यह इदर सुरभूप॥ ४१४॥

जाइ कुँअर गिरिनारहिं चढा देखिसि गढ बिधनै कर गढा।
जहँ तहँ देखी अनधन हाटा चारिहुँ ओर पटन सब पाटा॥
जुरे आइ सब जोगी जती, तीरथ कहँ आए गढपती।
रहा बिवेक न राजा परजा बैरिहुँ कोऊ तहाँ न बरजा॥
पहिले गरब सीस तें डारा पाछे नए देव के बारा।
कोइ लव लाइ बैठि एक ठाऊँ, जल थल जपै बिधाता नाऊँ (क)॥
कोउ गावै गुण कृष्ण मुरारी कोऊ मौन होइ बैठ पहारी।

देखि परावा लोग सब, लीन्ह कुँअर उर साँस।
आपन कोऊ न नहँ मिला, बहुरा होइ निरास॥ ४१५॥

प्रेम पथ अकसर पग दीजे यहि आ कोऊ सग नहिं लीजे।
यहि मारग महँ दूसर नाहीं होय भरम देखैं परछाहीं॥
कुँअर कटक लै ढूँढन चाला, सग सकल माया जआला।
जो सेना गौनत यहि पथा गोपिचन्द नहिं पहिरत कथा॥
अगसर होइ जो परचो अभावा, कुँअरहिं ढूँढि वेगि लै आवा।
दूत जो कुँअरहिं खोजन गये ते हम आइ सुरत हम भये॥
जहँ तहँ ढूँढत फिर उदासा, अब तिन्ह के लै परूँ अकासा।

(क) माहिं पुनि। पाठा ।

(क) काऊ वार वरी जिव मइ। कोउ कह नार सास उर लग॥

जहाँ न मानुस सचरै निरजन ज्ञान मरम्म।
जम्बुदीप के मानई भरतखड चौगम्म ॥ ४१६ ॥

(३०) जोगी ढूँढन खण्ड।

चित्रावलि जब चतुर चित्रकारी कुँअर खोज पठई अन चारी।
एहि महँ सुध पथ जो पावै जोगिहिँ खोजि कुँअर लै आवै॥
औघट परे जो आहे अयाने पथ न सूझा भवहिँ भुलाने।
जिन पच्छूँ दिस कीन्ह पयाना, पहिलहिँ गा सो देस मुलताना॥
देखेसि सिन्धी लोग सबाईँ महिरावन सब सेवहिँ साईँ।
हेरेसि ठठ्ठानगर सुहावा चिहग हरिन सेवैँ गजावा॥
बरन बरन सब मानुस कचा जान उहा लरका न बलूचा।

ढूँढहि बहुतै नद हटी, रनखर घक्कर जान।
पुनि पेशावरहिँ आइ के, हेरेसि सकल जहान॥ ४१७॥

काबुल हेरि मोगल कर देसा, जहाँ पुहमिपति होइ नरेसा।
बदखसान जहँ दीन सम्हारा खुरासान महँ वाद पसारा॥
देखेसि रूम सिकदर केरा, स्याम रहा होइ सकल अँधेरा।
देखेसि मक्का विधि अस्थाना, दीय मध तैँ पाहन जाना॥
हाजी सँग मिलि गयो मदीना का भा गए जो साफ न सीना।
गा बगदाद पीर क तीरा, जेहि निहचै तेहि सग हमीरा॥
इस्तम्बोल[१] मीसर पुनि हेरा गा लदाख लहु कीन्हिसि फेरा।

घर घर नर नारी सकल, हेरेसि पुनि गिरि मेर।
जौ लहुँ दीप न उर बरै, तौ लहुँ जगत अँधेर॥ ४१८॥

दखिन देस को जे पगु धारा चला ताकि सो लँक पहारा।
पहिलेहि गै हेरेसि गुजराता, सुन्दर धनी लोग सुख राता॥

१—कुस्तुन्तुनिया का एक नाम।

गया जाम जहँ कच्छी होई लोग सुरूप सुखी सब कोई।
पथिन्ह मिलि पुनि गै सेलाना, बाबा आदम कर अस्थाना॥
सेतुबंध रामेश्वर लाँघा जहँवा जात काँप नर जाँघा।
देखेसि लंका कवन केरा सरदीप सब घर घर हेरा॥
सिंघलदीप दीप उजिआरा जो देखा सो मनि मनिआरा।
नर नारी सुन्दर सबै बसगिन जनु कबिलास।
ऊँच नीच घर पदुमिनी मानहिं भोग बिलास॥ ४१९॥
बलदीप(क) देखा अँगरेजा जहाँ जाइ नहिं कठिन करेजा।
ऊँच नीच धन सम्पति हेरा मद बराह भोजन जिन केरा॥
जहा आइ उँह बन्दर साजा रुगा सग चढ़ि गयो जहाजा।
हेरा करनाटक नौरंगा कुखर उडीसा मा तेलंगा॥
स्याम बरन हबसी अरु जंगी नामिल देखी जाय फिरंगी।
देस उडेसा साधन धावा हुगली बेली बदर लावा॥
उलटि बरार आइ पुनि हेरा घर बर दक्खिन कीन्हेसि फेरा।
देखा गढ देवगिरि कर पुनि आसेरहि आइ।
ऐसा काइ न सँग मिला जो चितउर लै आइ॥ ४२०॥
ज पूरब दिस कहँ मुहँ फेरा पहिलेहि आइ सो मथुरा हेरा।
बिन्द्राबन महँ ढूँढे जोगी, जैसे गोपी कृष्णवियोगी॥
दिल्ली तख्त जो साहन करा सो देखा आगरा पुनि हेरा।
आइ पयाग कीन्ह तिरबेनी करवट देखी सरग निसेनी॥
कासी माहिं बिसेसर पूजा, जाहि देव सर आहि न दूजा।
रहि दिन चारि फिरा पँचकासी पूछे फिरि फिरि बाभन जोसी॥
आस न पाएसि चला निरासा हेरसि चढ़ि क गढ राहितासा।
पानी पूरक होइ अन, घाटिन बिकट चढाउ।
बरिस सहस जो लागै बरबस हाथ न आउ॥ ४२१॥
मग्गह देखि फिरा सिर धुनी तिरहुति में 'बिद्यापति' सुनी।

(क) बलदीज, पाठा। १—एक मैथिल कवि।

पुनि आवा जहँ गढ़ीदुआरा एकै पथ चलै ससारा ॥
दक्खिन परबत उत्तर गंगा, सोई चलै जहि पौरुष संगा ।
पहिलहिं जो नहिं करै बिचारा बाचहिं मारि लेहिं बटमारा ॥
जहाँ तहाँ देखहि परिकर डंका राम जूथि जस रावन लंका ।
जो पुहुमी बलि दरबन राता तहा जात कोउ पूँछ न बाता ॥
आपुहिं आपु जनावहि जाई जो वोहि मारग देइ बनाई ।

प्रविसि परेवा नगर महँ, परा कुतुब के पाय ।
दूँ दिसि भाठी माहिँ पुनि बारी बारी जाय ॥ ४२२ ॥

पुरुब अपूरब देस बँगाला पुहमि हरियरी तीनिहुँ काला ।
कटहर नरिअर आम सोपारी अपनी बारी धनी बखारी ॥
हरियर सदा फूल फर डारा जनम न सुनी नाउँ पतझारा ।
पान्न मान्न भूम जल पूरी धूरी नाउँ पै देखै न धूरी ॥
सूखे पथन चल बटाऊ, नाउ पाउ कै देहली पाऊ ।
अन धन सुक्ख दु ख निन गाली दया हिये पै लोग बँगाली ॥
जहँ लहु हिछा तहँ लहु मिता इाछा मिलै बिसारै चिन्ता ।

सब कहँ अमिरित पाँच हे बगाली कहँ सात ।
केला काँजी पान रस साग माछरी भात ॥ ४२३ ॥

उतरा ब्रह्मपुत्र क पारा पीर बँदर जाहि नाउ पुकारा ।
गयो सोनारगाँव जब आगी परसे पाँच पीर अनु रागी ॥
देखेसि मलुआ औ चटगाऊँ सोनदीप[१] पुनि उत्तम ठाऊँ ।
देखेसि पीगु मनीपुर राजा(क) निभरम अपने देस बिराजा ।
औ पुनि हेरसि कूच कछारी जहँ माटी के परबत भारी ।

१—रम्मा । (क) दगसिना का औ नित राजा ।

मखरहग औ हेरेसि आवा आव नाउ पै कोउ न दावा ॥
देखेसि जाइ असाम कै साजा सरग देव जहवाँ कर राजा ।
निसि दिन रहै मचान पर बाहन हस्ती नाउँ ।
हारिल ज्यों अँत्रिख बसै पुहमी धरै न पाउँ ॥ ४२४ ॥

हेरेसि जाइ देस पुनि चीना भँवत भँवन जागी भा हीना ।
जो अहै हुत सो नहँ अकुलाना कहहिँ देस कर भयो निदाना[1] ॥
पुहुमी नाहिँ कहा अब धावहिँ सरग जाइ हेरहिँ मकु पावहिँ ।
बार परहिँ अब गै गिरिनारा सरग निसेनी पहि ससारा ॥
तीनों चले परब दिन जानो हरि हरि कहें साधु निअरानी ।
घाटी चढ़त मिनहुँ भा मेला, जानहुँ प्रान गात सों खेला ॥
पाउ न उठै सरग भइ घाटी को ल के पहुँचावे माटी ।
कहहिँ कि हम सब जग फिरे ओहि मूरति छित नाहिँ ।
अब निहचय पहि बीर चढि चलहु सरग कहँ जाहिँ ॥४२५॥

औ जेहि आस मरन निजु काँधा, अवसि सोई आव स राधा ।
बिनु जिउ दिए न पावै कोई कै जिउ होइ कै प्रीतम होई ॥
चढि गिरिनारहिँ देखहिँ कहा लोग चहुँ दिसि धावत अहा ।
पूछहिँ कहा लोग सब धावा कौन अपूरब कोतुक आया ॥
कहहिँ आइ एक राजा लोना देखत अनु सिर मेले टोना ।
अस सुन्दर मानुष नहिँ होई निहचे देवता आहै काई ॥
जोगी सुनि आए पुनि तहाँ पूरन ससि अग बन्दै जहाँ ।
मुख देखत सुखमा हिए परा अगिनि उर पालि ।
बन्देउ पुहुमि लिलाट धरि, चतुर चिन्हि पहिचानि ॥४२६॥

पुनि जौ देखा ससि मनिआरा, धरा पुहुमि सिर दूजी बारा ।
कहहिँ कि धन विधि धन वह राजा, जेहि कुल अस मयक उपराजा ॥
हम रेनुक वह रवि अति ऊँचा, रवि रेनुक पुनि कहाँ पहूँचा ॥

१—अन्त ।

को अस मिले कहै जो नाऊँ जाति बखान जनम कर गाऊँ ॥
जेहि पूछै सो कोऊ न कहा जगत देखि बाउर होइ रहा।
एहि महँ कुँअर उतरि गढ़ आवा लोगहिं रहा हाथ पछतावा ॥
जत कत जगत चला उठि लोइ देवता नहिं का पूजै कोई।

जोगी आयो उतरि गढ़ चले कटक सँग जाहिं।
होइ हुलास अनन्द अति कथा महँ न समाहिं ॥ ४२७ ॥

पथी चलत जो भयो सँघाता पूछो ताहि कुँअर की बाता।
तेई कीन्ह सब बात उघारी एह राजा हुत आगि भिखारी ॥
दोष न आने दहुँ का अहा पाँच मास बँद भीतर रहा।
कौंल लागि सोहिल चढ़ि आवा, सागर राय बहुत दुख पावा ॥
एह गहि खग्ग दीन्ह तब आसा अरन अगिलि राखा रनिवासा।
हनि मारिसि सोहिल बरिआरा सागर लूटा सहस भँडारा ॥
अब सोई तेहि दीन्ह बिआही किस्न सुजान कौंल अनु राही।

सुनत कथा सताप भा, जोगिन पाई सिद्धि।
जनु बेपारी घर चले लै लाहा[1] नव निद्धि ॥ ४२८ ॥

(३१) चित्रावली बिरह खंड।

चित्रावलि छिन भएउ उदासा पिउ न गए दै अवधि की आसा।
बिरह समुँद अति अगम अपारा थाह अधार बूड़ मँझ धारा ॥
चहुँ दिसि हेरहुँ हितु कोउ नाहीं, बूड़त काह उँचावै बाहीं।
निसि दिन बरै अगिन की ज्वाला, दुरगा मँदिल भया है चाला ॥
बुझै न लूम सगर लहु बाढ़ा पथी गयो लाइ हिय डाढ़ा।
जोगी सुरति रहै चखु माहीं, ज्यौं जल महँ दीपक परछाहीं ॥
झलमल जोति होइ उजियारा, पानी पैान बुझाव न पारा।

बिरह अगिन उर महँ बरै, एहि तन जानै सोइ।
सुलगै काठ बिलूत[2] ज्यों, धुँआ न परगट होइ ॥ ४२९ ॥

१—लाभ। २—[अ بلوط] एक वृक्ष।

एक दिन कहिसि कि ऐ रँगमाती[1], करिया भयो रूप रँगराती।
रूप रग सब लै गा जोगी लोग कुटुँब जानै यह रोगी॥
जोगी गया छाडि तजि माया भोर कि धुईं भइ मम काया।
जोगी करन कहा दहुँ फेरी आसन परी छार की ढेरी॥
बिरह पवन ओ करै झँकोरा, बिथुरे छार न कोऊ बटोरा।
जोबन गज अपसर[2] मद कीन्हे अब न रहे अँधियारी[3] दीन्हे॥
निसि बासर तन कानन गाहा जाकी साल हिये तेहि चाहा।

जोबन सखी मैगल गज तौ लहुँ लाग गोहार।
औलहुँ अपसर हाइ कै सीस न डारेसि छार॥ ४३०॥

सुनि रँगमती कहा सुनु बारी जोबन मैगल मद दिन चारी।
अपसर हाइ देइ नहिँ काई औ तिय आपु महाउत होइ॥
अकुस सकुच गहे कर नारी, दै आँखिन्ह घूँघुट अँधियारी।
औ कुल कानि महादिढ अदू[4], निसि दिन राखै मेलि के फदु॥
औ हठि के भरि पाँव निकारा, हटक बुद्धि बरचा गजदारा।
एह ससार रीति अस अहई जो जेहि लाग दु ख जिय सहई॥
जो तजि ठाउँ सकै नहि जाई आपुहिँ तहाँ मिलै सो जाई।

आजु बदन तोर कौँल सम, औरै रग सुभाउ।
सब तन लागी मधुप पुनि मकु कोउ चाह सुनाउ॥४३१॥

एहि महँ सखी एक हितकारी, आई हँसति भई रतनारी।
कहिसि कुँअरि सुनु बचन सुहाए गए बिदेस नपुसक आए॥
बदन अरुन हिय हुलसत अहहीँ जानहुँ बचन कछुक सुभ कहहीँ।
सुनतहिँ चली धाई बरनारी, गिरि रही पै सखिन्ह सँभारी॥
जोगी आइ मनावत नाथा दरस पाइ भुइँ लायेउ माथा।

१—एक सखी। २—मनमाना, मनमौजी। ३—आँख ढँकने का ढोका।
४—हाथी के पैर बाँधने के लिये एक यत्र।

कहिन कि हम पुहमी सब आए चित्र सरूप चीन्हि अब आए ॥
सुनि रहसी चित्रावलि हीया चित्रहिँ जानु फेरि रँग दीया।

हिय हुलास बिहँसे अधार, औ कपोल रँग हाइ।
पुनि उपजै उर धक धकी होइ न औरे कोई ॥ ३३२ ॥

पूछिसि कौन रूप सो देखा केहि दिन कौन भाँति केहि लेखा।
जोगिन रहसि रहसि अस आनी आदि अंत लहुँ कथा बखानी ॥
सुनि चित्रावलि हिय सराखा, निहचै आनि गया जिय धाखा।
कहिसि कि हौं तुम्ह ऊपर वारी, मोरे दुख बहु भए दुखारी ॥
अब सुख करहु बैठि एहि ठाऊँ, करिहौं सेव जगत जब ताईं।
मैं सब इच्छ तुम्हार पुराई तुम जग इच्छा पुरवहु जाई ॥
सेवक सेव तजौ जनि काई सेवा ठाकुर आपन होई।

मान सेव सोइ कीजिए जासौं पति पहिचानु।
ठाकर आपन जो भयो सब जग आपन आनु ॥ ४३३ ॥

---

(३२) पाती खंड।

चित्रावली हँकारि परेवा, कहिसि बखानि नपुसक सेवा।
जोगी भँवर जगत फुलवारी भँवइ बास लागि बारी बारी ॥
मालति आवै भवँर भुलाना कँवल कोस लै रहै लिखाना।
अब पुनि गवँनहु सागर देसा कहहु जाइ यह मोर सँदेसा ॥
ये अति निठुर निछोही पीया, मानुस होइ न पाहन हीया।
जाके सीस ठगौरी डारी; तेहि कैसे एहि भाँति बिसारी ॥
जोगी भेष फिरहु ससारा कहाँ जाइ घर बार सँवारा।

रोइ रोइ चित्रावलि कहा अस कछु जोगी कीन्ह ॥
औ जहवाँ लगि दुख सहा सो पुनि सब लिखि दीन्ह ॥ ४३४ ॥

पहिले लिख्या परसि सिर पावा तुम बिदेस दुख हम तन छावा।
बिरह अनेक कटक दल साजा, हम उर पीर आइ भा राजा॥
मदन परथ[1] है धनुख सँभारा सुख कौरौ दल मारि निसारा।
अगिन सोँटिया चहुँ दिसि धाव जत सुख साजि सो ढूढ़ि जरावे॥
मैन मतंग गज देइ मकलाई तोरि तोरि तन कानन खाई।
बिछुरन साल आनु तन पूगा हस्ती मदन हस्त कर खूरा॥
जेहि दिसि गिरि पावै नहिँ रहई तिय तन मुछक किमि कै कहई।

दुख दगध सताप मिलि, परा फाँद कैँ आइ।
बिरह अहेरी गुजरत मन कुरंग किन जाइ॥ ४३५॥

यौ निहचै जानहु जिय माहीँ दुख दिन कर कोउ साथी नाहीँ।
हित जो अहे अहित होइ गए बिरहानल अब बैरी भए॥
सीतर हुत समीर तुम संगा अब सो अनल होइ लागे अगा(क)।
सेज जो आहि हेमचल पूरी अब सो अरं लग जनु हेरी॥
पुहुप भए कटक अरु सूआ देखि न जाइ हाथ को छूआ।
चन्दन जो घनसार मिलावा अनु करवार[2] सान पर लावा॥
जो सुख देत अहे सुखदीना सब दुख देइ लाग पिय बीना॥

हिया न उघरं नैन पट औ चीन्हति पिय तोहिँ।
तुमहीँ सब महँ होइ कै, देत दुख सुख माहँ॥ ४३६॥

किमि निरबह दिवस पिय बीना जुग अ पहर कल्प भै दीना।
जिमि जिमि दिनकर किरन पसारा, मानहुँ बान मकरधुज[3] मारा॥
मदन भुअंग डसै निसि आई, तरनि देखि बिष तन छहराई।
दूसर घरी पहर को पावे एक पल माँह लहर दस आवे॥
दुपहर बरस अगिन की धारा सिर की आगि सहै को पारा।
नवत बेर सब कोउ न लखाई चढ़त बेर मोहिँ कछु न सोहाई॥
बूड़त रबि जिय बूडै मोरा, कत आउ सुठि जीवन थोरा।

१—परथ = अर्जुन। (क) रहु उसन सम दाहत अगा। २—स कृपाया-तलवार। ३—कामदेव।

साँझ परत तरिवर चलत चित्त बिहगम जीव ।
दुख सँताप बिरहा अनल आनि बलत हम जीव ॥ ४३७ ॥

स्याम रैनि बिनु स्याम दुहेली छिन न परै कल सेज अकेली ।
स्याम रैनि देखी जिय डरा अँगन बिरह आगि जनु जरा ॥
लोयन सिंधु थाह को पावै बुढिब के डर नींद न आवै ।
पिय बिनु पोढ फाट नहि छाती तारे गनत जात सब राती ॥
बाहीं रास बरग कस बना बैरी गगन लगन का गना ।
कबहूँ धनु देखाइ जिय हरई कबहुँ राहु करवट सिर धरई ॥
कबहुँ बिछु होइ साजै डका कबहुँ सिंह ते उपजै सका ।

बुधि न रही सुधि सब गई, जीव सहै दुख केन ।
मोरे मगलचार नब, पिउ आवै करि हेत ॥ ४३८ ॥

सहि न जाइ पुनि रैनि अँजारी, कौन मास लागै जग हारी ।
हौं तो जरौं जा कत न आरा ससिहर जरे कहौ गुन काहा ॥
कै बिधि जग दो ससि निरमयो एक ताता एक सीतल भयो ।
सीतर हुत सो गा तुम्ह सगा, रहा उसन[1] मम दाहत भगा ।
कै दधि मथा घिरित सो आही परेउ बिरहमल[2] तो मेँ दाही ॥
कै बिसरा तु अहा अतिहिता कै देखि कुदिन न मानै नता[3] ।
अजहूँ आइ सँभारहु नाहीं, लेहु उबारि जरत गहि बाहीं ।

जौ पिउ चाहसि जीउ मम आउ तोहिँ जिउ देउँ ।
तन जरि जिमि दूरद भयो कहसि तो कर कै लेउँ ॥ ४३९ ॥

जौ न पसीजसि जिउ मोर भाखी पूछि देखु गिरि कानन साखी ।
करँ पुकार मजोरन गोवा, कुहुकि कुहुकि बन कोकिल रोवा ॥
गयो सीखि पपिहा मम बोला अजहूँ खोजन बन बन डोला ।
उडा परेवा[5] सुनि मम बाता अजहूँ चरन रकत सौं राता ॥

१—उष्ण = गरम । २ विरहानल । ३ अ ×ᒪᒧ नाता, सम्बन्ध ।
४—स द्विरद = छाया अर्थात् काला । ५—कबूतर ।

हारिल दुख सुनि भयो बिपाऊ, अजहूँ धरती धरै न पाऊ।
गा भुजंग होइ गृह बासा, दहि भा स्याम बिरह कै उसासा॥
किये झंकार बिरह कै आँचा, बाएस भस्म होत नहँ बाँचा।

कुकनूँ पंखी जहँ बसे नहँ प्रगटी यह पीर।
उठी आगि सुनि कै हिये लगा सँवारै चीर॥ ८४० ॥

बनसपती[1] सुनि बिथा हमारी बरहे मास होइ पतझारी।
टेसू जरि पुनि भयो अँगारा, फरहद आगि लाइ सिर जारा।
दारिम हिया फाट सुनि पीरा पै पिय तोर न दया सरीरा॥
भीतर जस खजूर कर बीआ रह छिपान मोर तस हीया।
रोइ रकत घुँघुची भइ दुखी, नजी न बेल रही करमुखी॥
भयो खीन जस चल दल पाता पौन उसास डोल मम गाता।
जो जग सुनो बिथा यह मोरी, त सराहि पिय जाती नारी॥

कहत फिरत मारुत बिथा, पातन सौं बन माहिँ।
धुनत सीस सुनि सुनि सब पीय दया तोहिँ नाहिँ॥ ८४१ ॥

एक दिन भूलि मधुप उर लागा दहि भा स्याम तबहिँ उडि भागा।
गै सरवर मम दुख परगटा कौलहिँ हिए पर सुनि गटा॥
गयो तेज सुनि कुमुदिनि करा, तुहिन क डर बाँधी थरा।
सरवर पुनि बिरहै झकझोरा निसि बासर नन उठ हलोरा॥
डरन मीन चखु पलक न लावा माति सीप दुख बिरह जरावा।
बैसदर रज पानि समारू सब महँ रही व्यापि मोर पीरू॥
जौ इन्ह माहँ होत तोर गाना तो तोर हिय मम पीर पिराता।

बरन बरन कहँ जानिये, जगत सिष्टि सब भागि।
कौन बरन महँ साइँ तुम्ह, जेहि नहिँ चेत हमारि॥ ८४२ ॥

१—बनस्पति। १—कमल के फूल के बीच का छाता जिसमें बीज होते हैं। गाठ।

चैत माहिँ जब कीन्ह बिछोई जग पहि समय न बिछुरै कोई।
बिछुरत गयो प्रान तजि देही, पिय बिनु परी पुहुमि खसि खेही ॥
बिरह जो आइ घात कहँ लागा, लागि आइ ज्यों मरघट आगा (क)।
मैन आनि कीन्हेउँ तन नासू सब कहँ मधु हम कहँ विख बासू[1] ॥
खाइ माँसु मधु होइ निहाला, बिरह कीन्ह तन मिरिग क छाला।
नवपल्लव बन तरु अवसारे[2], कंत तोरे नहिँ नेह पियारे ॥
पलहन फूलन जो बन बारी बिरह आइ जरि मूरि उपारी।

कहाँ बसन्त केहि कुसुम गुन मधुकर हिए बिचारु।
भूलि रहा कहँ कौल कह मालति वेलि सँभारु ॥ ४४३ ॥

भा बैसाख(ख) आँसु चखु दूना भा तन आन पान कर चूना।
जँह जँह परै नैन जल धारा तहँहि भक हुत उठे लुवारा ॥
परी बिजाग पुहुमि सब जारी जरहि मैन औ जालि उजारी।
भा चन्दन घनसार दुहेला जनु घृत आनि अगिन महँ मेला ॥
चीर हार तन चोली ताती, तुम बिनु कन्त सिराइ न छाती।
दानव दिवस साँझ अहि भारी, रकसिनि[4] रैनि भूत भिनुसारी ॥
सो तन जानु बिरह जेहि पीरा निसि बासर छिन कल न सरीरा।

हौं जोगिन ओगी भई तौ पिउ खेह अँडार।
अब तिय बिरहा जरि जरी, आनि समेटहु छार ॥ ४४४ ॥

जेठ तपै रवि सहसन तेजा, सोइ आने जेहि कंत न सेजा।
अस जग तपन तपै पहि मासू, पुतरिन्ह माहँ सुखाथै आँसू ॥
बिरह न रहै छपाए छिपा, सहस तेज होइ हम तन तपा।
पंकज दल मलेज घनसारा, लागत अंग होइ सब छारा ॥
बूडी अमिय दिष्टि पुनि सारी, तेहितेँ अमर जरी नहि जारी।
बिरह बवडर भा बिनु नाँहा, जिमि जिउ पात फिरे तेहि माँहा ॥
पैान उसास उठै जस आँधी परगट होइ न लाज कि बाँधी।

(क) कागा-पाठा । १—बासुकि = नाग । २—निकाले । (ख) भाक्ख मास, पाठा । ३—बाला । ४—राक्षसी ।

ब्याधा बिरह सरीर बन दाँव दहा जिय मोर ।
छाँह न पावे कंत बिनु आगि बरै चहुँ ओर ॥ ४४५ ॥

मास असाढ़ गगन घहराना बरखा रितु आगम सब जाना ।
बादर स्याम होइ आए बैरी बक कै पाँति देखाए ॥
लाग लोग घर आपन छाये पंछी अन बन गेह बनाये ।
मोर कन्त जोगी बनबासा मँदिर सँवारि करौं का हाँसी ॥
जेहि उजारि पिउ बसै हमारा बसती सो यह सब उजारा ।
बिरहा बैठ हिए होइ थानी अब निहचै जानेहुँ जिउ हानी ॥
गए बिदेस देस कहँ आए हम कहँ कंत सँदेस न पाए ।

बिरही एहि रितु घर नके साँझ परे पुनि गाउ ।
जागिहिँ जहवहिँ साँझ भै सोइ गाउँ सोइ ठाउँ ॥ ४४६ ॥

जो एहि मास लोग घर साजा मोहिँ बिनु कंत न छाजन[1] छाजा ।
एह दुहु मास माझि लुटि राइ बिरहा बली निचिंत न सोइ ॥
आगर दुख दूलभ सरबरी निसि दिन पंथ निहारौं खरी ।
बाक न मुख कैसे दुख कहऊँ अभ्रन पास बाँधि चतु रहऊँ ॥
नकु न काऊ बिरह घुन घूनी भइ बिनु तेज थाक अब थूनी ।
का रि चले लइ पिउ की आगि थाँमि उचाइ बाहिँ ल मोरी ॥
हाँ जहि लगि यह ठाट सँवारा कहा आइ दहु भया मयारा ।

अजहूँ आइ सँभारु र बरी कहउँ कि मि न ।
भागी होइ तु सँवरइ जागिहि का री चित ॥ ४४७ ॥

सावन बिरह बढ़ावन आवा, उनइ घटा गगन सब छावा ।
बरसन लाग मघ अतुवानी घर आँगन सब भरि गा पानी ॥
की दुख देखि मोर अति रावा कै कतहूँ भा प्रम बिछोवा ।
जो न बिरह धन सम्पति लूटी रकत रोव कत बीर बहूटी ॥
बोलहिँ बिरही बिरह कि बोली हम तन आरि कीन्ह जहि झोली ।

१—छान = छप्पर ।

दादुर शबद आइ नाहिँ सहा निसरत प्रान लाज गा कहा ॥
तरुनिन पूजि तीज रितु मानी झूल हिँडोल गाय पिक बानी ।
दुख हिँडोल मो मन चढा बिरहा दिये झुलाय ।
खन पुहुमी खन सरग कहँ निसि दिन आवे जाय ॥ ४४८ ॥

भादो भरन भरी बिख धारा, मों कहँ भवन भयो अँधिआरा ।
अस कहि सकल तमी तम चोरा तमचुर बोल जानु भा भोरा ॥
रबि ससि नखत सबै छिपि गए दिन औ राति दोऊ एक भए ।
कंत न सेज धन[1] निसि नाहीं नागिनि भई आस्तीं[2] बाहीं ॥
यह अँधिआरि भयावनि राती बिहरि न जाइ बज्जर की छाती ।
नैनन नीर नदी होइ गई बूडत सेन भइ घरनई[3] ॥
नैया डोलब उदधि गँभीरा बिनु खेवक को लावै तीरा ।
रैनि अँधेरी भँवर जल चहुँ दिसि लहरि झँकार ।
बैठे तीर निचिन सों का जानै दुख मार ॥ ४४९ ॥

आसुन मास खज परगटा धन छीने पुहुमी जल घटा ।
सरद सभा सीतल ससि राती धनहिँ सिरान जगत की छाती ॥
हम घट बिरह दून कै दहा लोयन नार[4] समुँद होइ बहा ।
हम तैस निरखों तीरन लागा, जस वर लहरि सिवारि क धागा ॥
लोचन भए मान तेहि माँही एकहु पल पल[5] लागैं नाहीं ।
हीआ सख भा तजि तन साथा मकुर खढै कैसों तुअ हाथा ॥
तैं जोगी भूला केहि नादू ए सब खेल तोर परसादू ।
नैनन हाइ सब निसि गई पलउ न सीतल लाग ।
अजहुँ आउ रे एहि समै, कहाँ लगावसि आग ॥ ४५० ॥

कातिक कहँ तक रह घट सँसा, पिय न गए दै अवधि की आसा ।
देस न जानउँ दहुँ कहँ पीऊ कहु का कहि समुझावउँ जीऊ ॥

मानहिं परब देवारी लोगू, पूजहिं गाइ करहिं रस भोगू।
जग सेरान एहि समय सोहाई हम तन दीन्ह दवों जनु लाई॥
भोरहिं मारुत सीतल बहा घर घर जाइ सँदेसा कहा।
लोग सुपेती साजै लागा, हम हिय भयो दून बरागा॥
पिउ सँदेस काउ कहै न आई, सपनेहुँ जाहि न डाँव सुनाई।
नींद न आवत रैनि दिन होइ करजें छेद।
धनि सो नारि जेहि पिय गया सपने कहि कहि भेद॥ ४५० ॥

अगहन सकल गहन की धरी धन साता रावन जहिं नरी।
बिरह असोक सोक फल फरा तेहि की छाँहँ धूप जिउ जरा॥
राम कि हनुवँत से सुधि लीन्हा तूँ पिय निठुर तुरत नहिं कीन्हा।
उहा जोगि हुत जे सुधि धाई रावन हनि सिय जाइ छोडाई॥
तू जोगी कस लसि न चाही आनि बूझि तैं बरबस बाही।
अजहूँ आइ सँभारहु कंता बिरहा आउ भए एकमन्ता[२]॥
सीव[३] सजान[४] भयो बिनु नाहीं दबका फिरैं जीउ घट माहीं।
बिरहा गैल कुरग होय चरै सकल सुख बारि।
आइ दिवस एक राम होइ कसन जाहु पिय मारि॥ ४५१ ॥

पूस मास जग जाडा मारा निकरहु दिसि अगिन सँभारा।
पाला परै पौन झुरकाई, जाडन देह सून होइ जाई॥
कबहूँ जाड न छोडै छाती, बासर घरी श्रोर सब राती॥
जेतिक श्रोढों सँवर सपेती हहलि हहलि उर कापौं तेती।
र जोगी एहि दूभर मासू जहि पल घटा न नैना आँसू।
हम कहँ मेलि हिवचल कूईं, कहाँ जाइ सुलगाई धूईं॥
का कहँ रबि होइ प्रगटेहु पीऊ, काकर जाइ छडायहु सीऊ।
जाडन मरौं दुकूल में अजहुँ सवँरि पिय आउ।
तू जोगी हौं जोगिनी कथा आनि श्रोढाउ॥ ४५२ ॥

१—दावाग्नि। २—एक मत। ३—शात। ४—सजान = चेतन, प्रबल।

दूभर माघ भयो बिनु नाहाँ, रहन न जिउ देखौं घट माहाँ।
पिय बिनु हिय घन गहबर आवा नेनन्ह मिलि मोंहट[1] बरिसावा॥
पोन उसास झँकोर झकोरा हिया करेजा काँपि मोरा।
बाढी दिवस दुक्ख तन बाढा बरबस जीउ जाइ नहिं काढा॥
सिरीपचिमी खेलैं लोगू मोहिं बिनु कत दून भा सोगू।
तरुनी फिरहिं सोस[2] के राता हम तिन देखि भूलि सुधि साता॥
सखिन्ह खालि हौं भरी गुलाला, प्रगटी रोम रोम तन ज्वाला।

ओ न हसौं तौ सब हँसहिं हँसौ तो हँसा न आउ।
दुहुँ दूभर हौं बिच परी, पिय तुम्ह नेह सुभाउ॥ ४५४॥

फागुन बिरह पवन अधिकाना हम तन अस तरु पात पुराना।
सुख तरुवर सेती जहु तोरा ता पर दुख आँधी झकझोरा॥
आसा सुख बसत फुलवारी तजि न सकै यह साखरि बारी।
चातक बोल जो हम सुख मूला बहुँ केहि नोतम मजरि भूला॥
कहाँ जाइ इन्ह चाचरि जोरी हम तन मैन लाइ दह हारी।
धुआँ सबै दुहुँ नैन समाना, तातें अहि निसि मोर बहाना॥
स्वारथ लागि क न कछु कीन्हाँ पै बिधि लिखा न काहू चीन्हाँ।

राम हेतु जिमि जानकी, तजि कुल कीन्ह पयान।
अस न आन जो लकपति, करहि आन की आन॥ ४५५॥

जोगी हेतु लीन्ह अस आनी हिया होइ जस दीपक पानी।
मकु चारिहुँ दिस लागि बिजागी, जाइ छाडि जस धुईं कि आगी॥
जोगी जोग पथिक कहँ बूझै, पथ अँधेर नाहिं कछु सूझै।
निकसे मेलि भवन अँधिआर, दै तारा उठि जाइ सवारे॥
जोगी सग लीन्ह यहि काजा वेदन खोवे सुख उपराजा।
मकु दै मुरी जाइ कै रोगी, औषद आन न जानै जोगी॥
जोगी हेतु कीन्ह गुन हीए, छूटै फाँद सबद के दीए।

१—माघ की वर्षा, महावट। २—शिशिर।

नेकु धधारी हाथ दै जाइ फाँद अरुझाइ।
ज्यो ज्यो काउ सुरझावै त्यों त्यों अधिक फँदाइ ॥ ४ ६ ॥

अब जो परी फाँद पिय तारे कहा होइ पछताएँ मोरे।
व्याधा जो बन रचिहिं फँदावे मरे न पाउ सँभारि उठावै॥
पै तुम्ह भेख लिओही व्याधा काहे लेसि एत अपराधा।
कै अब आइ लेहु मग लाई के कटु फाँद जाहुँ मोकलाई॥
तैं माहिं दखत खन पहिचाना मैं तोर भेद न एकौ जाना।
आन क भेख लिए जो लेहू आपन भेद न काहुहि देहू॥
जौ मैं तब पावति शुभ अहू करत सोई जेहि बिलसहत कलू।

मान इहै पछताव मन रहा जनम भरि माहिं।
बूझि लिएउ मैं सो थिकै कहा हतु जो तोहिं॥ ४ ७ ॥

जौ तोर पीत खपर सों साईं आन न देखु नारि की साईं।
थिरह बैठि उर(क) खपर परोआ भीजा नैन नीर जत राखा॥
जौ तोर हेतु भसम सों जोगी, आइ देखु तिय थिरह बियोगी।
तन मन जारि भसम के राखा कागन आइ ठोर[१] भरि चाखा॥
हीयर आगि लाइ सो राखी तुम्ह नहिँ गए होए मोर साखी।
जा चाहसि अबर[२] रतनारा, आइ देखु मम लोचन धारा॥
रकत सुरग धार सब टूटा बसन जा रगा जनम नहिँ छूटा।

हीवर छाला चकर चखु, पलक पाँवरी भेख।
दहुँ सो जोगी दिष्टि भरि, काहि जानि कस देख ॥ ४५८ ॥

पाती लिखी समापति भई, चूमि परेवा के कर दई।
किहिसि पाइ गहि बहुत बिनाती, कहिसि लेहु यह दुख की पाती॥
बिरहिन कर लागे पिअरानी, भीजी नैन नीर के पानी।
जतन जतन कै राखी पाती, सेँकी लाइ लाइ धन छाती॥

(क) उर पाठा। १—चोंच। २—वस्त्र।

अजन सब आखर होइ लागा बाँचत हिए उठै बैरागा।
पाती देखि देखि उठै मरोरा, भगि भरि जनम पात बन तोरा॥
पाती चढ़िहि जाए पिय हाथा हो आखर होइ चली न साथा।

तन पीअर मुख साँवरा रही तुचा[1] होइ भग।
तिय यहि गुनि पाती भई कसन लेहु मोहिं सग॥ ४५९॥

चला परेवा लै दुख पाती जिहरै सुनत बजर छाती।
पुहुमि न धरै पाँउ अनुरागी पाती जानु पवन सँग लागी॥
थारेन्ह दिवस जाइ निआरावा देखेसि सागर देस सुहावा।
ठाँवहि ठाँव सोहावनि बारी सान रूप फूली फुलवारी॥
पोखर घाट चहूँ दिसि बाँधे, कुआँ अनेक रहट पुनि साँधे।
अनबन भाँति सवाँरि कियारी सींचहिं अपनी अपनी बारी॥
[illegible]डहिं भरहिं पानि अन्छरी[2] माथे सोन रूप की घरी।

नीवी छबि लटकी भवा पायन नेउर बाज।
ठुमुकि धरहिं जब पुहुमि पगु परे इन्द्र सिर गाज॥ ४६०॥

परगट रहट आइ यह अवनी मूरख जन कहँ भई चेतवनी।
समुझ न कोउ अधिक दुख कहा होइ कुरग तन पजर रहा॥
निसि दिन नैन ढरै जल धारा ऊँच सबद सुनि करै पुकारा।
तबहुँ न चेत हिये के आँधे, हम इहँ बाँध घरे[3] जिमि बाँधे॥
जौलहुँ होइ न यह तन नासा छूट न कैसेहु गिँव कर फाँसा।
कोउ आगे कोउ पाछे परे, एकहि ठावँ आइ सब ढरे॥
भरी ऊँच सिर की हे आई छूछो चली जाहिं सिर नाई।

रहट बिसह[4] यह मूढ़ मन, दिएँ अँधौटा नैन।
कहा जो हाँक्यो जनम भरि चलेहु न पकौ कैन॥ ४६१॥

१—त्वचा = खाल। २—अप्सरा सुदर स्त्रिया। ३—घडे। ४—बैल।

गै देखेसि पुनि सागर गाऊँ, चारिउ दिसा लगा अँबराऊ।
ऊँच कोट अति सुन्दर साजा धन राजा जाकर उपराजा[1] ॥
नौ खिरकी तहाँ रहहिं उघारी लागी सोन दुआरि केवारी ॥
दुइ मसिआर ऊँच कै बारा, सरग माँह चमके जनु तारा।
राउत राजा पातिन पाँती(क) बैसे बार अपूरब भाँती ॥
बाहर चित्र विचित्र बनावा भीतर जानु भ्रत जिन पावा।
आठ खंड आठौ मनिआरे ठाँव ठाँव सब मोहनहारे ॥

सेव करहिँ सब देवता अस राजा बरिआर।
अगिनि रसोइ आ जल रजक पौन बहारैं बार ॥ ४६२ ॥

देखि परेवा देस भुलाना इहुपुमी सरग जाइ नहिँ जाना।
कहिसि कि धनि पुहमी धनि ईसा, जाकर सब कौतुक नहँ दीसा(ख)॥
लोभ चार बाझे जग पाँखी मथि एहि देस बिदेसी माखी।
निहचै जो आवै एहि गाऊँ, आन देस कर लेइ न नाऊँ॥
इहवाँ राजकुअँर सुख भोगी हौं परदेसी निरधिन जोगी।
राजा राउ न पावहिँ बारा, को हमार लै कहै जोहारा॥
राउत राना ठाढ़ तँवाहीँ[2], हम बपुरे कहि लेखे माहोँ।

भसम अंग गेरुआ बसन(ग), जटा धरै जनि कोइ।
मान सो आसन आन है, जातेँ दरसन होइ॥ ४६३ ॥

सबेरि परेवा गुरु उपदेसा, सरवर तीर ठाँव एक लेसा।
तहँ बैस्यो गुरु आसन मारी, लाइ समाधि ब्रह्म की तारी॥
मारग बाँधि पौन परचावा, पेट खलाई पीठि सौंलावा।
उपजी अगिन तेज तन बरा, भितरहिँ भीतर मंदिर जरा॥
अमिअ कुंड कर नार उघारा बरसाई अमिरित की धारा।

१—बनाया हुआ। (क) बत्तिस परतिहार की पाती—पाठा०। (ख) जाकर यह पुहुमी जगदीसा। पाठा०। २—प्रतीक्षा करते हैं। (ग) कथा से ली चिरकुट—पाठा०।

हीवर सर अमिरित जल भरा, दहि दहि कँवल नाल भा हरा ॥
पौन तेज जल उठेउ हलोरा, डगमग नाल कौंल झकझोरा।

हसा सकती ध्यान धरि रँग रँग हरै लाग।
जो मन चाहे सो मिलै महा सिद्ध सिर भाग ॥ ४६४ ॥

---

(३३) सिद्धसमागम खड।

भयो सोर सब नगर मँझारी, करहिँ बखान सकल नर नारी।
सागर गाँव सिद्ध एक आवा मुख देखत मन इच्छ पुरावा ॥
कुष्ठी कया बाँझ सुत पावै अन्धहिँ चखु दै अग देखरावै।
कहै चाह परदेसी करी, बिछुरेहिँ आनि मिलावै फेरी ॥
सुनि के धाए सब नर नारी बार बूढ़ तरुनी औ बारी।
जेहि निहचै तै निधि लै आए निहचै बिना बादि सब धाए ॥
निहचै मग जानि डारा कोई निहचै सिद्धि परापति होई।

निहचै इच्छा सरग हुत आनि मिटावै दुख।
जैसे नैन चकोर कहँ अमी पियावै चद ॥ ४६५ ॥

सुना कुँअर पुनि सिद्ध बखाना, अकसमात चित रहस[1] समाना।
कहिसि कि भाग जोर समुहाई[2] तब अस सिद्ध मिलै कोउ आई ॥
करूँ आइ मन बच कै सेवा, मकु तो नाहिँ होइ जाइ परेवा।
चित्रावलि कर कुसल सुनावे, रूपनगर कर पथ दिखावै ॥
चला कुँअर निहचै यक हाथा[3] सेवक पाँचन म छोडहिँ साथा।
महत गरब दोऊ तहँ त्यागे, मन बच कर्म तिनो सग लागे ॥
सनमुख आइ दरस जब कीन्हाँ, वै ओकहँ वै ओकहँ चीन्हाँ।

देखत दुहूँ आनन्द भा, रहसत आगेँ आय।
परेउ परेवा कुँअर पग, कुँअर परेवा पाय ॥ ४६६ ॥

१—उत्साह। इच्छा। २—सामने आता है, उदय होता है। ३—अकला।

कहै कुँअर सुनु हनिवँत बारा लागु कठ ज्यों सीत समीरा।
कहु कुसलात वेगि सिय केरी लिसरन प्रान राखु घट फेरी॥
हौं जिमि राम भया बैरागी नख सिख परी बिरह की आगी।
राम संग हुत लछिमन भाई हा अकुल दुख पुनि अधिकाई॥
हनिवँत कहा सीय कुसलाना राघव बदन सुनत भा राता।
औ पुनि बिथा कहिसि ओहि केरी, जेहि दिन ते तुम ओहि आडेरी॥
तहँहाँ दिवस देखि अकसरी रावन बिरह नारि से हरी।

सीता रावन बस परी करौं न कारि उपाइ।
तौ लहुँ नाहिँ उआर लिहु जौलहुँ राम न आइ॥ ४६७॥

पुनि दी हेसि चित्रावलि पाती, खोलि कुँअर लाई लै छाती।
सुलगत काठ लागु जनु लूका दुहूँ आगि मिलि उठा भभूका॥
हिया जरत जो लिहिसि उसासा धूम बरन होइ गयो अकासा।
अमिरित बचन भरी हुत छाती, ता सेौं अगिन मुख बाँची पाती॥
पाती पावस सलिता भई बूनहु[१] कवल दुख जल मई।
आखर मगर गोह घरिआरा, अरथ भँवर परि कठिन निनारा॥
भँवर अनेक पैठि मन तरा[२], एक तें निकसि एक महँ परा।

पाती जनु पावस नदी मन तकि पार तराइ।
चित्रावलि दुख अगम जल बूडि बूडि तहँ जाइ॥ ४६८॥

पाती पढ़ी समापति भई, बिरह झकोर कुँअर सुधि गई।
हीयर जिमि ग्रीषम रबि जरा, जिउ जनु पात बवंडर परा॥
धर कै उठा चला लै चाहा, पाइ फिरा जैसे उतलाहा।
पुनि जो चेत होइ देखा हेरी पायन परी नखा की बेरी॥
कहिसि कहौं का दुख बखानी जनम सिराइ न कहत कहानी।
हौं पछी भूला हुत आवा, जाल मेलि एहि गाँव फँदावा॥
चार टोभ बेसेउँ एहि आडा[३], अचक आइ खोंचा उर गडा।

पाँखन लासा प्रेम का, बाचा बधन पाइ।
दै दै मारों मूँड बहु, निकस न केहु उपाइ (क)॥४६९॥

१—किनारा। २—तैरा। ३—खड्डा। (क) दै दै मारौं मूँड इह निकसि न कैतहु जाइ।

अब तोहि मिलें भयो सतोखा आसा मिली गयो जीउ धोखा।
करहु उपाइ गवॅन जहि होई में आपन बुधि मति सब खोई॥
चारि चले धरम की हानी परगट चहु दिसि रोकहिं रानी।
सुनि कै बिथा परेवॅ कहा अब दुख सब बीता जिन अहा॥
परगट जाइ सॅवारहु कथा अजन लाइ गुपत चलु पथा।
रहसि कुॅअर अगिर महॅ आए कॉलावति कहॅ निअर बुलाए॥
कहसि सुनहु अब राजदुलारी हों परदेसी आदि भिखारी।

आउ न हमरे काज यह, राज पाट सुख भोग।
चित्रावलि हियरे बसी आकर बिरह बियोग॥ ४७० ॥

अब लहुँ मिला न अगुआ कोई जेहिं परचय आहि दिस कै होई।
अगुआ मिला चलयाँ उठि लगा, तुम अजो करहु कौल मन भगा॥
औ बिधि आस पुरावै मोरी ता मैं चेत करब पुनि तोरी।
सुनतहिं गवॅन धसकि उर गयऊ कश्चन अॅग रॉग पुनि भयऊ॥
कहिसि कि ऐ जग जीवन साईं मोर जिअन तुम्र दरसन ताईं।
औ तुम होब बिदेसी राजा इहवाँ मोर कौन अब काजा॥
पाछे महा दुख पुनि कीता, जहवाँ राम तहाँ पुनि सीता।

जैसे पनहीं पॉव की, तैसे तिया सुभाउ।
पुरुष पथ चलु आपने पनहीं तजै न पाउ॥ ४७१ ॥

कहै सुजान सुनहु वर नारी, तुम सयानि औ बूझनिहारी।
मेहरिहिं कहैं लोग सब देहरी धरै असन अखिर सोइ मेहरी॥
औ पुनि घरनि कहै सब कोई, घरहिं सॅभारै घरनी सोई।
राघव जौ लाई सॅग सीता, बिछुरें जनम दुख सब बीता॥
तुम कछु चित चिंता जनि करहू, जो हम कहा सोई चित धरहू।
इतना कहि कथा गिवॅ डारा, औ पुनि अग चढाएउ छारा॥
लुकअजन लै आॅखिन दीन्हा, गा छिपाइ चटेक[1] जनु कीन्हा।

१—इंद्रजाल, नटविद्या का खेल।

कौंला देखि अचक रही जनु ठगलाव देखाए।
पुनि लागे बिरहा धका, गिरी पुहुमि मुरछाए ॥ ४७२ ॥

देखि सखी सब कीन्ह अँदोरा[1] गहि उठाइ बैठीं ले कोरा।
सुनि कौंलावति मंदिर कूका परी अचल गंगा जिय हूका[2] ॥
राजा पुनि बिसँभर होइ धावा नंगे पाँव तहाँ चलि आया।
देखि अवस्था धिय कर रोवा दूनहुँ बदन नैन जल धोवा ॥
पूछहिं बिथा सुनावहिं ईठा गुर गूँगा कर तीत न मीठा।
रानी पूँछि हारि अब रही कौंल बिथा तब फूलन कही ॥
प्रति उत्तर अस दूनहु बीता सो सुजान चेटक पुनि कीता।

आदि अंत बहु साखिन सब एक एक कीन्ह बखान।
सुनत आगि दुहुँ उर परी सो चाहि पारा प्रान ॥ ४७३ ॥

राजकुँअर कर सुनत बिछाहा धाह[1] मेलि पुनि राजा राआ।
कौंलावति दुख दीरघ आनी, उमडि चली गंगा चखु पानी ॥
सखी सहेली पुनि सब रोईं ससि अथईं आनहुँ सर काईं।
पर आपन जन परिजन लोगा(क), सगरें नगर परा सुनि सोगा ॥
नर नारी जुबती आ जरा सब के सीस गाज जनु परा।
मलि मलि हाथ कहें सब कोई, अस परजापति[6] आन न होई ॥
पहर एक बीता होइ रोरा, कोऊ साँच कोउ झूँठ निहोरा।

छमां[7] कराए सब जना, पँडितन्ह ग्रान बुझाइ।
मारे बिरह बयारि क, कौंल रही कुम्हिलाइ ॥ ४७४ ॥

जोगी खेल जो चेटक खेला छाडि मँदिल होइ चला अकेला।
आवा बार जहाँ जग रोका भीर लागि पे काहु न टोका ॥
देखि भीर जिय कौतुक होई, सब संगी पे चीन्ह न कोई।

१—शार, चीत्कार, हल्ला, २—गूँज। ३—पीर। ४—इष्ट = मित्र, हितु। ५—ढाढ, चीत्कार। (क) पर आप जत पुर लोगा पाठा। ६—प्रजापति = ठाकुर। ७—शान्ति।

आदि पथ सो आगे कीता[1] (ख) यह कौतुक जनु सपना बीता ॥
बेगिहिं आइ परेवहिं मिला, सागिहि देखि कौंल जनु खिला।
पथ चले तजि सागर गाऊँ, अपत चले चित्रावलि नाऊँ॥
सुध पथ अगुवा लै आवा बेगहिं रूपनगर नियरावा ।

कहिसि कि एही ठाँव तुम बैठि रहहु लै लाइ ।
हौं चित्रावलि नियर होइ, बाह सुनावौं जाइ ॥ ४७५ ॥

---

(३४) कथक खड ।

जब दीन्हा सोहिल कहँ दागा[3], धुआँ तस उठा गगन कहँ लागा।
सागर नगर जो अहै बसाए, धुआँ देखि चखु जल भरि आए॥
कहहिं कि जे एकछत यहि मारा और को आहि जगत लघु तारा।
हम हैं सब सलिता लघु नीरा वह निज्जु सागर गहिर गभीरा ॥
देस देस सब राउ सँकाने, अहै अडड डड तिन्ह माने।
भाँटन जोरि भटन्त[4] सुनावा, गुनियन उहै गीति पुनि गावा ॥
कथक देखावहिं कथा बखानी घर घर बालक कहैं कहानी।

सोहिल गरब न थिर रहा, गरब करै जनि काउ।
निसि बासर सब देस महँ, घर घर इहै चवाउ ॥ ४७६ ॥

बीजानगर केर एक गुनी, आवा रूपनगर जस सुनी।
धन लगि घर तजि भा परदेसी, गावै कथा देखावै भेसी॥
गावैं सत सती कर जानी, हरिचँद भरा डोम घर पानी।
रामचन्द्र जिमि रावन हना, सीता आनि दीन्ह पुनि बना ॥
गावै पुनि किसुना औतारा मधुपुर जेस कंसासुर मारा।

१—किया। (ख) लीता। २—खबर, समाचार। ३—दाह। ४—काय।

भारथ आइ काप उदगरा जिमि पाडव कारव कुल मारा ॥
नौतम[1] कथा ओरि पुनि गाई, सोहिल सागर भई लडाई।
ऊघट घट न ताल सुर भाव देखावनिहारि।
तीनों विद्या महँ निपुन जोग वीर सिंगार ॥ ४७७ ॥

रूपनगर चलि आवा गुनी चित्रसेनि की कीरति सुनी।
राजा महा सुबुध गुन ज्ञानी पंडित गुनगाहक अरु दानी ॥
गुनि गन ज्ञान सुनत सुख पावा उगहिं राजदुआरहिं आवा।
बीन बजाय सुनाइसि रागा जत कत नैन टकटकी लागा ॥
मानहुँ मृगा बैन सुनि भूले लागे बान जहाँ तहँ झूले।
काहु जाइ नरेस जनावा गुनी एक कतहुँ तें आवा ॥
बीन बजाइ चित्त हरि लेई गावत पुनि दहुँ काह करेई।
राजहिं सुनि उतसाह भा बोला गुनी रसाल।
गुनी अनन कहँ निढि नै मूरख क उर साल ॥ ४७८ ॥

राजा निकट गुनी चलि आवा बानहिं मॉह असीस बजावा।
बढ़ै प्रताप अखडित राजू जुग जुग रहो पुहमि पहि साजू ॥
मनहुँ बीन रसना तें कहा आनन गुनी देखि सब रहा।
राजै कहा कहा तुम्ह आना आपन गुन सब करहु बखाना ॥
कहिसि प्रथम हम राग सुनावहि कथा कहहिं भैसी देखरावहिं।
आदि भत लहुँ नौ श्रोतारा और अनेक वीर सिंगारा ॥
सोहिल जूझि कथा पुनि भई अमिरित बात सुरस रस नई(क)।
सुनये को अमिरित कथा उठी सभा हिय चाउ।
आज्ञा भई नरेस की नौतम कथा सुनाउ ॥ ४७९ ॥

सोहिल कथा कथक परगासा गाए कठ छन्द चौरासी।
पहिलहिं गाएसि फौल सिंगारा सुनि कै भवॅर भयो ससारा ॥

१—नवीन। (क) कुरस रस भइ। पाठा ।

पुनि सोहिल कर बिरह सुनावा कटक जोरि सागर गढ़ आवा।
पै जस तेज बसीठन्ह कीन्हा सागर सुनि उत्तर अस दीन्हा॥
सागर पुनि गढ़ बाजेउ आई, जस दुनहुँ दल भई लड़ाई।
चारि मास गढ़ घेरे रहा सागर जौहर साजै चाहा॥
जोगी एक बन्द महँ अहा बस न जान दहुँ कारन कहा।

पेज बाँधि गहि खरग जिमि की हेसि सोहिल हानि।
दीन्हेसि कौंल बियाहि जस एक एक किहिस बखानि॥४८०॥

गाइ कथक जब कथा सुनाई रही सभा ठगलाडू[1] आई।
अरथ भाव सब काहू बूझा, जेहि जस भाउ ताहि तस सूझा॥
काहू हिए भाउ सिंगारा, काहू बीर चाउ हथियारा।
काहू जोग सुनत रस हीए उपजी जोति ज्ञान क दीये॥
चित्रसेन चित चेत जनावा, दीनेहुँ दान गुनी बहुरावा।
कहिसि कि जौ घर त्रिय औतरी ता एह कथा जगत परचरी॥
अकसमात बिधि भयो मयारा तौ भावा सोहिल बरिआरा।

नाहिं त का सनमुख रहत, चितवत नेकु नरेस।
सिधु सुखि रज होति छिति सकुचि जात पुनि सेस॥४८१॥

का सबँरहु बैरी जग माहीँ, दुहिता सम बैरी जग नाहीँ।
गरबि सीस जो नवत न नावा जनमत आइ सीस भुइँ लावा॥
जाही दीन जनमी घर बारी माथे आनि चढ़ाई गारी।
लाज नैन नजि मारग गहई ना लजाइ चढ़ि छाती रहई॥
जौ सुबस क) राखै कुल कानी[1] नतहीँ रहै पिता मुख पानी।
नातरु कुकरम कै अपकारी, मातु पिता मुख लावै कारी॥
सिद्ध बचन सुनि भयो सँतोखा, अपुत न उपजै धरमी कोखा।

१—वह लड्डू जिसके खाने से खानेवाला खिलानेवाले के वश में हो जाता है। इसे खिला कर ठग यात्रियों को ठगा करते थे।

(क) सुबशि। पाठा।   १—मर्य्यादा।

तजहु पुरुष परतिय रवन , सुपूरुष बाचासार ।
तुम घर रच्छा सो करै , जो जग राखनिहार ॥ ४८२ ॥

राजैँ मन महँ कहा बिचारी हमहूँ घर सँजोग पुनि बारी ।
पुहुमी दुद न एकै बाजा एक ते एक कीन्ह बड राजा ॥
मकु कोइ सुनि हठि माँगै आई तब न मरन बिनु आन उपाई ।
अबहीँ खोजौँ कोऊ कुलीना , जेहि तेँ आगिल[1] परै नहि हीना ॥
यह मन गुनि उठि मँदिर सिधारा झलमल दुति माथा मनिआरा ।
चित न ठाउँ मन धूमिल जानी पूँछि नीअर हाइ हीरा रानी ॥
तुम पुहुमीपति चहुँदिसि नाऊँ , कारन कौन जो चित्त न ठाऊँ ।
राजैँ सरन कथा कही सोहिल सागर जूझि ।
भो पुनि उपजी चेत कछु हिए परा जनु बूझि ॥ ४८३ ॥

रानी कहा सुनहु नरनाहाँ मोहिँ पुनि खरक[4] उठी जिय माहाँ ।
चित्रावलि सयोग सयानी कीजै सोई रहै कुल पानी ॥
खोजिअ कतहूँ एहि लगि जोरा , जेहि दीपक कुल होइ अँजोरा ।
यहि पुहमा बहु राजा राना विप्र पठाइय जहँ मन माना ॥
कोउ कुलीन क्षत्री सहसी का सुँदर देखि चला बहु टीका[6] ।
यहि जग जियन भरोसा नाहीँ आन क तान होइ पल माहीँ ॥
भागवत जग सोई कहाई सतति तीर घाट जिन लाई ।
सतति बिलँब न कीजिए , जियन भरोसा काहि ।
थोरा बहुता लाइ के दुहिता देहु बिआहि ॥ ४८४ ॥

राय कहा यह सोइ बिसाहा , फिरै न फेरे घट औ लाहा ।
जो पहिलेहिँ न बिसाह बिचारी तेहि हँसि लोग बजावैँ तारी ॥
दिन दस और न खरचा करहू , यह बिचार अपने चित धरहू ।
राज लागि मोहिँ आगम सूझा निअरे आपन बैरी बूझा ॥

१—भविष्य । २—युद्ध=संग्राम । ३—बुद्धि । ४—चिन्ता ।
५—साहसी । ६—तिलक ।

दुर जानि यह पुहुमी केरे, पठयों चारहुँ ओर चितेरे।
राजा राजकुँअर जहँ पावहिँ चित्र उरेहि आनि देखरावहिँ॥
ते दिन दस महँ आवनिहारा, चित्र देखि तब करब बिचारा।

पूँछब सब एक एक कै जाति पाँति बेवहार।
सामुन्द्रिक मत हेरि कै लच्छन करब बिचार॥ ४८५॥

महा गरथ सोइ जग माहीँ सामुन्द्रिक सब जानहिँ नाहीँ।
जेरे पढा ते लच्छन जाना चित्र देखि सब कीन्ह बखाना॥
जाति पाँति गुन औगुन बूझा, जैसे मुकुर माहँ मुख सूझा।
पुहुमीपति दुइ रतन बटोरा सामुन्द्रिक औ रँगधर[2] जोरा॥
यह दुहुँ मता जो मुकुर समाना गुन औगुन पुहुमी कर जाना।
पहिलहिँ चित्र हाथ जो कीन्हाँ, नौसाईँ इस कदर चीन्हाँ॥
बाउर लोग चतुर सेँ करहीँ सिरजनिहार नाउँ तेहि धरहीँ।

जौ लहु गुरु जग बिधि करै सब कर कीन्ह बखान।
मानुष औंधी खोपरी बूझै आम की आन॥ ४८६॥

कै बिचार हीरा उठि आई, चित्रावलि के मँदिल सिधाई।
देखि साज चित्रावलि फेरा रानी उलटि सखिन्ह मुख हेरा॥
तुम सब मिलि यह काह सिखाई, केहि कारन अस मैलि रहाई।
आजु मोहिँ ढँग नीक न लागा यहि कर चित देखौं बैरागा[3]॥
सखिन्ह देखि रानी कहँ रूखी जो जैसहिँ तैसहिँ सो सूखी।
चित्रावलि तब कहा बुझाई, हम चिन्ह चढी आजु लरिकाई॥
गयो हसन खेलन सुख भोगा, ताहि सँवरि जिअ मानौं सोगा।

कहाँ सरोवर कहँ कुसुम कहँ चितसारी रग।
सँवरि मरोहा[4] हिय उठै होइ सकल सुख भग॥ ४८७॥

१—लक्षण। २—चितेरा। ३—विराग युक्त। विरही। ४—मसोस।

(३५) परेवा-बधन खंड ।

चेरी एक अहिन जो आही तेइ छिपाइ हीरा सौं कही।
एक दिन देखत अहउँ छिपानी चित्रावलि निकसी कुम्हिलानी ॥
राइ परेवा सौं कछु कहा पाती दीन्ह पावँ पुन गहा।
गयो परेवा लै कहुँ चीठी तहि दिन सौं पुनि परा न डीठी।
पेम बाउ[1] ओ बाउर[2] करही, सेचक पाय[3] तबहि पति धरही।
देखा अहा कहा मैं सांई अब तुम करहु जो करनैं होई ॥
सुनि कै हीरा हिएँ सँकानी धसकि गयो हिय अजुगुति[4] जानी।

केहि अधरम केहि पाप बिधि हंस कोखि भा काग।
अपने जान न बिसतुरेउँ[5] चित्र परेउ कहँ दाग ॥ ४८८ ॥

पुनि मन कछु गियान उपराजा आँख उघारें भरिय लाजा।
अधिक उदगरी[6] काठा झूरी राखौं आगि मेलि सिर धूरी ॥
बाट बाट सब लाई भूता रोकहिँ राह परेवा दूता ।
आवइ कहुँ पूछे बिनु माहीँ आनि बाँधि राखहु बँद माहीँ ॥
जो जह तहाँ राकि मगु रहा आवन पथ परेवा गहा।
बाँधि आनिकै बँद महँ राखा, अचक रहा कछु आव न भाखा ॥
मन महँ कहिसि रहा पछतावा कुअँर क आवन कहन न पावा।

यह पुनि रहिहै रात दिन मारग लाएँ आँखि।
यह परदेसी बापुरा मरिहि अकेला झाँखि ॥ ४८९ ॥

रहा सुजान नैन मगु लाई का दहुँ कहे परेवा आई।
सो पुनि अछा काह करइ, कौन भाँति दरसन पुनि देई ॥
सगर दिवस यहि सोच गँवावा साँझ परी न परेवा आवा।
ज्यों ज्यों छिन छिन रैनि बिहाई, त्यों त्यों बिरह आगि अधिकाई ॥

१—बायु। २—उन्मत्त। ३—पैर। ४—अयुक्ति।
५—अलग किया। ६—प्रज्वलित। ७—रोककर।

लोयन दोऊ रहे मगु लागे आहट कहँ सरवन पुनि जागे।
सकल रैनि पुनि ऐसेहिं बीती जानु कँवल जिय भानु कि पीती[१] ॥
दिनकर उठत उठै हिय आगी बिरह बयारि सरग गै लागी।

कहिसि कि प्रीतम हिया सर सुखि गयो जल नेह।
फाट न हिया तडाक जेउँ हंस चलेउ तजि देह ॥ ४९० ॥

जौ पै मो सैा निज मुख फेरा ता काया परान केहि केरा।
जीउ लेइ जो जम बरिआरा छुटै प्रान यह दुख अपारा ॥
औा अब मरौं होइ अपघाती जगत नसाइ जनम कै जाती।
मैं बिरही मोहिं नाँच नचावा पल सौ यह कौतुक देखरावा ॥
अब नाथौं किन परगट होई मोहि क पंथ ले मारौ कोई।
निसरा कुँअर डारि सिर छारा चित्रावलि चितरवलि पुकारा ॥
काऊ आहि अस पर उपकारी आनि देखावै राजकुँआरी।

खनक देखाउ सरूप मुख लिहिसि चोर जिय भार।
यह राजा हत्यार कस घर महँ राखै चोर ॥ ४९१ ॥

सुनि कै लोग अचंभौ रहा जोई सुना सोई मुख गहा।
बिरह उसास अगिन कर ज्वाला लागत परे हाथ महँ छाला(क) ॥
धूरहिं हटकि रहैं सब कोई कोउ मुख मूँदे नियर होई ।
होइ गा सगर नगर बधावा, रूपनगर एक बाउर आवा ॥
कहै सोई जो कहा न आई, मरे लागि यह बुद्धि उपाई।
राजसभा सब काहू सुना सुननहि चित्रसेन सिर धुना ॥
बदन सुखान अग दुति छाडी लाजन सीस पुहुमि गा गाडी।

कहिसि कि जाकहँ जिय डरत, सँवरि सुहात न राज।
सोई आनि हम सिर परी अचक कहूँ हुत गाज ॥ ४९२ ॥

१—प्रीति। (क) कर लाग्या—पाठा ।

(३६) दलगजन खंड ।

पुनि सँभारि कै बैसेउ राजा कहिसि कि भल नाहीं यह काजा।
किन भिखारि घर कीन्ह अगासा, जिन अस बचन असुभ परगासा॥
काढ़ि जीभि जिय मारहु सोई जो अस सुनै कहे नहिं काई।
राजनीति एक मंत्री अहा तिन उठि सीस नाइ कै कहा॥
यहि संसार बेद अनुमाना बाउर बचन न कोऊ माना।
आकर बचन नाहिं परतीता ताके मारे होइ अनीता॥
राज लाग जो मारै काई अस मारे भल कहै न कोई।

गहि जो भीखारी मारई दुइ घट यहि जग होइ।
एक हत्या कांधे चढ़ै पुनि भल कहै न कोइ॥ ४९३॥

यह सरचा पुनि मंदिर भई रानी सुनत सूखि जिय गई।
कहिसि कि मुई न ऐसन बारि, जे अपने कुल लाइसि गारी॥
अपने जानि बिसारेउँ नाहीं, पौन न पाउ छुवै परछाहीं।
एहि क रूप कहँ काहु न देखा मिटी न सीस करम की रेखा॥
मकु यह भेद परेखा आना पूछहु आलि कहै अनुमाना।
बहुरि कहिसि यह पाथक जरई ज्यों ज्यों खुदी त्यों उदगरई॥
बाहर नगर परा जन कूका, कहुँ घर लागि जाइ जनि लूका।

तब कछु हाथ न आवई होइ आन की आन।
ततें बरज सकल जन, परै न खिझिनि कान॥ ४९४॥

राजै मते महाउत लावा पान दीन्ह औ कहि समुझावा।
जहाँ कहूँ वह बाउर होई अस जस दूसर जान न कोई॥
अपसर गज दलगजन नाऊँ छलि मकुलाइ[1] देहि तेहि ठाऊँ।
मकु गज धाइ हनै सो जोगी, बिनु औषद जिय होइ निरोगी॥
लै सो पान महाउत आवा, मूरी दइ गज अतिहि मतावा।

१—खोल क।

खोलि गयद वोहि दिसु चला, कोऊ न जान गुपुत की कला॥
जहँ बाउर सिर डारत छारा उतरि महाउत भयो निनारा।

छूटि चला मैमत गज चहुँ दिसि परी पुकार।
जग लै भाजो जीउ सब छूटा जम बरिआर॥ ४९५॥

भा अँदोर मेगल[1] मकुलाना, सुनि चारिहुँ दिस परा बखाना।
देखि देखि लोग हीय सब कूटा भा अजुगुत दलगंजन छूटा॥
एहि सों जिअत बँधा ओ आजू, ताकर भवा जनम कर साजू।
आपु आपु कहँ परजा राजा, जहँहि सुना सो जिउ लै भाजा॥
पूतहिं बाप सँभारै नाहीं, कुटुँब लोग केहि लेखैं माहीं।
जेहि सँग अहा कटक हय हाथी अकसर जाइ न कोऊ साथी॥
जाकर घन न छुअन समीरा गहै आनि अनचीन्ह सरीरा॥

जेहि तन लागी रैनि दिन चोआ चन्दनसार।
तिन्ह तन बन महँ संग बिनु निभरम लागै छार॥ ४९६॥

चले छाडि बनियाँ बेपारी, रही जहाँ तहँ हाट पसारी।
छाडि चले अत मदिर लोना जहवाँ लाग रूप औ सोना॥
छाडि तिया जासों रँग कीन्हा, चले जाहिं जानहु अनचीन्हा।
छाडहिं अन धन घार घारसारा छाडहिं दरब झूठ ससारा॥
छाडहिं अगर कुमुकुमा चोवा, छाडहिं रतन जो माल परोवा।
छाडहिं कस्तूरी घनसारा, अत आइ तन लागी छारा॥
सगरे जनम सौति[2] दुख पावा, छिन एक महँ सब भयउ परवा।

यहि विचार कै मान कबि महा पुरुष जग माहिं।
तासों जीउ न लवहीं, अत जो साथी नाहीं॥ ४९७॥

कुँअर देखि हस्ती मतवारा, मरन जानि जिय कीन्ह बिचारा।
जा कह अत मरन जिय माहीं, मीचु देखि सो भागै नाहीं॥

१—पागल = मदमत्त। २—एकट्ठा करके।

मोहिं यहि मारग निजु जो मरना भागि रहौं ले का की सरना ।
बिनु साहस जो तजउँ सरीरा काउ न कहे यह छत्री बीरा ॥
बाजौं आजु भीम की नाईं मारौं जो जय देइ गोसाईं ।
मरौं तौ लोग कहे यहि देसा छत्री अहा जोगि के भेसा ॥
पुनि बिधाधलि सुनु यह बाता जूझि मुवा जोगी रँगराता ।

बाँधि काछ दृढ होइ रहा मन महँ मरन बिचारि ।
जेहि जिय डाँडा पेम कर सब जग जीतनि हार ॥ ४९८ ॥

आवत हस्ति चुवत मदगधा तारत तरुवर धावत कधा ।
गज बाजी कहँ परलै[1] कापा अगद पाँच पुहुमि जस रोपा ॥
कुँअरहिं दौर धाइ अस परा बीर पँवार न पाछ टरा ।
कथा डारि गयद चुकावा आपु सजग होइ पाछूँ आवा ।
गहि के पूँछि गयद घुमाइसि यही भाँति भरी एक लाइसि ॥
जनु उकाई गहि डोर फिराई पुहुमि परा गज ताँवरि खाइ(क) ।
मस्तक आइ मूँक तब मारा सीस फोरि गजमाति निकारा ॥

पुहुमी परा गयद ढहि जानहुँ परा पहार ।
देखि अचभित[2] जग भया चहुँदिस परी पुकार ॥ ४९९ ॥

कहे लोग यह का बरिआरा, जिन गयद दलगंजन मारा ।
यह राजा कर हस्ती सोई, जेहि ते बली आन नहिं होई ॥
यह जोगी भल कीन्ह न काजा परल करहि आजु सुनि राजा ।
राज दुआर भई पुकारा जोगि बली दलगंजन मारा ॥
यहि जोगी कहँ सिव परसन्ना, नाहिं तौ अस परवल को हुना ।
मानुष अस बल करै न पारा निज यह पुहुमि भीम औतारा ॥
औरौ हस्ति सँभारहु नाहीं, मति कहँ भटकी सिर कहँ जाहीं ।

सुनि कै राजा थकि रहा, रुहिर सुखि गा गात ।
हिएँ थरथरी पेट डर मुख नहिं आवै बात ॥ ५०० ॥

१—प्रलय । (क) आइ, पाठा । पाँवरी = पैर । २—विस्मित ।

(३७) सुजान-बधन खंड।

पुनि सँभारि के बोला राजा साजहु बेगि जूझि कर साजा।
हनुमत जस लंका हुत आवा तस छलि कै यहि काहु पठावा॥
काहु केर पठावन होई जिअत न जाइ करहु अब सोई।
बाजन बार जूझि कर बाजा, आनहुँ सरग मेघ दल गाजा॥
साजे हस्ती सिंघलदीपी चीता[1] माथ छीट जनु छीपी।
साजे तुरे समुँद[2] अलगाहा[3] पखरे राउत गहिरि सिनाहा॥
राजा सपरि भयो असवारा चले बीर चढि तुरी तुखारा[4]।
बाजे बाजन जूझि क धुका[5] दमामा भेरि।
छेंका जोगी कटक लै, मंडल चहुँ दिस फेरि॥ ५०१॥

जूझि साज जौ कुअँरहि सूझा कै बिचार अपने मन बूझा।
जाकर दोस करे जो कोई, का बसाइ जा मारै सोई॥
मोहिं नहिं इहां जूझि सों काजा मारौं ल पुहमीपति राजा।
एह गुन बैस्यो आसन मारी जैसे निरगुन जागि भिखारी॥
सीस नाइ पुहमी तिन हेरा, कटक आइ सब करत फरेरा।
मंत्री राजबाग तब गही, सीस नाइ के बिनती कही॥
जूझि केर जग अस बेवहारा मारिय सोइ जो गहै हथिआरा।
जोगी बाँधिय जिअत गहि मारि न करि अनीत।
पूँछि भेद पुनि लीजिए, को बैरी का मीत॥ ५०२॥

घेरत घेरत आए रौंधा[6], पाँच जने मिलि जोगी बाँधा।
अस कै ढील दीन्ह दुइ बाहीं, जानहुँ एक रती बल नाहीं॥
राजा सनमुख जोगी आना, देखि रूप सब कटक भुलाना।
पूछै को हसि कहँ तें आवा केहि कारन केहि केर पठावा॥

१—रंगा, छापा। २—घोड़ा। ३—दरियाई। ४—स्वेत = उज्ज्वल घोड़ा।
५—बजा। ६—समीप।

कुँअर न बोल मौन मुख गहा, सीस नवाइ अौंखि चखु रहा।
एहि अंतर एक चतुर चितेरा, सागर नगर कीन्ह ज फेरा॥
कुँअर चित्र लिखि अति मतिमाना, सोहिल जूझि भद पुनि जाना।

आइ पहूँचा राज ढिग देखि नवाइसि माथ।
लीन्हे चित्र अनेक ज देस देस क नाथ॥ ५०३॥

वै कुँअरहिँ देखा पहिचाना कहिसि कि यह जस कुँअर सुजाना।
वह उहवाँ पुहुमीपति भारी राज छाडि कत हान भिखारी॥
पुनि वह अस कुकरम कत करई जहि कोइ बाँधि चार के धरई।
चित्र काढि जो पटतर[1] देखा सोई कुँअर सुजान सरखा॥
कहिसि कि यह पुहुमापति राजा, पुहुमा रहा सदा ओहि साजा।
यह पवाँर छत्री बरिआरा यही हाकि रन सोहिल मारा॥
यह पुहुमा पति देस क राजा अचरज माहिँ देखि यह साजा।

कुँअर चित्र लै कर दिहिसि, कहिसि कि अचरज होय।
बाँधा सिंह सिआर ज्यों का कौतुक विधि कीय॥ ५०४॥

इहाँ नरेस जूझि कहँ आवा, रानी उहाँ अँदोर बढावा।
जे मारा दलगजन सोई, तेहि के जूझि आजु कस होई॥
हिए सोच करि हीरा रानी पूँछा बोलि पर वा ज्ञानी।
वह पंडित औ चतुर परेवा आमग[2] न चल जानि पति सेवा॥
जिन मारा दलगजन हाथी, मकु वह होइ परवा साथी।
खोलि मँगावा सीध परेवा, आइ देखाइसि कन्तहिँ सेवा।
होइ अकसर है मत बईठी, कहिसि कहाँ ले गवनेहु चीठी॥

बिनु पूछे किछु ना कहै, तैं पंडित सहदेव।
को जन यह हस्ती हना, कछु जानसि यह भेव॥ ५०५॥

कहिसि कि सदा सोहागिनि रानी, तुम सयान पंडित औ ज्ञानी।
मैं यह सुफल सुआ सो खोजा, चीन्हहु होइ सो राजा भोजा॥

१—सामने। २—कुराह, कुमार्ग।

आकहँ भोर सदा सिर नाईं चहै मारि तो कहा बसाई।
कथा कहत लागिहि बडि बारा उहाँ न होइ जाइ सघारा॥
थोर कहाँ जौ विलँब न हाई सोहिल जिन मारा वह सोई।
धरनीधर नेपाल भुआरा पह सुबस ओ बीर पवाँरा॥
चित्र माहँ चित्रावलि जानि। भा जोगी सुनि रूप कहानी।

पहि सो रतन अहि कीजिय कुन्दन घालि जराउ।
जनि गहि डारहु समुँद मह नतु रहिहे पछताउ॥ ०६॥

रानी कहा वेगि चलि आहु लगै न पाउ मयकहि राहू।
जाइ जनाउ नरेस रिसाना जौ लहुँ छुटै पाव नहिँ बाना॥
दसरथ धोखे सरवन मारा, पाइ सराप भयो हत्यारा।
अक्षा मिली परेवा धावा निमखि माह राजा पहँ आवा॥
देखिसि राजहिँ रिसि मन माहीँ हाथ चित्र चित चिन्ता माहीँ।
औ पुनि कुँअर आनि कै आना कीन्हा जल चखु जानि सुजाना॥
आइ नराइस पति कहँ माथा कहिसि इ पुहमीपति नाथा।

पह सोइ जिन बैरी हना सोहिल अस बारि आर।
अबूदीप नरस सोइ निरमल जाति पँवार॥५०७॥

पह जस बिक्रम राजा भोजा, मैं चित्रावलि कहँ बर खोजा।
चित्रावलि कर रूप सुनाई, कै जोगी आनेउँ बैराई॥
मै राजा सोँ कहै न पावा बीचहिँ बैरी मोहिँ बँधावा।
तौ पह कौतुक सब बिधि कीन्हा रतन सेह मईं काहु न चीन्हा॥
राजा हिय सुनि कुँअर बखाना तजि चिंता चित रहस समाना॥
जो जहँ चित्र मूँदि वै राखी तब भा आनि परेवा साखी।
पह पडित औ विधि सो डरई, पडित काज बूझि कै करई॥

छोर बधन दुख के, महाबीर पहिचानि।
राजा उतरि तुखार सोँ अक मिलायो आनि॥ ५०८॥

ततखन तहाँ कुँअर अन्हवावा राज साज सब आनि पन्हावा।
औ पुनि लीन्ह चढ़ाइ अँबारी दूलह जानि बरात सँवारी॥
रहसत चला तुरै चढ़ि राजा बाजत अनँद बधावा बाजा।
एके बाजन अहि जग जाना आवत आन जात भा आना॥
गहगह बाजन बाजत आवा नगर लाग सब देखै धावा।
जिन देखा तिन धनि धनि कहा रूप निहारि चक्र होइ रहा॥
धनि सो चित्र धनि सोई चितेरा कहहिँ और चित्रावलि केरा।

निकसा हाट मँझार होइ चहुँदिसि रहस अनन्द।
देखै आईं उतरि जनु सूर तराईं चन्द॥ ०९॥

चढ़ि अँटारि देखहिँ रनिवासा जनु ससि नखत सरग परगासा।
देखि कुअर मुख हीरा रानी हिए अनन्द अधर बिहसानी॥
कहिसि कि जानु आहि यह सोई जहिक चित्र चित्रसारी होई।
पुनि तिन्ह साथिन्ह आनि देखावा जे अपने कर चित्र बनावा॥
जिन देखा तिन मुख अनुसारा यह सोई गरब भारा।
जब तें हम यह चित्र नसाई नन हिए जाहुँ लिखि लाइ॥
धनि यह दिन धनि घरी सरेखा हिया इउ इन्ह नैनन्ह देखा।

मान न मन्स निसारहिँ सिंह पुरुष मुख नन।
जो मूरति हिअरे बसी सो बिनु देखी नन॥ १०॥

रानिहिँ यह सुनि भया अनन्दा सीस पुहमि धरि बिधना बन्दा।
जिन्ह काहू यह भेद न जाना सो बिधि कौतुक देखि भुलाना॥
कहै कि यह कस बरी होई आदर चाह कर सब कोई।
सखी एक चित्रावलि करी चढ़ि मदिर पुनि देखिसि हरी॥
कौतुक लखि चित कीन्ह हुलासा, गई धाइ चित्रावलि पासा।
कहिसि कि पै कुल मनि मनिआरी, तोरी जाति पुहुमि उजिआरी॥
फिरेउ जीति सग्राम भुआरा, गहि आना बैरी बरिआरा।

देखौं सोइ हस्ता चढा नहिं जानौ कहि काज।
पुहुमी आव इन्द्र जनु, तजि इन्द्रासन राज॥ ५११॥

मेहरिन्ह महँ पुनि चरचा होई, चित्र जो मेटा जनु यह सोई।
सुनतहि चित्र चाउ चित बाढा होइ व्याकुल ओराहर ठाढी॥
देखत मुख सुधि बुधि सब हरी होय अचेत पुहुमी खसि परी।
सखी सो हाथन हाथ उतारी सेज सुवाइ ओढाइन्ह सारी॥
डरहिं कहें विधि का भा आई और मोंह काहू डिठि लाई।
सुनै पाउ जनि राजा रानी हम जिय करहिं घरी महँ हानी॥
ततखन मँदिर परेवा आवा सखियन्ह कहँ सब भेद सुनावा।

कहिसि कि पै पति कलप जुग हम साध तुम छाँह।
अब किमि जरिए धूप दुख छत्र आउ घर माँह॥ ५१२॥

सुनत बैन चित्रावलि जागी देखि परेवा के पौं लागी।
कहिसि कि पै हीरामन[1] सूआ रतन लागि कस कौतुक हूआ॥
कैसे आइ भोराएहु[2] साईं, कैसे आनेहु इहवाँ ताईं।
का कहि चित्रसेन समुझावा काहि लागि मंदिर लै आवा॥
कहिसि परेवा प्रेम कहानी आदि अंत लौं कहिसि बखानी।
चित्रावलि चित भयेउ सँतोषा, गा सो सोच अहा जो धोखा॥
बर बिआह सुनि मनहिं लजानी, घूँघुट ओट दिये मुसुकानी।

कहिसि परेवा सुमति तैं पूरन सेवा कीय।
जो चित भावै सोइ करु, मैं तुम्ह आज्ञा दीय॥ ५१३॥

१—इसी पद्मावति हीरामन सुआ राजा रत्नसेन को पद्मावती के लिए चितौर से सिंहलद्वीप ले गया और वहाँ उसे पद्मावती से मिलाया। २—भुलवाया बशीभूत किया।

(३८) चित्रावली विवाह खगड ।

मंन्दिर आनि ले कुँअर उतारा । कलधौत पाट बैसारा ।
बैठेउ कुँअर सिंह आसना कह नर अहै पाकसासना ॥
यह मघवा[2] परतच्छ देखावा नजि सुरभौन छार कहँ आवा ।
जो देखै सो रहे लुभाई अति लालच घर जाइ न जाई ॥
चित्रसेन औ हीरा रानी तीसर जालि परधा ज्ञानी ।
राज नीति मंत्री हकरावा आदि मत लेई भेद सुनावा ॥
एकमत होइ के कीन्ह बिचारा बिलँब न करिय धरम बेवहारा ॥

तत्तखन आये जोतषी रास बरग गनि देखि ।
बदि बैसाखी पंचमी मीन लगन सुभ देखि ॥ ५१४ ॥

मीन लगन ससि बार सरेखा नवएँ दिष्टि बृहस्पति देखा ।
महागनक पंडित गन भले थापि बिआह लगन ले चले ॥
आखत दूब भरो चकमका रूप क थार सोन कर ढका ।
महता राय सो बिनती कीन्हा मारी सम्पति तुम्हरी दीन्हा ॥
पै बिधि दीन्ह न संतति बाँटा जहि निसरैं मारे हिअ काँटा ।
आज्ञा देहु तो हिया सुधारौं कुँअरहि ले बरिआन सँवारौं ॥
सुनि के हरषे राजा रानी धरम बात हमहूँ मन मानी ।

जब ते दुहिता ऊपनी सनत हिये उतपात ।
निकसै काँटा तबहिँ जब आँगन आउ बरात ॥ ५१५ ॥

राजनीति रहसत घर आवा, कुटुम लोग कहँ भेद सुनावा ।
सुनि कै रहसे सब नर नारी अनँद बधावा बाजहिं बारी ॥
नेगिन्ह दीन्ह भँडार कि कूँजी धोख न लाउ लगावत पूँजी ।
आपन जानि दरब मैं जोरा, अब जो निसरै सोई मारा ॥
अबहीँ लेहु बेसाहु सो जाई, जेहि बिनु तेहि दिन मुँह न गोआई ।

१—पाकशासन = इन्द्र । २—इन्द्र ।

नियरेहि आहि सो दिन हम आगे काज सवाँरहु सब जिउ त्यागे ॥
पुहुमीपति घर जाइ बखानो सोई करब रहै मुख पानी ।
सजि काज पुनि नेवत ले, चहुँ दिस पठए बारि ।
ततखन पहुँचे आइ सब लोग कुटुँब सब झारि ॥ ५१६ ॥
सोधि सुघरी महूरति पला साजि बराति महत लै चला ।
चलि चंडोल कुँअर अभिलाखा माथे मुकुट जराउ क राखा ॥
चमकहिँ चुन्नी कुंदन रली झूलहिँ झालर मुकुताहली ।
पुनि नैनन महँ काजर कीन्हा दिष्टिनेवार बीखडा[1] दीन्हा ॥
हार हमेल फूल पहिराए, भा मुख पान कपूर खवाए ।
ढारहिँ चौंर चार जन लोने कनक खम मानहुँ चहुँ कोने ॥
चढा तुरग चपल एक सरा चावा चन्दन कुमकुम भरा ।
ढका[2] दमामा कान्हरा सहनाइ भो भर ।
पुहुमी रहउ अकून हाइ सात कोस क फर ॥ ५१७ ॥
यह कौतुक क रूप पराज कागद पान लाह फर साज ।
सुभग डारि पर फूल बनाई ठावँ ठावँ पछ बैसाई ॥
देखत तन बसक कछु नाहा, जनु सजीव पछी भरकाहीँ ।
अरुन बसन मधि नाव बनायँ, सुंदर बीरन थान चढायेँ ॥
बाट जात पुनि कहेँ बटाऊ, सुखँ चली दान की नाऊ ।
सरस कंठ सब गावत चलीँ चन्दन बदन सग धर अलीँ ॥
कथक कलावन गावत चले भाट पढहि गरजहि घन काले ।
फूल साँझ सुभग समो गगन बरन पुनि रात ।
चित्रसेन के बार लहि पहुँची आनि बरान ॥ ५१८ ॥
कनक कलस जल भरि दुइ जनीँ आईँ जानु अपछरा बनीँ ।
नैन मीन मुख दधि सब सारा कुँअरहि सबहिँ सगुन बैसारा ॥

१—काला बिंदु जो बच्चों के सिर में इस लिए स्त्रियां लगाती हैं कि उन्हें नजर न लगे। भाषा : अखा। २—स ढक्का = ढका।

पुनि आदर कहँ आये लोगा आइ कुटुम्ब जो आदर जोगा।
गारी दै दै गावहिं चेरी जाहिं लजाइ कुअर मुख हेरी॥
राजनीति पुनि अपनी बारी समधी नाईं पाइ गारी।
ससुर का राति अहे सो लेहीं सहस लाख न्योछावरि देहीं॥
पुनि जस नेग अहा जहि केरा राजनीति दै कै सब फेरा।

पुन अगुवानहिं ले चल्यो जहँ साजा जनवाँस।
नियरहिं अगुआ बाहिरे जानहुँ कास पलास॥ १९॥

जनवाँसे कहँ चली बराता बाजन बाज उठेउ अघाना।
सहस चारि एक दीपक बार निभरम चले पंथ उजिआर॥
हिया अंध कहँ जग अँधियारा सो ससि सूर न करै उजारा।
ओई रँग दै तेल मरावा सोइ बरन जाति दरसावा॥
औलहुँ तेल खरी[१] सँग होई तालहुँ देह लेउ रँग काई।
तेल खरी जो भई निनारी[२] रंग न चढ़ न बास बसारी॥
बरबस कोऊ जो रंग चढ़ाव बास करै तन काम न आव।

मान तेल मन तन निली जौ लहुँ नहिं बिगराइ।
तालहुँ गुरुमुख फूल ले लेहु सो बास बसाइ॥ २०॥

अगिनचक्र[३] बहु कीन्हे फेरा पूरन ससि जनु बिरहिन केरा।
अतिहि रहस तहँ चली हवाई रतन पदारथ डारन जाई।
ठावँ ठावँ भुइँ चंपा[४] गाड़ा नत मुख जनु बसन्त ठाढ़ा॥
छाडत सेन अहन अति जूही बरम फूल बसन्त फूली।
चन्द्रजोति कीन्हा उजिआरा उआ जनु दिनकर रविआरा॥
फूली माहताब[५] बहु साखा चारिहुँ दिसि जमन के शाखा।
फूटहिं लैकी उडगन भरी चारहुँ ओर दुइ फुलझरी[६]॥

१—सखी। २—अलग। ३—एकतमाशा = चरखा। ४—एक तमाशा। ५—एक तमाशा। ६—आग। ७—एक तमाशा। ८—एक तमाशा। दुपहरिआ। ९—एक तमाशा। महताब। १०—एक तमाशा।

भरी अगिन भुइचक[1] छुते नील बरन सुख मूल।
फूलि रहे जनु पुहुमि महँ चहुँ दिसि तीसी फूल ॥ ५२१ ॥

जनवासे बरात बैसारा, मंदिर माहँ रसोईं सारी।
चौका दै आँगन भरि बेदी लीपा चंदन कुमकुम मेदी ॥
सात रूप के थार बनाए दोना पतरी[2] बारी लाए।
जूड़े जल जहि लाग पिआसा मलि कपूर कुमकुमा बासा ॥
औ जन सोध जगत महँ आए सब पकवान साथ लगवाए (क)।
झारी गडु आ लोग सँभारी लै जल पहिले पावँ पखारी।
बैसि गए सब पातिन्ह पाँती, साथ साथ सब अपने जाती ॥

पहिले डारी पातरीं तौ पुनि राखे थार।
लग परोसन सहस जन भाँति भाति परकार ॥ ५२२ ॥

गोहूँ प्रथम दूध सौं धोए खीरि खाँड मिलि माँडा पोए।
चाउर अति सुगन्ध महँकाए कालन माहँ भीर अकुलाए ॥
मूग चना कै बहु परकारा लेन न बनै नाउँ बिस्तारा।
डुहुका छामा घा खँडबरा अमिरितबरी फुलौरा बरा ॥
दूध अमाइ दुँडी आनी भाजन छूट न तबउ नसानी।
लपसी कर का कहौं मिठाई मुख न फेर जा मन भरि खाई ॥
अमरस अनबन भाति अँचारा कहत न बने जेत परकारा।

लोन समासा माठ मधु, खीर खाँड बहुताइ।
ना सवाद नहिं आनई पहिलेहिं खाना खाइ ॥ ५२३ ॥

बाँटि सगौती बहु फर साजे, पान फूल तेहि संग बिराजे।
खात सवाद सोई पहिचानी मानहुँ चौरि डार हुत आनी ॥
औ बिपरीत स्वाद बहुताई आब माहँ कटहर कि मिठाई।
नेबू नान दाख जनु खाहीं, खात खजूर बदाम चबाहीं ॥

१—एक तमाशा। २—एक क्षुद्र जाति जो पत्तल बनाते हैं और खाने पर जूठा पत्तल उठाते हैं। (क) पुनि जेवन कहँ पाहुन आए। पागा तजि धोता पहिराये—पाठा।

पुनि सवाद मिसरिन बहु की ह स्वान सो जानहिँ जाहिँ नहि चीन्हे ॥
कोऊ एक मुख मलि जा खाहीँ घरी एक दुइ समुझत आहीँ ॥
सुनि कै फिरि जेवनार उसारी पनगी जूठ समट बारी ।
अरुन कोल नीलोत्पल फूलि रह सब बार ।
॥ठनवारन तेँ निकसि भार कहिँ ॥आर ॥ २८ ॥

भरि भरि थार मिठाई आनी भाँति भाँति अब अन पानी ।
लडुआ कर का करौं बखाना , हाथ खाँड मुह महँ खँडराना ॥
खाजा[1] फैसेहुँ खाइ न जाइ सास पान सौं उडि उडि आई ।
फेनि[2] पातरि मुँह न समाई टाक दे एक जोखँह लुआई ॥
सीँक समान जिलेबी काढी रस रस भीजि अधिक रस बाढी ।
एहि मिठास जनि भूलहु कोई जौ मधु एक ठाँव बिष होई ॥
तौ लहुँ माठ जौ लाँघ न घाटी घाटी उतरि होइ पुनि(क) माटी ।
मान न जाती आन बिनु खीर खाड तन पोख ।
नहिँ जानौ परलोक तुम होइहै केहि बिधि मोख ॥ ५२५ ॥

अँचै उठे खरिका कर लिन्हे हाथ धोआइ पान पुनि दीन्हे ।
चित्रसेन बागा मँगवाये बड औ छोट सो पहिराये ॥
चोवा चन्दन कुमकुम लावा इद्रहिँ देखि चाउ हिय आवा ।
नृप कर जोरे बिनती करई फिरि फिरि महन पाउँ ल परई ॥
तुम सब आपनि जानि बडाई मोँ औगुन सब लेब छिपाई ।
जेँइ भोज जनवाँस सिधाए चित्रसेन तब बिप्र पठाए ॥
बहु आदर कै कुँअर बुलावा , आनि सो माँडो तर बसावा ।
माँडो देखत ही बनै रसना कहा न जाय ।
कै जो व्याहा जान सो कै जो बरानहिँ जाइ ॥ ५२६ ॥

१—एक मिठाइ । २—एक मिठाइ । (क) सव—पाठा ।
३—मि चित्र स कमल मुच्चे य पञ्चयाभकारणात ।

अतिहिं अपूरब माँडो छावा जरकसि पाट पटम्बर लावा।
कनक खंभ जनु बीच सुमेरा चौरी दिष्टि ताहि जो हेरा॥
आँब पात दल अनुज करा बंदनवार कीन्ह चहुँ फेरा।
मंडल के दीपक पुनि बार छिटकि रहे मानहुँ ससि तारे॥
दिष्टि फिराइ दच्छि जो लेहीं नखत सुमर पदच्छिन¹ देहीं।
कलस बनाइ खम्भ तर धारा तहि पर चौमुख दीपक बारा॥
चारिहुँ दिस दीपक जग भाई पहीं सगुन दुहूँ जिय पाई।

धरउ जराऊ बेदि ले चहुँ दिस अतरधालि² ।
बहु आदर सौं कुंअर कहँ तहँ बैसारेउ आलि॥ ५२७॥

चित्रसेन परिवार कि बारी जनु चित्रने अछरा सोनारी।
काँधा बाहीं सब एक दाईं मिलि कै कुअरहिं देखन आईं॥
मंडल के दुहुँ दिस त गारा भईं ठाढ़ि मुख सा मुख जारी।
कलपब्रक्ष जनु कुँअरहिं चीन्हा सब के बारि देखनह कीन्हा।
असिरित अधर महाँ लै सींचा देखत निरख न आव माचा॥
लोयन कोर कोर पुनि मेले चारी चारी खजन खेले(क)।
देव कँवल जब पुहुप ऊतारा, दूसर बन्दनवार सँवारा॥

करनफूल गज मुकता सोभत कानन जोर।
कंज सेत जनु विकसि कै मानि भरे चहुँ धार॥ ५२८॥

गुर आनि बाभन बेदुआई होम जाप कहँ अगिन जराई।
कुँअर नैन दोउ चकित चकोरा पून इंदु ऊये केहि ओरा॥
जउँ जउँ पल जाइ निसि बासी मंदिल होइ कुँअर कहँ फाँसी।
सुभग मुहूरत आइ तुलानो नौ सत कै चित्रावलि आनो॥
दिनकर उदै मेटि तम गयऊ ससि मंडल तारा गन भयऊ।

१—स प्रदच्छिणा। २—अतरधार=वह निछावन जो चादनी के नीचे निछाया जाय। (क) चारी चारी खंजन खेल। पाठा।

पढा वेद बाभन हुँतआइ चित्रावली सुजानहिं लाइ ॥
ततखन आन कीन्ह गँ० जोरा बंधन सो जो छूट न जोरा ।

अउँ जउँ फरी देहिं निज होइ अधिक अरुझेरि ।
दिढ़ बंधन निज एक है मार अमिर गाँठरि ॥ २९ ॥

पुनि चित्रावलि चोसर हारा सकुचा कुँअर गाँव ले डारा ।
कुँअरहि ले पुनि हार सुहावा चित्रावलि गिंव पहिरावा ॥
प्रेम खेल खेलत दिन बीते दाऊ खेलार हार दै जीते ।
चित्रसेन पुनि ले कुम्भ पानी सकल्पी धिय सब जग जानी ॥
कुँअर बोलि पुनि स्वस्ति सुनाए तीनि ठेक भय अनँद बधाए ।
कोहबर सेज सुरग पुनि डासी सुखसाला कविलास बिलासी ॥
कुँअरहिं तहा सखी ले गईं हँसतहिं हँसत अनन्दित भईं ।

कहहिं कि बेसहु सेज चढ़ि छिन एक रहहु अकेल ।
हम आनी चित्रावली करहु रहास सुख केल ॥ ३० ॥

कुँअरहि सेज सुरँग बसाई चित्रावलि पहँ गईं सबाई ।
आस पास सब घरें अलीं सुंदरि कहँ कोहबर ले चलीं ॥
प्रथम समागम बाला डरई कसहुँ आग पाव न धरई ।
चित्रावलि जनु गज मतवारी ढुकावलं घट झनकारी ॥
आँकु[1] सकुचि पाव टुहुँ धरा पगगहिं परग नाइ अरगरा ।
छलि आनिन्ह अँधिआरी[2] मला धकारहिं गडदार सल्ला ॥
कल बल गई सेज जहँ अहा पाटी तीर टाढ होइ रहा ।

चित बहलावहिं निज सखी बा समुझावहिं सार ।
सेज सुरग जहँ चढ़ि बट त्रिविनि छुन न हार ॥ ३१ ॥

१—एक कान का बना हुआ हाथी का बंधन जिसमें काँटे लगे रहते हैं। इससे मतवाला हाथी बाँधा जाता है। यहाँ मत्तहाथी। — कावर।
२—अस्त्र बंद करने का आवरण। ढाका।

पुनि सखियाँ सब एकमत भईं ले बेसाय सेज पर गईं।
चित्रावलि पुनि जी हठ पैसी, पीठ दिये घूँघट कै बसी॥
कुँअर कहा हे परम सनेही, केहि कारन घूँघट अब देई।
मुख देखाउ कहु बतियाँ मीठी काह करसि हिया जस सीठी॥
जेहि लगि कइउ(क) जनम दुख सहीं सो कैसे निठुराई गही।
जाहि लागि काया नित नई सो दुखर दुखदायक भई॥
जो अस कठिन हिया भा तोरा, ता अस भयो हाल सब मोरा।

हारेउँ प्रेम अँदोर जग तोर मया क काज।
जो तोर हिया दया बिना जनम अमिरथा आज॥ ५३२॥

यह बिनती कै रहेउ सुजाना चित्रिनि कटी न एको माना।
तब उठि कुँअर भुजा कर गहा, झिझकि हाथ चित्रावलि कहा॥
गहु न हाथ रे बावर जोगी तासों लागु होइ तोर जागी।
जाके छाँह छुए नहिं पावसि एकहि बार हाथ किमि लावसि॥
कस चकोर अस करै ढिठाई बिहँसे सरग सेज ससि जाई।
तू भिखारि हौ राजा बारी राज भिखारिहिं कौन चिन्हारी॥
जो कै कीन्ह भँवर कै माना यह परगट यह अँतर सयाना।

बागी बारी दोऊ भनेउ अथिर हियें न प्रीति।
जोगी भौंरा के जुगुति केहि सों कवन परतीति॥ ५३३॥

जो मधुकर अनुज रस पीए मालति नेह न राखै हीए।
जस अभर ओ कपटी हीआ नागेसर रस चाहे पीआ॥
कपट रूप गुंजार सुनाई ओनहि प्रेम सो नहिं पतियाई।
जोगी सोउ जो सेज अनूपा जोगी नाहिं आहि बहुरूपा॥
जोगी जो घर घर परसादी जोगी नाहिं आहि रसबादी।
जोगी जो घरबारी होई जोगी नाहिं कुटीचर सोई॥
तोर मन भौंग अनुज हीए लोक छरसि धधारी दीए।

(क) काऊ पाठ।

तुम्र सँग सुन्दरि नारि एक परगट सूझ मांहिं ।
रूप सलोना आपना काह देखगों ताहि ॥ ३४ ॥

कुँअर कहा सुनु राजकुमारी हों राजा तोहिं लागि भीखारी ।
मैं खप्पर ले तौर बारा आसन दरसन भीखि अधारा ॥
त सो भिख खप्पर ले आवहि आपन बार की साध नसावहि(क) ।
हिय चखु रूप रसन तुम्र नाऊँ आन समाइ कहु कहि ठाऊँ ॥
बाँधि जो लइ काम कर खोजू जो मन होइ ना पाउँ मनोजू ।
मन राखे तें अपने बारा छूँछो कया फिर ससारा ॥
देखहु पठि ढूँढि मोर होया सूरज आगे जाति न दीया ।

आहि अनूपम काम बन छुइ न सकों तुम्र साथ ।
हिरदय पर परतछ सिव कहु ता राखौं हाथ ॥ ५३५ ॥

कुँअर सपत कामिनि मन माना सिभु सपति बाचा परमाना ।
रही धक हवर समुझाई लै सुजान तब अक मैं लाई ॥
घूँघुट खोलि रूप अस देखा सो देखा जहि सीस सुरेखा ।
अधर घूँट सो अमिरित पीआ जेहि के पिअन अमर भा हीया ॥
राहु गरास कलानिधि कॉपा लायन पल आनन पट झाँपा ।
पुनि मनमथ रति फागु सँवारी खोलि अछूत कनक पिचकारी ॥
रंग गुलाल दोऊ ले भर राम राम तन माती झर ।

सेद[1] थभ[2] रोमच तन आसु पतन जुरभग ।
प्रथम समागम जो किये सितल भा सब अग ॥ ५३६ ॥

दिन कर उदय होन परभाता, आयो कुँअर जहाँ बरिआता ।
सुखसाला सखिओं मिलि गईं, सेज बिलोकि अनंदित भईं ॥
चित्रावलि करि पाउँ अहारी परी बिसुध जानहु मतवारी ।

(क) त सो भिख खपर लै जाय । आन बार का साध नसाय । पाठा ।

१—स्वेद । २—स्तम्भ ।

उधरसि माग अलकावलि छूटी, बेनी खुली बली कर फूटी ॥
सखी एक हीरा पहँ आई बिकसे अधर दसन चमकाई।
कहिसि कि आइ देखु धिय साजा माहिँ कहन आव मुख लाजा ॥
रानी आइ देखि मुसुकाई, माँग चूमि चित्रिनी जगाई।

कहिसि कि उन लिन धन भरी धनि माथा धनि भाग।
नैन सिराने निरखि कै चित्रावलि के भाग ॥ ५२७ ॥

हैं सखियन बाला अन्हवाई, चित्र ऐगि तो सात बनाई।
चित्रसेन पुनि सभा बईठा लिखै लाग दायज कर चीठा ॥
हाथी घोड़ हिरा नग जाती रतन पदारथ मानिक माती।
पाटम्बर जरकसी पाँवरी खाँडा मूँठि जराऊ जरी ॥
हडा गगरा थार अपारा सोन रुप के गे[1] डुआ[2] थारा।
जो देखी सो अगिनित दीन्हा धनि सो पिता जिन यह जस लीन्हा ॥
राजनीति कर चीठी दीन्हा धा गहि पाँय बीनती कीन्ही।

राज पाट धन देस सब मोर कुँअर कर जान।
नासों कहा विवेक[1] कछु आ कहँ दीन्ह परान ॥ ५२८ ॥

(३६) कुटी चर दहन खड।

महत चला ले दायज साजा बहु दिस दुद दान कर बाजा।
भाँट कलावत सब पहिराए, दान देइ कर बिदा कराए ॥
निगुनी गुनी भिखारी नेगा दै दै सब पहिराए देगी।
बाजत गाजत घर ले आवा आँगन गै पुनि नाच बधावा ॥
नाच कुद पुनि महरिन कीन्हा, जोहि जस लाग नाहि तस दीन्हा।
उहाँ महन घर भाइ बधाई इहाँ सखिन्ह चित्रिनी बनाई ॥
उँच धुराहर जनु कबिलासा, तहाँ कुँअर कहँ दीन्ह निवासा।

१—मद। २—डुबा।

राम सभा अभिराम सुख छलि क गई लेवाइ ।
रति कामा जगमगी देखन सेज डराइ ॥ ५९ ॥

गहि क कुँअरि सेज बसाई अति बिहबर क अंक मँ लाई ।
तिया बिनित सँकानी चाही रुख हा सुख मगाइ मन ली नै ॥
तब चित्रावलि बचन उभासा पेसाई दुहुँ जग तुम आसा ॥
कहहु माहिँ अब बात सुहाई कहि आगुन माहि की ह अदाइ[1] ।
कौन रूप मोर आगुन हरा जेहिँ देखन तुम ख मुँह फरा ॥
मोर नन मघ झरि लावा तुम दहुँ कहाँ जाइ घर छावा ।
हौं अकसर जाडा तन काँपी तुम दहुँ कौन नारि उर चाँपी ॥

हाँ बिरहिन रवि नैन जरि कोइला भइ जुराइ ।
तुम कहुँ सुंदरि पलि गहि परबा भूले जाइ ॥ ८० ॥

सुनि कै कुँअर साँस उर काढा कहिसि कि ऐ सुन्दरि दुख डाढी ।
जो हम करत जीउ तन सूना तू जानति हम प्रेम बिहूना ॥
तुम्हरे गाँव काहु धारावा, नन खोइ दवि पार अडाया ।
कहिसि कि तुम्ह कारन हम आखी भई सूर लगि गारुर पाँखी ॥
पिरम बरि जिउ मारिसि नाहीँ बिरह खाह डारिसि गहि बाहीँ ।
साँप लीलि हौं उगलि अँहारा रच्छक प्रेम निजहिँ का मारा ।
जो तुम्ह रूप रहा चखु माहीँ पायाँ नेन जाति पुनि ताहीँ ॥

राजपखि कुअल कथा सागर गढ क बयान[2] ।
बर बिआह पुनि कौंल कर एक एक कीन्ह बखान ॥५४१॥

चित्रावलि चित उपजी दाया सुनि दुख अगसाइँ भइ काया ।
मनहिँ कहिसि यह बैरी काई बिना कुटीचर आन न होई ॥
जो अस कौंल प्रेम उरुझेरा अत भौंर के लेइ बसेरा ।
अब सो करों जहि भौंर लोभाई, मालति छाडि न सरवर जाई ॥
कहिसि कि जा अस दुख चित सहई, सोइ कबिलास राज ल रहई(क) ।

१—अनाथ । २—बयान । (क) करइ । पाठा ।

मों उर निकट बैठि अस साईं भूजइ[1] राज इन्द्र कै नाईं ॥
नैन कुरङ्ग गौन गज साजा दल कटाच्छपहि आनि विराजा।
नौबति कटि छुद्रावली धुज अञ्चल फहराइ।
पूरन सेवा जो करै सो अस राज कराइ ॥ ५४२ ॥

भोरहिं चित्रलि जन दौराया कुटिल कुटीचर बाँधि मँगावा।
अज्ञा चरिन आनि सुनाई अगिनकुंड लै डारहु जाई ॥
परम दोष जासों कछु होई नाहि कंड ल डारहिं सोई।
निसि दिन उठै अगिन की कला घोर अगिन जहि आगें जरा[2] ॥
बाँधि कुटीचर तहँ लै डारा पाप मल सों भूमि उबारा।
देखै लोग कुटीचर जरई मन पाप माथे अस परई ॥
जे देखा तिन चखु पल झापी परम पाप बैसन्दर कॉपी।
मान अजहुँ तजु ज्ञान कै पाप आ बध विचारि।
नाहिं तो बहुरि विचार नहिं घोर अगिन के बारि ॥ ५४३ ॥

चैरिहिं अगिनकुंड महँ मली करहिं दाउ निसि दिन सुख केली।
कुँअरि पाइ धनि मलय सरीरा लइ लइ छाती करै समीरा ॥
कोलहि जानि भौर सँग लटा चित्रावलि जिय खरक काँटा।
बरजी सखी सहेली सोई सेज कौंल दरसो जनि कोई ॥
औ पुनि कहहिं जो भौर गाउँ रहे न सरवर कौंल क नाउँ।
औ जो कौंल कहै मुँह भाखी आपन नाउँ सो मिरतक राखी ॥
रस पडित मुख नाउँ जो लेई अँबुज निरज बारिज कहि देई।
कौंल चितेरा जो लिखै, ततखन कलपै हत्थ।
मुख परगासै नाउँ जो रसना खोउ अकत्थ ॥ ५४४ ॥

पुनि पथ पुनि जन बैसावा, सागर नगर जो जन काऊ आवा।
छोरि छीनि कागद सब लेहीं, तबहिं देस पैसारी देहीं ॥

१—भागा। २—ज्वाला। ३—कलम कागद।

एहि बिधि राकि पथ सब राखा सरवर रहउ न अँबुज साखा।
चित्रावलि चित के चतुराई सालि डाह हिय हुतें मिटाई॥
जते सुख सुदुमी बिधि दीन्हें तेते दुहूँ बिलसि जिय लीन्हे।
रंगनाथ पाडे मति बरना चित्रावलि के पाठ सग परना॥
सतति[१] संग कुँअर कै रहई नरक बास रस कथा जो कहई।
कुँअरहिं भूला आर सब रहा दुई सधान।
चित्रावलि कर प्रेम हिय रंगनाथ की बात॥ ४५॥

(४०) हंस खण्ड।

कौलावती नारि पर घटा बाढ़ी अगिन सीस जनु जटा।
दिवस उसास पवन अधिकावे रैनि कलानिधि विउ बरसावे॥
ता ऊपर पुनि मनमथ दानी[२] अति जिय त्रास रहे कहि पानी।
बचन एक कहि गयेउ जो पीऊ ताहि अधार रह घट जीऊ॥
डरे अकेली मंदिल सूना सब जग सूना एक बिहूना।
बिरह समुद्र अथाह देखावा आधि तीर कहुँ दिष्टि न आवा॥
सुरति समीरन लहरें लेइ बूडत कोऊ न धीरज देई।
साईं सबिता बाहरें रहउ कौल कुम्हिलाइ।
भोर भौंर तन प्रान भा, निकस कहँ अकुलाइ॥ ४६॥
रूप नगर कर एक बनिजारा सागर नगर बनिज लै हारा।
कौलावति सुनि व्याकुल भई भस फेरि क पूँछन गई॥
कहिसि कि हौं कौलावति दासी, पिय गौने दहुँ कौंल कलासी।
पूछे समाचार तेहि केरा मोर भौंर जहि लीन्ह बसेरा॥
कुँअर जो गया एक होइ जोगी चित्रसेन धिय बिरह बियोगी।
कसा कि नाहिं कसौटी सोना भा बिआह की अबहीं होना॥
सुनि बनजारै कथा सोहाई(क), आदि अंत लहु बकति सुनाई।

१—म,तत = निरन्तर। २—दु ख दिया। ३—क्रिया। (क) सवाद। पाठा। ४—उत्ति, कथा।

जैसे दलगञ्जन हना औ पुनि भयो बियाह।
या मानहिं सुख केलि जिमि खोइ दुद औ दाह ॥ ५४७ ॥

कौल दाह जिमि चित्रिनि नारी कौल बलि जारे मुरि उपारी।
कहै न काऊ कौल मुख माखी औ जिमि बाट रोकि कै राखो ॥
सो थे सब पुनि कहिसि बखानी कौल नैन आए भरि पानी।
मन महँ कहिसि कठिन भा काजा बैरिन साति कुफुन[1] उपराजा ॥
महँ राखिस पिय मोर छिपाई जहाँ सँदेस न पहुँचै आई।
मन्दिर उठि आइ दुख दही, सबै कथा साथिन सौं कही ॥
को अस मया मरोही अहई छलि कै पिया मोर ल कहई (क)।
हौं निज बिसरी कम कहँ तो छाडी सब भीर।
एक बार बिधि चित चहौं जेहि ब्यापै मम पीर ॥ ५४८ ॥

हस सिसिर गुन केर निधाना चौदह बिद्या पन्न सुजाना।
रसबिद्या कहँ पीर न पावा कौलावति कै बिरह सँतावा ॥
कहिसि कि ह सुन्दरि दुखियारी तोर दुख जिय भयों दुखारी।
पेज बाँधि गौनों वहि देसा लै पहुचावों तोर सँदेसा ॥
आ जोगी कुँअरहिं लै आऊँ हस मिसिर तो नाउँ कहाऊँ।
सुनि कै कौरु पाउँ ले परी, कहिसि कि अब अलि बिलँबहु घरी॥
हिअ गह बरै कहत नहि आवै सो कहिए जा तुमहिं जिय भावै।
जहँ उनई सावन घटा, जाहि चाह सो लेइ।
हस चला तजि मानसर, कौलहिं धीरज देइ ॥ ५४९ ॥

रूपनगर गै हस पहुँचा, देखेसि राज इन्द्र हुन ऊँचा।
एकसर भँवे न कोऊ साथी खोजै बिद्या बिद्यारथी ॥
पँडितन पास जाइ ल बानी बिद्या देखि होइँ सो पानी।

---

[1]—फा कुफ्त = मानसिक पीडा जलन।

(क) काउ नाहीं अस बधू माहीं कहि दुख कथा सुनावे तोहीं। पाठा ।

दिन दुइ माहँ अँदोर बढावा रूपनगर एक पंडित आवा ॥
विद्या जान जहाँ लगि अहई काम सासतर कंठ कहई ।
पंडित बात कुँअर पुनि सुनी बाभन एक आउ बहुगुनी ॥
ततखन पंडित निअर बुलावा तहनन काम सासतर भावा ।

आया पंडित रहसि सों देखेसि बदन अनूप ।
मन महँ कहिसि कि आह यह निजु मकरद्धुज भूप ॥ ५० ॥

---

(४१) काम शास्त्र खण्ड ।

पंडित बैठा देइ असीसा रस रस पूँछ विद्या ईसा ।
काम-सासतर तुम्ह जो जाना हम आगे सब करहु बखाना ॥
पंडित बैठेउ आप सँभारी कहिसि कुँअर सुनु बात हमारी ।
जबलगि सुरति नारि नहिँ होई तब लगि रस परगास न होई ॥
रसविद्या मकरद्धज बाना पाँच होइ सो सुनो सुजाना ।
जे यह ग्यान सौंह होइ खावा एहि जग जिअन अमर पद पावा ॥
धनि सो धन धनि पुरुष सुजाना धनि विद्या धनि ग्यान सो बाना ।

सुनहु कुँअर चित कान दै रस-कथा अभिराम ।
पहिले बरनौं चारि तिय ता पाछे रति काम ॥ ५१ ॥

काम भेद जो जानै कोई दंपति सेज महा सुख होई ।
रंग अनेक(क) जान जो पीऊ, तिय तन कहाँ समर[२] ल जीऊ ॥
काम भेउ बिनु माँगै रंगा जस पसु करै पसु सो संगा ।
एहि जग माहँ एक रस सारा रस बिनु छूछ सकल संसारा ॥
रस बिनु आम न पंछी खाई, रस बिनु ऊखहिँ देहिँ जराई ।

१—कामदेव । २—स्मर = कामदेव । (क) अंग अनंग, पाठा ।

रस कहँ भौंरा भँवे भुलाना बिनु रस दादुर कौंल न जाना ॥
बिनु रस अवनि जनम जे पावा सूने घर जस पाहुन आवा।

मान जाय सोइ प्रेम रस जो बस नैन पसार।
नेह निहारै जगत महँ केलि कुरगिनि सार ॥ ५५२ ॥

सुनहु पदुमिनी कर बखाना आनन पूरन इन्दु समाना।
हेम कँवल तन सुन्दरताई फूल सरीख गाम कुँवराई[1] ॥
चित्रा[2] सारँग सायक नैनी, सुक नासिक मराल सुभ गैनी।
कुच उतग मासल[3] बरनारी पिक बैनी रबा लहकारी ॥
पुहुप सराज बास तन बामा, लज्जावति मानति बिसरामा।
तीनि रेख कटि त्रिबली बनी हसमुखी यो अलपासनी[4] ॥
बान नाभि रन मन मथ चाला सेत बसन रुचि सुन्दर काला।

देव पुजन री रुचि हिए औ सब उत्तिम बान।
उत्तिम नारिन्ह माहँ पुनि सो पदुमिनी बखान ॥ ५ ३ ॥

नेन चपल पुनि चित्रिनि नारी पातर मुख औ अलप अहारी।
मोट न पातरि बीचहिं(क) बनी जेहि घर होइ पुरुख सो धनी ॥
अति कटि छीन मृदुल पुनि होई सबद मँजोर कठ सुर होई।
सुभग नितब पयोहर[5] खीना कमिनि सुबर बजावै बीना ॥
चित्र लिखै चतुराई करई सुन्दर बचन सेज मन हरई।
छोट बडे सो मया अनावे स्याम चिहुर[6] सिर भौंर न पाव ॥
अलप काम जल। मद।की आसा अलप रोम तन काम निवासा।

सु दर अधा पातरी अछवाई पुनि चाउ।
अग बास पै अधिक हे चित्रिनि माहँ सुभाउ ॥ ५५४ ॥

कहौं सखिनी क गुन राऊ दिरघ बाह औ दीरघ पाऊँ।
कुटिल नेन तन बरन मँजारि तरहुँड[7] किए रहे सिर नारी ॥

१—कामलाइ = कामलता। २—चित्रसार मृग। ३—गुदार = मांस। ४—कम खान वाला। (क) मध्यहूँ = मांस। ५—पयोहर = स्तन। ६—चमकीला। ७—नीचे।

सास न घने न विहरे[1] बारा चल उनावलि बहुत अहारा।
अरुन बसन रुचि औ कँठ माला सतत बर देह जनु ज्वाला॥
चचलि व्याकुलि काम सँताइ चलत सेज नख छाती लाइ।
कुच अग करि लागी नारि कपनी काँपी लाज जागि॥
अति बिगध जल काम बसाई गरब महा बचन करुआइ।

दयाहीन हिय कठिन अति काम कर पुनि राइ।
जेहि घर ऐसी नारि गइ कत दुरिन नित हाइ॥ १॥

नारि हस्तिनी आनहु सोई हस्तिनि क गुन जा मह होई।
मोटि देह कुतल पिअराई हस्ती मद जल काम बसाई॥
कूरागा पुनि कपट लपटा[2] पाँउँ न सुन्दर आँगुरि टेढ़ी।
मद गौन चखु लाज न गहई काँध नवाए निसि दिन रहई॥
बहु भोजन औ बहु जल कामा गटपट मिले सेज पर बामा।
अधर थूल[3] औ गद्गद भाषा, अकुस दिये रहे सो राखा॥
जस कछु अहे बेद अनुमाना चारि नारि गुन कहेउँ सुजाना।

बरतमान अब जगत महँ मिस्रित गुन रसवन्त।
बरनत बड़ बिस्तार हाइ चीन्हि लेहि बुधिवन्त॥ १ ६॥

सनहु कहौं अब तिथि परमाना जहि ते सेज रवन सुख माना।
परिवा दुइजि सोधि तिथि पाई पदुमिनि कह पचमि सुखदाइ॥
आठ पहर रजनी पिउ राव पदुमिनि सेज महा सुख पाये।
छठि अठई द्वादसि औ दसा चित्रिनि क चित प तिथि बसा॥
प्रथम पहर जो पिउ रति करइ सेज समय चित्रिनि चित हरई।
सपत चतुरदस एकादसी तीनों तिथि सखिनि उर बसी॥
तीसर पहर रैनि रति माना करे बसन[5] जो हाइ सुजाना।

१—स रिल। २—लपेटी। ३—स्थूल = मोटा।
४—रमे। ५—व्यसन समाग।

नवमी तीजि तिरोदसी पद्रह तिथि सुख पाउ।
मदन आउ दोपहर दिन हस्तिनि कह रति चाउ ॥ ५७ ॥

अब सुनु कहा जोग नर नारी रसिक जानु यह बात रसारी।
जोगहिँ जाग मिले जो आई अति आनन्द महा सुखदाई॥
मेहरिन मदन ठाँउ कम होइ बिनु रति जोग कुठाहर[१] सोई।
जोग न मिल होइ सुख हानी मत कम कहँ तज परानी॥
जा कुलीन होइ हेतु न राखै, नाहिँ तो जाइ आन फर चाखै।
तीन जाति बिधि तिया सँवारी हरिनी[२] असुनी[४] करिनी[५] नारी॥
तीनि भाँति बिधि नर उपराजा सस्सा वृषभ औ तुरँ[६] बिराजा।

पहिल एक एक कर कहौं जाति पाँति बेवहार।
ता पाछे कहि देउँ सब जोग बियोग बिचार॥ ८॥

ससा सरूप सुनहु नरनाहा उत्तिम जाति सो पुरुषन्ह माँहाँ।
मुख पातर नन सुन्दरताई दसन छोट पुनि कन्तुक मेटाइ॥
कोमल निठुर सीस नहि घने हाथ पाउँ जथा सब बने।
दीरघ चक्षु सूछम करिधनी[७] अलपरती औ अल्पासनी॥
अति गभीर महा सुखदाई, बेठन उठन अधिक गरुआई।
बास सुगन्ध मदनजल आव भृग नेनी ताह सँग सुख पाव॥
भोजन अधिक दूध रुचि होई दस महँ पुरुष एक अस होई।

मदनाकुस[९] रसनद[१०] मत षट अगुल परिमान।
इह परकीरति[११] जा पुरुष सोई ससा बखान॥ ५९॥

२ स्छन विरिध कहौं सुनु राऊ थोर लाँब भुज बल व्यवसाऊ।
नारग लोयन कारे रात बरन असेत जनहुँ मदमाते॥

१—कुठार कुठाँव। —हितार प्रेम। ३—मृगी। ४—घड़वा।
५—हस्तिनी। —अ । वात्स्यायनकृत कामशास्त्र। ७—कमर।
८—[illegible]। ९—लिंग —कामशास्त्र। ११—प्रकृति स्वभाव, लक्षण।

मन्द गॅवन अस्थिर नन गाऊ जह रुठ नह उठे न भाऊ।
अरुन हथरिनि[1] पीत गररा सेज मान जा नखउत बेरा॥
एहि गुन पुरुष रूप पहिचाना नव अगुल अकुस[2] परिमाना।
मध्यम विरिख पुरुष जग होई उत्तम सोई जा चीन्ह गाई॥
औ उत्तम जो कहि समुझाव उत्तम रसिक सतन सुरय पाव।
 अस्थिर लोयन कारन अइसी सो रति चाव।
 अब आगे सुनि कान दे गुन तुरग के भाव॥ ५६० ॥

गुन तुरग सब कहौं सुजाना लिग अदिन अगुल परिमाना।
दीरघ अगुल दीरघ बाहीं दीरघ दसन तुरे मुख माहीं॥
लॉब मोलि सिर केस सुहाये सदन नेन बिसम्हारि पियाय।
टेढ जघ नख करवुद[3] टेढा, सीस पाय लहुँ कार लरेना॥
पातुर लौभी अधिक ढिठाई, मन्मथजल[4] बिरगिन्ध बसाई।
नींद अधिक चचल गति पावे इसी रति लालस दहकार॥
लॉब गीवॅ अरु अस्थुल नेना बदन लॉब लज्जा हत हेना।
 पुरुष जान पहचान यह एहि गुन भाग विचारि।
 अब निरखल[6] के बरनबउॅ तीनि भाँति पर नारि॥ ५६१ ॥

अब सुनु हरिनी कर बखाना मन चित हरिनी साई सुजाना।
कुटिल केस सोस सम घने तनबी[7] कुच अनग उर बने॥
अबुज नयन भॅवर हिय मोहा, नासिक अल्प छिद्र मुख साहा।
चचल भुजा बैन पिक कहे सेज समय नहिं इस्थिर रहै॥
अधर अरुन जनु पुज निवारी गज गवनी अपुरुब वर नारी।
मदन जला जनु कॅवल बसाई अल्प असन निनब समताई॥
सुघर पाय औ कर सुकुमारी कामल नख तेज जेउनारी।

१—गदोरी, हथेली। २—मदनांकुश = लिंग। ३—नखमण्डल।
४—वीर्य। ५—दुर्गंधि। ६—निरखना = परखना। ७—कृशांगी।

कामागार गरथ मन रस अगुल परमान।
यह परकीरति वेठि गुनु हरिनी आनु सुजान ॥ ५६२ ॥

दूज कहौं अस्वनी नारि बिरिख पुरुष की नारि पियारी।
घने बार सिर डीठि तरोही पलक मोट पुनि बरन हथौहीँ ॥
नील कँवल सम लोचन झाता अरु न कँवल जिनु करवुद राता।
लाब बदन औ कोमल देहा सभर[1] नितम्ब पयोहर जेहा ॥
लाबी गीवँ भुजन सहराय सुभगवती हिरदै डर खाय।
यह केहरि किरोधती नारी खीर खाँड रुचे नीँद पियारी ॥
काँख राम बहु औ मद जला करै रोज चितुराई कला।

नव अगुल परमान पुनि मकरध्वज भडार।
पहि परकीरति आनही असुनी के बेवहार ॥ ५६३ ॥

हस्तिनि क गुन कहौं सभाई बहु भाजन मन पाप बसाई।
थूल हाथ भा दोऊ बाहीँ सील लाज नहिँ आँखिन माहीँ ॥
ओंठ लाँब औ तीछन दाँती सतति रहे काम मदमाती।
सबल देखि नैन पिअराई मद गयद अल काम बसाई ॥
सुर गँभीर सीहिनि उर लाँबा रात देह जनहुँ दुति ताँबा।
कप्रहिँ हाइ सेज रति दानी मदन भँडार बहै नित पानी ॥
कामगार मिति अगुल भाना हस्तिनि क गुन सुनहु सुजाना।

जाति भाँति सब मेँ कही जेहि जस आह सुभाउ।
अब जासौं सुख सेज रति सोऊ कहौं सुनु राउ ॥ ५६४ ॥

पाँच भाति रति जोग सुजाना, ऊँच नीच सम जोग बखाना।
भा अनि ऊँच नीच अति होइ[2], बिनु रस रसिक न जान काई ॥
जहँ सम जोग तहाँ हित प्राता सतत जनम हत महँ बाना।
ऊँच नीच दोउ एक सम भाँती एक जिअ दुखी एक नहिँ साँती ॥

[1]—भारी।

[2]—रति सयाग क पाच भद ऊच नीच सम अति उच अति नाच।

जहँ अति ऊच कि अति होइ नीचा सग न सह सहे अरु मीचा[1] ।
करहिँ तिय तिल अङ्गुलि देई आग ढूँढि सम जागिहिँ लई ॥
एहि कारन जग महँ अति पापा कामदेव साइ दीन्ह सरापा ।

अब लहुँ मैँ सखा कही सब कहँ बूझि न जाइ ।
सुनहु रसिक रस कान दे कहाँ सब बिलगाइ[2] ॥ ८ ॥

हरनी ससा जाग सम अहहीँ दंपति सदा सज सुख लहहीँ ।
असुनी वृषभ जोग सम आवा एहि दोउ मिलि सतत सुख पावा ॥
सम जागा हस्तिनी तुरगा दाऊ सज चहि मानहि रगा ।
हरनी वृषहिँ ऊँच रति होई असुनो अस्व उँच पुनि साइ ॥
असुनी ससा नीच कै जानहु हस्तिनि तुषहिँ नीच रति मानहु ।
अनिहिँ उँच तुर हरिनो रसा अतिहिँ नीच हास्तनि या मसा ॥
ऊँच नीच लगि बुद्धि बिचारी, जहिते होय बस बरनारी। (क)।

काम गौन जहि विधि करै नर नारी के गात ।
सो सब कहौं बखानि कै सुनहु रसिक यह बात ॥ ५६६ ॥

चढे काम नर दाहिन अगा आपे अग नारि पर सगा ।
सुकुल पछ परिया जब आवा आंग्रे काम अँगूठा पावा ॥
परिवा दुइजि तीजि बस फाली गहे चोथि क जाँघ रखाली ।
पँचमी बसे मदन की ठाउँ षष्ठा बरा नितँब उनि नाऊँ ॥
नाभी रहे सतमा मदना अठएँ बसे आइ उर सदना ।
नौमी बस मेन कुच माहीँ दसमी आव काख तराहीँ ॥
एकादसी गाल महँ आव द्वादसि काम कपोल समाव ।

तेरसि आव अधर पर बस चतुरदसि नन ।
जहि दिन पूरन चन्द्रमा रहै माँग चढि मन ॥ ६७ ॥

१—मृत्यु । २—पृथक पृथक विवरण करके ।

(क) अन सुनु राजा कहा हमारा । निहचै कहा बचन ना मारा । अधिक ।

कृष्ण पच्छ परिवा रह माँगा, पुनि उतर होइ दाहिन आँगा।
जसे बाएँ चढै अनगा तैस उतरै दाहिन अगा॥
जौ लहु योनि खलित नहिं होई तो लहु हिय सतोष न सोई।
माग नखच्छत चूमिय नना खेदन अधर बिमदन मना॥
रसिक कपोल कपोलहिं घसई जब कपोल मकरद्धुज बसई।
केलि काख अँगुरी लिखि लेई गहि कुच कठिन नखच्छत देई॥
उर सहराइ देइ नख नाहीं उलटे हाथ हन नाभी माहीं।

थोर सबै चुटकी गहे बसै भग जेहि काम।
निहचै मेन न थिर रहै होइ बस्य¹ पुनि बाम॥ ५६८॥

आदि सुरति जनि काम सतावहु यत करहु जातें सुख पावहु।
पहिलहिं जाइ काम तजि भगा, काकर सुख का कर रति रगा॥
मूरख सौं हम भेद छिपावें रसिक जानि रस आन सुनावें।
काम भेद कहि हस बताना नायक औ नायका बखाना॥
नौ रस के पुनि भेद सुनाए अभिनव भाव सबै सनुभाए।
सोरह हाउ भाव पचासा जेहि मौलवन माहँ नेवासा॥
जो एह भद कहीं कनुभाई, आन कथा एक लिखौं बनाई।

कहा थोर जेहि भाव बहु बूझहिं बूझनहार।
कहँ लगि बरनौं नायका नायक गुन बिस्तार॥ ५६९॥

---

(४१) चित्रावली गवन खड।

✓ हस मिसिर अस गुन परगसा कुँअर हिए भीतर होए बसा।
रगनाथ औ हस गियानी जनु गुरु सुक्र दोउ गुन ज्ञानी॥
कुँअर पास नित बैसे रहहीं उत्तम उकुति तरक पुनि कहहीं²।

१—वशाभूत। २—कहा।

एक दिन एक मधुप उडि आवा कुँअर कान गुञार सुनावा ॥
कुँअर कहा जो अलि गुञारा नाकर गुमा करा बिचारा ।
कहहिं कि अलि गुञार नरसा आनि सुनाउ कहँ क सँदेसा ॥
कुँअर कहा तुम पंडित दोऊ पूछों कहो समुझि जिय दोऊ ।

मधुप पिये मकरंद रस लिपि लिन कुसुम निवास ।
केहि कारन यह स्याम तन सतन भँव उदास ॥ ७० ॥

रंगनाथ पांडे सुनि बाला सुनहु कुँअर यह भेद अमोला ।
भौंर बिवेकी हस न होय मुहँ रस पिय कपट मन कीए ॥
पीये एक पुहुप जो रसा दूसर फूल रहै मन बसा ।
बारी बारी भँव अधीरा तेहि कागुन भा स्याम सरीरा ॥
चदहि जो चकोर मन लावा एक हत भा रंग सुहावा ।
तब उठि हंस कहा सुनु राऊ भौंर स्याम गुन कहौं सुभाऊ ।
सूर बिरह जो मनुज दही मधुकर तहाँ राति एक रही । (क)

पुहुप हेत मकरंद गुन अहा सेत अभिराम ।
बिरह अगिन जरि कै तहा(ख) भौंर भयो तन स्याम ॥ ७१ ॥

कुँअरहिं सुनत तरकि जिय लागी औ सुनि सभा सकल अनुरागी ।
कहिसि कि धनि सरवर धनि हंसा धनि गुरु धनि कुल धनि जहि बसा ॥
जहि अस बुद्धि होइ हिय माँहीं कस न पुहुमिपति लाल कराहीं[१] ।
बुद्धि दीप जाके हिय बरई पुहुमी सरग उजग करई ॥
तेहि अँजोर जो करै पयाना हरि लेइ सब आइ हराना ।
एक दीप बिनु जग अँधिआरा बादि[२] सूर ससि कर उजिआरा ॥
निअरहि रतन न चीन्हे नेना धाव दूर दूग सुलि नेना ।

(क) सर बिरह जब कोल्हि द॰ मधुकर निकसि निवास करइ । पाठा ।

(ख) नीरज भार अगिन जरी । पाठा ।

१—लाल करना = खुश करना । २—अकारन ।

कया भवन महँ बहइ नित पाँच भकोरा बाउ ।
एहि बिधि किरपा ओट के दीपक बुद्धि बचाउ ॥ ५७ ॥

इस बचन सुनि कुँअर सँचना[1] चढेउ आइ हिय अनुज हता ।
ततखन हिए अगिनि उदगरी मया पान परि छाती जरी ॥
मन महँ कहिसि जियाउ न साई यह मारी मैं यह कन काई ।
मोरहिं प्रेम भया मैं बधा हौं सो सूर वह मोर रधा[2] ॥
यह मो कहँ राखै चित माहीं मारे माहि की चरचा नाहीं ।
अब कै लेहुँ बाह तेहि केरी जौ हौं जीउ उठे श्रीडेरी ॥
चलौं बिदा होइ अपने देसा मकु भेटे जो जियत नरेसा ।
यह मन गुनि आयो कुँअर उठि चित्रावलि पास ।
मुख मलीन ज्यों निसि कँवल चितवति भयो उदास ॥ ५७३ ॥

चकित भइ मुख देखि चकोरी कमयक दुति लीन्ह अँजोरी ।
कै सनमुख भाषा कछु हीना जहि उदास भा मुखर मलीना ॥
मोर मँदिर पौन नहिं आव दीप जोति किमि छान देखावै ।
को होइ दूत नगर महँ आवा, साति कर जिन बिरह सुनावा ॥
नाहिं तो जहाँ समीर न चाला बिनु मधुकर पंकज नहिं हाला ।
पूछाँ रसहिं पैठि हिय माहीं बिनु कारन यह कारन[3] नाहीं ॥
कहिसि कि पे साईं सुखदाई कारन कान बदन मलिनाई ।
तेँ दिन मन सोइ जगत महँ अहि अँजोर संसार ।
काह बदन मलीन के करसि जगत अँधिआर ॥ ५७४ ॥

कुँअर कहा सुनु प्रानपियारी हम चित आनि चलेउ दुख भारा ।
मैं अपने कुल सरवन अहउँ अजौं अधा काँवरि बहऊँ ।
तोरं पेम पिआस सँताया बाट छाडि एहि सरवर आवा ॥
जस दसरथ आहे सर साँना, मकु चालत मारे बिख बाना ।

१—स्मरण किया अथवा बुद्धिमान् । २—रथ = समीप । ३—उद्गार । ४—क्रिया वचन ।

इहवाँ लागि जाइ अस बाना अधा अगी नजहिं पराना ॥
उन कहँ अकल कौन दुहला अब न कुम्भिआ महीं अकेला ।
जो एहि भेस जाइ सुधि लेहूँ मुए जिअत दुनहुँ गति देहूँ ॥

जब ते यह चिंता भई भाउ न एका काज ।
अब गौनब निज देस कहँ साजहु गौन क साज ॥ ५७५ ॥

चित्रावलि सुनि चिंता गही सीस नाइ मौन होइ रही ।
दोउ दुभर मिलि दुख उपराजा इत प्रीतम उत कुटुम कि लाजा ।
काहु जाइ मदिल महँ कहा आनु सुजान कहत अस अहा ॥
हीरा बदन सुनि सुनि गयऊ बरषा मेघ हिये महँ भयेऊ ।
सुनि कै गइ जहाँ हुत राजा कहिसि कि परी अचक सिर गाजा ॥
अब सुजान निज देस सँभारा, करत आह घर गौन बिचारा ।
राजा हियें अग्नि पुनि बरा तरहुँड माथ रहउ एक घरी ॥

नैन नीर भरि कहिसि नृप कछु न हमार बसाइ[1] ।
का जग ताकर कर गहै, जो आपन ले जाइ ॥ ५७६ ॥

हम जबहिं ताकहँ जिउ दीन्हा आपन सुख न्याँअधरि कीन्हा ।
अब जामह सुख पावै राऊ करहु सोइ नहि आन उपाऊ ॥
ओकहँ आन कहहिं हम आना जनम हेतु कर होइ निदाना ।
जो यह करै होइ सब सोई कीन्ह हमार अमिरथा होई ॥
कस न कर सब ताकर कहा, जाकर कहा होत सब अहा ।
औ जो रहुँ त्रिय गौन न होई लोग कुटुँब भल कहे न कोई ॥
औ रहुँ थिय ससुरें नहिं जाई, ना रहुँ नहिं छूट लरिकाई ।

नैहर महँ सब कालि सुख निमिख न आगें सूझ ।
परै जाइ ससुरारि महँ पर आपन सब बूझ ॥ ५७७ ॥

१—अवसव ।

रानी राउ बचन जब सुनी भा चिन्ता चितहीं मह गुनी (क) ।
कहिसि कि भला कहै नर सोई नेहरन्हि जगत नेक[1] बुधि होई ॥
दुहिता मान अगिनि ससुरारा सासु सँडासी कत मोनारा ।
दै सोहाग सब निसि दिन केली घोटे सदन घरी[2] महँ मेली ॥
ननँद नाल फूँकत दिन रहई सुलगि हिय काइला जिमि दहई ।
घाउ बोल घन[3] छिन छिन खाई ठाँ न छाड आनि निहाई ॥
तब तिरिया कुन्दन की नाई, मउ अक मँ भरि नग साइँ ।

नैहर आनि न आइ कछु गुन आगुन एक मान ।
साईं सारंगिनि भामिनी जाकर ससुर मान ॥ ७७८ ॥

पुनि राजैं सुजान हँकरावा बदन हरि हिय गहबरि आवा ।
अति बिहबल मधु बचन उभाना कहिसि कहा चित कीन्ह उदास ॥
आइउ सूर निअर भा भोरा पइ सब राज पाट भल तोरा ।
का बिचारि छाडहु यह राजू बिलसहु बैठि इन्द्र कर साजू ॥
कहा सुजान पुहुमि धै माथा दीन्ह न जाइ निमिषि तुम साथा ।
हौं निरिधिनि भिखारि हुत आवा तुम राजा मोहिं राज करावा ॥
हाँ परदेसी अहा अनाथा तुम किरपा करि कीन्ह सनाथ ।

मैं तुमर परसाद सब सुख अनेक अग काय ।
पिता राज अब चित चढ़े धसकि उठै मम हीय ॥ ७७९ ॥

पिता राज यहि जग महँ मूला मूल छाडि पछी का भूला ।
जो अपने देसहिं लहु आना कस न अबहिं फिरि करौं पयाना ॥
पलटी दिष्टि फिर नहिं फेरें मन पुनि परा दिष्ट क घेरें ।
जहि जेहि पथ चला हौं आवा, लोयन माह अहे सब छावा ॥
अज्ञा देहु तौ साजौं साजू इहवाँ नहिं हमार अब काजू ।

(क) भा चित चेत हिय महँ गुनी । पाठा । १—तनिक = थोरि । २—घरिया। जिसमें सोना आदि धातु गलाते है । ३—हथौड़े की चोट ।

सुनि के उतर राउ गहबरा[1] उमडी नैन दुहूँ जल धरा ॥
कहिसि रि जो तुम जिय असभावा करहु सोइ जो जिय महँ आवा ।

जाकर चित अलंद बसा कर न रास ढील ।
कहा जो राखे दिवस दस अंत चलै तजि साल ॥ १८० ॥

रानी सुनि थित गौन बिचारा बिसुधि गिरी भुइ ग्वाइ पछारा ।
चूल[2] तारि माती छितराइ लायन माती माल पुराइ ॥
जन परिजन सब भा बिकरारा ज्यों तन बिछुर प्रानपिआरा ।
सुनि चित्रावलि गौन कु नाऊँ उर धर बिसमादा[3] सब गाऊ ॥
राज मदिल जो रार बनावा राजनीत मत्रा चलि आवा ।
देखेसि आइ बूढ़ भा बारा आपु आपु कहँ सब बिकरारा ॥
कहिसि कि जो काइ आपन थाती लेइ तो कहा बिदारिय[4] छाती ।

करहु चेत चित रार तजि साजहु गौन क चार ।
दूनहुँ जग महँ होइ जहि तुम्हरा मुह उजियार ॥ १८१ ॥

महत बचन सुनि चेतो राजा साज लाग गौन कर साजा ।
चन्दन चीर कीन्ह चडोला चहुँ दिसि लाग रतन अमोला ॥
अपुरब एक ओहार सुहावा बिबिधि भाँति क आनि ओढ़ावा ।
झूलहिं चहुँ दिसि झालरि माती छिटकि रही जग जगमग जाती ॥
कुसुम गूँथि बहु हार बनाये ठाँव ठाँव पुनि आन लगाये ।
अगर मद मलयज घनसारा बास सुगंध कीन्ह महँकारा ॥
आँगन क राखेउ चडोला दाएज कर भंडार पुनि खोला ॥

सोन रूप मनि मोति नग हाथि घोर बहुताइ ।
पाटम्बर जरि पाँवरीं दीन्ह अनेक लदाइ ॥ ८२ ॥

१—विकल हुआ घबराया । [illegible] ।
३—दुखी हुआ । ४—शोर । ५—सम्पद । [illegible] ।

छोह भरी रानी पुनि आई, चित्रावलि लै अंक में लाई।
कहिसि दोऊ लोचन भरि नीरा, मुख छबि पर बलिहारी हीरा॥
अब तुम्ह करब तहाँ कर गौना जहँक सदेस न पावहिं सैना।
पिउ बरिआर[1] बिबस लै जाई हम देखहिं पै कछु न बसाई॥
सकल जनम नैहर सुख सारा अब तुम चलहु जहाँ ससुरारा।
कठिन आहि ससुरारि कि रीती सोई जान जाहि सिर बीती॥
नैहर महँ जिन गुन आराधा[2] ससुर जाइ सोइ सुख पावा।
अब आ घरि दुइ माँह पिउ लै गौनहिं गहि बाँहि।
बचन देउ एक उपदेस हित कहाँ धरब हिय माँहि॥ ७८५॥

सजग रहब गवने ससुरारा अहित अलेखिन हित दुइ चारा।
घर आपन जौ लहु न चिन्हाई सब सो राखब बदन छिपाई॥
भावरी[3] माँह रहब निन गोइ आगन हाब रान जब होई।
बेसब सदा आर कै पीठी परै न सौंह आन की डीठी॥
सतति रहहि मुकुर कर माहीं चीन्हब पर आपन परछाहीं।
पुनि डर मानब गुरुजन केरी सनमुख काहु न देखब हेरी॥
उतर न देब कहै जौ काई लाजन रहब चरन तर जाई।
ननदी आगर जा कह रिसि राखब जिय मारि।
परिछि सीस पर लेब नित सामिनि देइ जा गारि[4]॥ ७८४॥

औ छिन लाइ करब पिउ सेवा एक पीउ दोउ जग सुख देवा।
मन अस साधब जनि कोई सेवा एक पीउ बस होई॥
जो बस होइ तो गरब न करिये आपु अधीन होइ मन हरिये।
औ काहू सों भेद न कहिय धन ज्यों करें छपाए रहिय॥
लोगन आगे रहब लजाइ, चोरीं चढब सेज पिय जाई।

१—बरियार = बलवान्। २—(सं० उपाकरण) संग्रह किया, सीखा।
३—कोठरी, घर। ४—गारि = कटुवचन।

जिउ दुख दै सेवब सुख त्यागी सगरी ति गँवाउब जागी॥
सौतिन्ह कर इरखा नहिं करना साई सग मदा जिय डरना।

अलप मान सेवा अधिक रिसि राखब जिउ मारि।
जहि धन महँ ए तीन गुन सोई सोहागिनि नारि॥ ५८५॥

सुनि उपदेस नारि गहबरी रोइ जननि क पायन परी।
रानि पुनि ल अक मँ लाई तजि न जाइ अति हिय छाहाई॥
उन्ह दुनहुँ के मया निहारा हाइगा सगर नगर अँदेरा।
जहँ लहु सखी सहेली चेरी रावहिं चित्रावलि मुख हेरी॥
राजा सुनि अँदार पुनि आवा देखि अवस्था दुख जनावा।
चित्रावलि तजि जननि कि छाती पिता के पाउँ परी बिलखाती॥
राजै पुनि उठाइ गिँव लाई नैन नीर पुत्री अन्हवाई।

पिता कठ धिय गहि रही छाहन छाडि न आइ।
ज्यों ज्यों जननि छुडावइ त्यों त्या गहि लपटाइ॥५८६॥

रानी धर कै धिय बिलगाई गर्जे बहुत प्रगाय बुझाई।
जनि जानसि हो दूरि अडारी आत रहहिं तैं काभन बारी॥
समाचार हत्यों कर मारा कहि सँदस ल आइहहि तोरा।
औ पुनि कटक मार सँग आइहि नाव चलाइ बिदा होइ आइहि॥
कै परनाध नरस बिनाली समदि कन्या धिय चखु भरि पानी।
चित्रावलि कहँ होइ बिकरारा कठ लाए समदै परिवारा॥
समदै सखिआ ले ल फेरी पायन परि परि समदहिं चेरी।

कोई रात्र कठ गहि कोई पायन्हि लाग।
सँवरि सँवरि सब सग सुख उठ करेजें आगि॥ ५८७॥

एहि महँ आवा कत बुलावा, चित्रिन कुछ नहि समदे पावा॥
जहाँ तहाँ सब देखहिं नारी चढी जाय खडोल सवारी।

१—र्या। २—मिलकर।

छाडेउ सकल फूल फुलवारी छाडेउ सुख सरवर चितसारी ॥
छाडेउ अगर चँदन सुखदाई छाडेउ पालक¹ सेज सुहाई ।
छाडेउ पिता राज नवरगा² छाडेउ बाल सँघाती सगा ॥
छाडेउ हीरा अरथ भँडारा छाडेउ पाट नैन भिनु सारा ।
ठाढी देखहिँ सखी सहेली अन्त छाडि सब चली अकेली ॥

हसन खेल ओ कूद सुख बालापन के रग ।
चली सोहागिन छाडि सब गुन औगुन ल सग ॥५८८॥

चढि चडोल चली वर नारी सग साथ घर बार बिसारी ॥
चारि कँहार बाँस धरि काँधा ऊपर डारि आयँ भारोंधा ।
आवहि ऊभ साँस उर लेई फिरि के काहु न नीरज देई ॥
सगर नगर पुनि देखी धावा मलि मलि हाथ करे पछतावा ।
दायज पुनि सब लादि चलावा कुँअर सुजान बिदा कहँ आवा ॥
बिनती करैँ राउ औ रानी बरसहिँ नैन सेवाती पानी ।
चिआवलि अब अगसर जाई तुम आनदु औ कुल कि बडाई ॥

ज्ञान अहौ तुम्ह सग है हम दुहुँ घट कर प्रान ।
आपु बडाई हरि के राखब एहि करिमान ॥ ५८९ ॥

चढि औ तुरग सुजान पयाना, सहस पखरिआ सग पलाना ॥
लाख सहस दासी औ दीन्हे बिबि दस दुरद छोरि सँग कीन्हे(क)
साजि कटक लै चल्यो सुजाना बिबिधि भाँति नहि आई बखाना ।
हस मिसिर की हेउँ अगुआई पाछेँ लागि कटक सब आई ॥
सूध पथ सागर गढ ताका पौन डोर कहँ मन रथ हाँका ।
जाइ तुलाने सागर गाऊँ, कुँअर देखि चीन्हा अँवराऊँ ॥
कहिसि हस हम अनतहिँ आहीँ, इहाँ हमार परोजन नाहीँ ।

१—स एकलक = पलग । २—(फा نورنگ ।) औरग = राजसि हासन ।

(क) अ दल साथ सहस दस कीन्हे, तब सब लोग बडाई कीन्हेँ । पाठा ।

आजु लेब हम कटक सँग एहि अँबराउ सुबास
हाइहै काऊ हमार जौ सुनि आइहि हम पास ॥ ९० ॥

(४२) कौलॉवती गवन खड ।

देखि कटक जिमि बादल छाहा परी हूल सागर गन माहाँ ॥
यह अब को अस सोहिल राऊ कटक साजि भुइँ चापे आऊ ॥
वह हुत कौलावति अनुरागी पह अब दईं आइ कहि लागी ।
धौ कहँ हुत सुजान सधारा अब कहँ पाउब तस बरिआरा ॥
सागर मन पुनि चिता भई साहस बाँधि मीचु पुनि भई ।
जहँ तहँ सजग बीर हित बासे सूर बदन जनु कोल बिगासे ॥
एहि महँ हस पहुँचा आई कहिसि करहु अब अनँद बधाई ।

जो जोगी सोहिल हना औ राखा तुम प्रान ।
आयो बहुरि नरेस होइ, चलहु करहु सनमान ॥ ५९१ ॥

हस बचन जब सागर सुना, भा खिप्र सोच हिया महँ गुना ।
अब लहु कौल आस जल अहा, अब आ राखिय कारन कहा ॥
लोग कुटुम मिलि कै मत ठाना कौल न काज आउ बिनु भाना ।
जस बर कै मोहि दीन्ह बिआही, अब बर के पुनि सौंपहु ताही ॥
दुहिता केर कठिन है भारा तबहीं पति[1] आ आइ ससुरारा ।
जनम पिता माता घर लेई दुख सुख माथे बिधि लिखि देई ॥
यह बिचारि कै डाँड़ी फाँदी, गौन जान कौलावति साँदी[2] ।

समदी गगा गोद गहि औ कुमुदिनि कँठ लाइ ।
पुनि समदेउ परिवार सब, लोगन आँगन आइ ॥ ५९२ ॥

कौलावति चढि चली बिमाना, जहि अँबराउ सुरेस सुजाना ।
सागर साजि कटक पुनि चला, कौल गौन दुख जग कलमला ॥

१—मर्य्यादा । २—समदी = मिला । काँदी, पाठा ।

औ जहँ लहु हुत दायज दीन्हा, सो सब लाइ पुरोहित लीन्हा।
सागर आइ सुजानहिँ भेँटा, मुख देखत सब दुख गा मेँटा॥
कंठ लाय हिय सीतल कीन्हाँ भुजा जोरि अँकवारी दीन्हाँ।
औ जहँ लहु पर आपन अहे छुइ छुइ पाँउ दूरि तकि रहे॥
सागर तब बिनती ओआरी[1] कस घर तजि के उनरेउ बारी।

जो राखहु नीरज चरन सोभ पाउ हम माथ।
चलउ आप घर जानि कै कीजै हमहिँ सनाथ॥ ५९३॥

तब सुजान बोला सुनु राऊ एहि मारग हम लोग बटाऊ।
पथिक पथ जौ छाडै कोइ भूलै मत महा दुख होई॥
सूध पथ तजि उत्तर केरा कौल[2] बचा आएउँ एहि फेरा।
कौलावति कर बिदा करीजै, अगुआ एक संग पुनि दीजै॥
तुम परसाद जाउँ अब देसा, मकु भेटउँ कै जियत नरेसा।
राय कहा कछु आहि न खाँगा[3] का राखै जो आपन माँगा॥
सूख पथ बहु दुख अगजाना पानी पानी बहुत सिलाना।

अज्ञा देहु तो जाइ घर साजौं बाहित साज।
लीजै सभै लदाय जो आउ तुम्हारे काज(क)॥ ५९४॥

कुअँर गहे सागर के चरना, कहिसि बेगि कीजै जो करना।
सागर राउ पलटि घर आवा चित्रावलि पहँ कुअँर सिधावा॥
कहिसि कि सुन्दरि प्रान पियारी तोहि बिनु प्रान हाइ घट भारी।
एही नगर जहवाँ हौं कहा, पाँच मास पग साकर रहा॥
एही नगर हम कहँ दुख बीता इहाँ हाकि सोहिल रन जीता।
एही गाँव सागर गढ आही कौलावति जहाँ नीन्ह याही॥
मो कहँ तुम्ह बिनु आन न भावा, वै मोहिँ बिरह बहुत दुख पावा।

१—कया। २—(अ قول) वादा। ३—स पग = हकारस। अड़चन।
(क) दान सब नगाद ना आउ न तुम्हरे काज। पाठा।

मोहि क दूसर आन नहिं मोहिं बिनु एहि संसार ।
तजि आपन घर बार सब आई के अभिसार ॥ ९५ ॥

अब लहुँ रही इहाँ औ गेरी गाढ़ु अवधि पूजी आहि लगी ।
जा एहि कारन तन मन जरई, सा पुनि नाकर चिंता करई ॥
जाति जानि जानं गाढ़ु दुखारी, यह तुम्हारि जस आज्ञाकारी ।
सुनि चित्रावलि हिए सँनाई नैन दुराइ कहिसि बिलखाई ॥
तुम साईं अपने सुख राजा तिरियहि नाउँ साति सिर गाजा ।
जा बिधि सम्मा करावत[१] दई(क), सहे न ता अब काह करेइ ॥
निसि आया तह कुँअर सुजाना कौंला जहाँ कीन्ह अस्थना ।

कत बचा परतीति पर सोरह साजि सिँगार ।
बासक सेजा[२] होइ रहा लाइ नन दुइ बार ॥ ९६ ॥

पदुम कास अलि लीन्ह बसेरा हिए सोच भइ मालति केरा ।
नीरज लोयन रूप अतिसाए दिन कर देखि नीर भरि आए ॥
बिहँसि कन्त कामिनि कँठ लाई बिरह दगधि उर लाइ बुझाइ ।
मनमथ दाब जाव पुनि काँपी रावन बार लंक गहि चाँपी ॥
दीन्हीं चार नखच्छत छाती फूट सिँधार[४] सेज भइ राती ।
हाइगा अंग भंग नव साता अति परसेद[५] सिँ धरि भइ गाता ॥
भया प्रभात गयो उठि साइँ, कौंल पास कुईं[६] चलि आईं ।

हँसि हँसि पूछहिं रैनि सुख रहसि करहिं परिहास ।
लाजन गोव कौंल मुख सखियन अधर बिगास ॥ ५२७ ॥

१—कलावत = कला कला अपना बदना ।

(क) जो करता लिर गिरिवर रह । पाठा ।

२—वासकसज्जा । ३—नारि कल अथवा वार = द्वार ४—सिँधेरा = सिँदूर रखने का डबिया । ५—प्रस्वेद = पसीना । ६—कुमुदना ।

चित्रावलि कहँ बिनु ससि साईं गई रैनि नव गनत तराईं।
सौति संग साले जनु काँटा अंग अंग लागे जनु चाटा॥
सुलगी उरध आगि सन सेजा आगि होइ जल रकत करेजा।
करम करम कै सो निसि गई, पिय देखत तिय खंडित भई॥
रही सोइ मिसि बदन छिपाई नायक सकुचत आलि जगाई।
परी चौंकि लागै कर सीरा दच्छिन नाहिं नायका नीरा॥
काहिन्हि अहिउँ सुख सपने माहीं कहा जगाइ लीन्ह गहि बाहीं (क)।

अहिउँ कहा सुख सपन महँ तुम कर लागे अंग।
गए नैन पट उघरि कै भया सकल सुख भंग॥ ५९८॥

जानहुँ तुम एक सुन्दरि संगा मानत अह केलि रति रंगा।
मोहि देखि ना सात बनाए तजि मो नारि आलि कँठ लाए॥
हिये लागि हिय मोर सिराना पाएउँ अधर अमिय कै पाना।
और सकल सुख कहे न जाहीं उठे आगि सँवरत मन माहीं॥
भई दोहागिन[१] बिकल सरीरा जनु गिरि गयो हाथ त हीरा।
बह रोब परि सेज अकली हाँ हँसि हँसि मानौं रस केली॥
मोर छग कुसुम जनु गाथा वह लगि रहे हाथ सौं माथा।

सेज अकली रैनि सब, सहउ सकल उतपात।
चतुर नारि चित्रावली रस काढ़ै रस बात॥ ५९९॥

---

(४३) बोहित खंड।

उहवाँ सागर बोहित साजा इहवाँ दुद गौन कर बाजा।
पखर घार पलाने हाथी, सँभरि चले पुनि अत के साथी॥

(क) सपना दृष्टि अन्तर्हित जाहीं। सौति क डाह हिए दुख नाहीं। अधिक पाठ।

१—न्सरी ख। = सगात।

चली दोऊ धनि करत कलोला अपन अपन चाल चडोला।
एक बाएँ एक दहिने जाई एकहि एक न पास सुहाई॥
कुँअर साजि पुनि कटक सुहावा रहसत साज समुद कहुँ आवा।
वाहित साज देखि मन भावा चित्रिनि कर चडाल नगारा॥
पुनि कौलावति समदि भुआरा चला आइ तजि सब परिवारा।

अगिनित दायज दरब जाहि देखि हिया हरषत।
एक एक सबे धनाइ कै कुँअर चला पुनि मत॥ ९००।

बोहित चलउ कुँअर लै भारा समदि चल पहुँचावनहारा।
समदे लोग कुटुँब हय हाथी सोइ साथ चल जो साथी॥
लोकाचार तीर लहुँ आए नाव चले सब भए पराए।
पीठ दत ही मित बिसारा सब काहू घर बार सँभारा॥
कुँअर पेलि बोहित लै चला भार देखि कयट कलमला[1]।
कहिसि कीन्ह तुम दूर पयाना बोहित नाहिं भार अनुमाना॥
बोहित चढे बहुत उनपाथा[2] ऊँचे भौंर ऊठहि पुनि साथा।

भौंर फेर जलजतु डर तेहि पर आँधी आउ (क)।
जिउ आव तब पट महँ तीर लाग अब नाउ॥ ९०१॥

सोन रूप तुम कहा बटोरा भार बहुत देखत पुल थारा।
गाढ परे पुनि होइहि भारी अबही कस नहिं देहु अडारी[3]॥
कुँअर कहा सुनु बोहित पती दरब न डारि जाय एक रती।
बोहित साजा दरब हि लागी का लै आब सग यहि त्यागा॥
जो मानै जिय अस डर भारी चढ न काऊ नाव नवारी[4]।
तुम खेवहु जनि मानहु सका, भेटि न जाइ सीस कर भका॥
हँसि के बोहित केवट पेला, चला जाइ जल माहँ अकेला।

१—विकल हुआ। २—उत्पात। (क) मिलाइए अरा ना।
३—फेंकना। ४—नाव पर चलने वाला।

देखत बारिधि अगम जल, प्रान न धीर धराइ।
सोई चलै निचित होइ जो कोउ आवै जाइ ॥ ६०२ ॥

रैनि एक बादर जुरि आए दुहुँ दिसि होइ रिखि सात[1] छपाए।
मारग भूला कवट डरा, बोहित जाइ भौंर बिच परा ॥
भँवै लाग तहँ बोहित भारी कुँअर कहा कछु बेहु अडारी।
जाके अहा संग कछु भारा पहिलहिँ तँ सब रूप अडारा ॥
हरुआ होइ बोहित अनुसरा दूजे भौंर जाइ कै परा।
जहँ लहु अहा सोन कर नाऊँ सो सब डारि दीन्ह तेहि ठाऊँ ॥
तीज भौंर जहाँ नग हीरा चौथे अन जाकर नर कीरा ॥

पँचयेँ भौंर भयो सेस नर अत जानि पुनि मीच।
कुँअर जिअन जिय सौंरि कै, परे कूदि जल बीच ॥ ६०३ ॥

छठएँ भौंर मरन निज हेरी साहस बाँधि गिरीँ सब चेरी।
सतएँ भौंर ओ आइ तुलाना कौलावति कर जिउ अकुलाना ॥
कहिसि कि हौं बलि देउँ सरीरा, मकु ये दोउ लगि लगैँ तीरा।
पुनि मन कहिसी रहा पछितावा चित्रिनि रूप न देखै पावा ॥
मरन बेरि मुख देखौं जाई मकु अजहूँ तजि कोह छोहाई।
चित्रिनि पहँ आई गुन भरी बदन बिलोकि पाउँ लै परी ॥
कहिसि कि हौं अपराधिनि तोरी, करहु छोह सुनि बिनती मोरी।

रहै सदा तुअ सीस पर सेँदुर भाग सोहाग।
हौं समदति हौं चरन गहि इहै मोर अनुराग ॥ ६०४ ॥

चित्रावलि सुनि हिए छोहाई, कौंलावति कह कंठ लगाई।
कहिसि कि तजहु सौति कर नाता, मोरि तोरि एकै जनु माता ॥
हौं जिउ देउँ रहउ तुम्ह दोऊ मोरे मुए होउ सो होऊ।
मरन लागि दुहुँ बाद पसारा सुनि सुजान धायो बिकरारा ॥

१—अ रकसात (قصاص) आसमान अथवा ऋषि सात = सप्तर्षि मंडल।

कहिसि कि महरिन्ह बुद्धि न रती हौं अब मरौं होहु तुम्ह सती ।
तीनिहुँ गही मरन की टेका मरन न पाउ एक तें एका ॥
देवता सरग जो देखत अहै इन्ह कर प्रेम देखि थकि रहै ।
ससि सूरज कुज दोउ गुरु राहु बुद्ध सनि केतु ।
कहहिं कि अब लहुँ भूमि महँ अस न कीन्ह कोउ हेत ॥८०७॥

---

(४४) जगन्नाथ खंड ।

तब अगस्त सों कहिन हँकारी मरु न पावहिं लेहु उबारी ॥(क)
कोपि अगस्त भुजा देखराई समुँद लहरि तब गयउ तुराई (ख) ॥
तमकि अगस्त दिष्टि किय तेजा थर थर काँपेउ समुद करेजा ।
एकहि लहरि सोइ अस जागा बाहत निकसि तीर गे लागा ।
कुसल देखि सब कीन्ह अनन्दा आपु आपु कहँ बिछिना बन्दा ॥
ऐ दयाल सुख दुख क दाता तोहिं बिनु दूसर नाहिं बिधाता ।
सकट देसि ता कोन छुड़ावै मुकुति देसि ता कोन फँदावै ॥
देसि भिखारी राज जो लिये न काहू साथ ।
राजहिं करसि भिखारि ता कोन गहे तुअ हाथ ॥८०८॥

आदित उगवत बाल्त कागा बाहित आइ तीर पहँ लागा ।
बाभन एक करत अस्नाना, देखि कुँअर चिन रहस[१] समाना ॥
पुनि पुकारि कै पूँछिसि राई बालहु कोन नगर यह भाई ।
कहिसि कि कस आखिन अँधियारा जगन्नाथ अहिं जग उजियारा ॥
पुहुमि सकल जेहि सेवा करई पग परसत दुख पातक हरई ।
कुँअर कहा तुम दोऊ पियारी एहि झलफलें गनि अँधियारा ॥
जौ लहुँ कोऊ मिलै न दूजा, तौ लहुँ जाइ लेहु कै पूजा ।

(क) भारी पाठा । (ख) सुराग पाठा १—बुताना नितुन झाना ।
२—हृप आनंद । ३—उषाकाल ।

कहा राज सुख साज सब कहँ वह सरग बिवान ।
जिमि जिमि पुहुमी पग धरै झखै[1] कुँअर सुजान ॥६०७॥

आयो जगन्नाथ दरबारा, ससिहर लिये संग दुइ नारा ।
दोऊ नारि दोऊ दिसि लसी, इन्द्र साथ रंभा उरबसी ॥
परसि देव पुनि बिनती कीन्ही सपति हम बारिधि कहँ दीन्ही ।
अब निरधन परदेसी जानो मानि लेहु यह पाती पानो ॥
कै अस्नान बिप्र पुनि धाया पुजा दरब समेटै आवा ।
अबहीं दिष्टि कुँअर पर परा दोउ नैनन आए जल भरी ॥
कुँअर कहा तुम देव हमारे, कहा जानि चखु आँसु ढारे ।

कहिसि हमार नरेस सो यही रूप अनुहारि ।
निकसि गयो एक जोगि सँग, बसत बसत उजारि ॥ ६०८ ॥

तेहि दिन तें पुनि खोज न पावा सपनेहुँ कोउ न सँदेस सुनावा ।
पिता नाउ धरनीधर राजा बैठेउ छाडि राज कर काजा ।
माता रोइ आँधि पुनि भइ देखहिं आन समय होइ गई ॥
हौं बाभन जा परोहित अहा देखि न सकेउँ देस दुख लहा ।
सेयों आइ देव जग नाथा, हिँछा कै मकु मिलै सो नाथा ॥
तुअ मुख देखेउँ ओहि अनुहारा, गहबर आयो हिया दुखारा ।
अगुआ पुनि बाउर होइ गए, परजा छाडि देस सब गए ।

कुँअर हिया पुनि गहबरा[2] लोचन नीर भराय ।
चीन्हि परोहित आपना परा पाउँ पर आइ ॥ ६०९ ॥

कहिसि कि तुम हौ पांडि केसी, हौं सुजान सोई परदेसी ।
जोगी होइ गएउँ तेहि देसा जहँ न आइ कोइ कहै सँदेसा ॥
जेहि लगि सहा जनम दुख भारी सोइ यह चित्रावली पियारी ।
तब पुनि जहँ लगि दुख सुख अहा बैसि कुँअर एक एक सब कहा ॥

१—रोए पछुताय । २—भरि आया ।

पडिन रहसि आसिषा[1] दीन्हा मनहिं माहँ बडाई कीन्हा।
कहिसि कि जिअ जनि चिता करहू अब सुख सकल हिए दुख हरहू।
बरष दिवस भा सवत देवा दारिद गयो समुँद की सेवा॥

समुँद आउ एक दिन चलो, जगरनाथ कहँ सेइ।
मोहिं भिखारा जानि के, गयो पाँच नग देइ॥ ६१० ॥

काहुहिं मोहिं देखाइ न जाई छेरा मुँह कोहँडा न समाइ।
अब जो तुमरे आवहिं काजा, लेउ करहु सब आपन साजा॥
बाभन आनि पाँच नग दीन्हा पारखि नग अमाल तब चीन्हा।
पूछेसि इहाँ साहु कोउ अहई धन पातर[2] जा कहँ जग कहई॥
कहिसि कि लच्छन साहु सयाना महाधनी पुहुमीपति जाना।
कुँअर बोलि कै नग कर दीन्हा लच्छन रतन अमोलि क चीन्हा॥
औ पुनि धरनीधर सुत जानी आदर कीन्हेसि सेव बखानी।

कुँअर कहा हम पथ स्र, बिलँब एक दिन नाहिं।
करहु साज अब सोइय जहि अपने घर जाहिं॥ ६११ ॥

लच्छन कहा दरब बहु आही जो चाहिय सो लेहु बेसाही।
देस तुहार मोर हे देखा उहइँ आइ मँ पारब लेखा॥
सोन रूप पाटम्बर आना साज महरिन्ह लागि बिवाना।
अभरन सभै जराऊ साजे मुकतमाल उर माहँ बिराज॥
हाथि घार पुनि जाए बेसाहे सहस एक राखे खँडवाहे[3]।
कटक साजि क कुँअर पयाना बाजा पुनि गहगहा निसाना॥
समकत चले बिवान सोहाए, जानहुँ अमरपुरी ते आए।

राति दिवस जावैं चले, आन न कछू सुहाय (क)।
रहसहिं अपने देस को पुहुमि न लावहिं पाय॥ ६१२ ॥

१—आशिष = आशीर्वाद। २—धनपात्र = धनी।
३—खाँडावाले योद्धा। ४—चला। (क) रात दिवस चलि जाहिं पुनि बिलम न कहूँ सुहाय।

(४५) अभिषेक खड ।

चलनहिँ चलत देस नियरावा, बन बीहर सब लाग सुहावा ।
केसी पाँडे कहिसि बुलाई, आगे राय जनावहु जाई ।
अज्ञा पाइ उठाइसि पाऊ, आयो जहँ धरनीधर राऊ ॥
कहिसि राउ अब करहु बधावा, कुँअर सुजान कुसल सोँ आवा ।
सुनतहि नाउँ राउ रहसाना जनहुँ मृतक तन प्रान समाना ॥
राती नैन जोति सुनि पाई, घर घर बाजै लागु बधाई ।
फिरि फिरि पूछै कुसल सुजाना केसी कहा जहाँ लहु जाना ॥

राजा सँग आगे चले राउत राना भारि ।
उठे धाइ सब नाउँ सुनि, बाभन बनियाँ बारि ॥ ६१३ ॥

देखि सुजान पिता असवारा उतरि पियादे होइ पगु धारा ।
धरनीधर पुनि उतरि के भेँटा, बिछुरन दुख सबै धरि मेँटा ॥
सुत कर बदन हेरि भा छोहा घरी घरी हिय उठै मरोहा[1] ।
हिय गहबरि मुख बात न आऊ फिरि फिरि गहै पिता कर पाऊ ॥
फिरि फिरि राउ गहै अँकवारी लोग कुटुँब नेउछावरि सारी ।
पुनि दोउ जना भये असवारा, पूँछत चले कुसल बेवहारा ॥
जैा लहुँ कुँअर मँदिल नहिँ आवा, हाथ हाथ सोँ छूट न पावा ।

कुँअर परे लइ मातु पगु भरि लोचन दोउ नीर ।
मातु मया बराँइ पुनि, उतरा अस्तन छीर ॥ ६१४ ॥

माता लै सुत कठ लगावा चूमि बदन कर आँखिन लावा ।
कहिसि कि धनि दिन धनि यह घरी, पूनहिँ भेटिउँ अक मेँ भरी ॥
मानिक मोती भरि भरि थारा, नेवँछावरि साजैँ परिवारा ।
चित्रावलि ले मँदिल उतारी, औ पुनि सँग कौँलावति बारी ॥
सासु चरन लागीँ दोउ आई रानी गहि दुहुँ अक मेँ लाई ।

1 ––ग्गार ।

फिरि फिरि आचर हार रानी चन्द सूर अपने घर जाती ॥
लोग कुटुँब परिवार सबाई लै ले आए राज कराइ ।
राजै छत्र उतारि क धरा कुँअर के सास ।
टीका काढ्उ राज कर औ पुनि दीन्ह असीस ॥ ६८ ॥

कुँअरहि राजपाट बसाई, वे नृप विधना ला लाइ ॥
राउत राना आइ जोहारे दे पहिरावनि सब प्रतिपारे[1] ।
मन्दिर मन्दिर बजउ बधावा घर आँगन सब भयउ सुहावा ॥
चित्रावलि कौंलावति नारी विलसहिँ आपनि आपनि पारी ।
निसि बासर आनँद सुख होई, दुख की चरचा करै न कोई ॥
देख तिया सब अचक रहाई, जनहुँ दुधा एक जननि की जाई ।
धन माता धन पिता सबाई जा सुख कोटि अपछरा आई ॥
पान फूल सुख भोग ल व दिन बास बसाहिँ ।
सुख सर कुरलहि हस ज्यो निसि दिन कलि कराहि ॥८१६॥

कथा मान कबि गायेउ नई गुरु परसाद समापत भई ।
ज रे सुना त हिरदै राखी औ अति चाउ आन सो भाखी ॥
जो जेहि पथ दुख जिअ सहई सो पुनि अन्त सुक्ख निधि रहई ।
मनहिँ कहउ ते अति दुख देखा अब जिउ मानहि सुख कर लेखा ।
कबिनन्ह मरन कथा कै गाई माहिँ मरत हिय रागु उठाई ।
जो ज प्रेम अमी रस पीया मरै न मार जुग जुग जीया ॥
एक जियन एक मरन सँसारा मरि मरि जियइ ताहि का मारा ।
ज्ञान ध्यान मद्धिम सब जप तप संजम नेम ।
मान सो उत्तम जगत जन, जो प्रतिपारै प्रेम ॥ ५ ॥

॥ इति ॥

१—प्रतिपाला । —संयम यम । —[illegible] । —[illegible] ।